कृष्णदास संस्कृत सीरीज २३१

(पाञ्चरात्रागमग्रन्थः)

भार्गवतन्त्रम्

हिन्दी-व्याख्यासहितम्

हिन्दीभाष्यकार
कपिलदेव नारायण

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
२३१

(पाञ्चरात्रागमग्रन्थः)

भार्गवतन्त्रम्

हिन्दी-व्याख्यासहितम्

हिन्दीभाष्यकार
कपिलदेव नारायण

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०६८, सन् २०१२

ISBN : 978-81-218-0314-4

के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : (आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice@sify.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

प्रकाशकीय

वैदिक मार्ग के ज्ञान, कर्मयज्ञ, तप के विरोध में बौद्ध धर्म और जैन धर्म का प्रचार प्रसार बढ़ गया। ब्राह्मण धर्म का बहुत ह्रास हो गया। तब सातवीं, आठवीं ईशवी शताब्दी में चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के शासनकाल में नारद, गौतम, अगस्त्य आदि मनीषियों ने भक्ति मार्ग के लिये पाँचरात्र संहिताओं का प्रतिपादन किया। मन्त्र से देवताओं का ध्यान करना जनसाधारण के लिये सुगम सरल नहीं था। इसलिये प्रतिमा निर्माण, मन्दिर निर्माण करके उनमें देव प्रतिमा के स्थापन, पूजन, अर्चन आदि से भक्ति मार्ग को सर्वसाधारण के लिये सुगम, सरल बनाने के लिये पाँचरात्र ग्रन्थों का निर्माण हुआ। इस प्रकार १०८ पाँचरात्र ग्रन्थों का निर्माण हुआ। विष्णु के अवतार भार्गव परशुराम ने भार्गव संहिता का उपदेश अगस्त्य ऋषि को दिया। संस्कृत न जानने वालों के लिये इसे सुगम बनाने के लिये विद्वान साधक से राष्ट्रभाषा में अनुवाद कराकर ग्रन्थ आपके करकमलों में समर्पित करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

प्रकाशक

सचिन कुमार गुप्त

▼

प्रस्तावना

वैदिक कर्मकाण्डों को सरल, सुगम बनाने के लिये वैष्णव, शैवशाक्तों ने संहिताओं का निर्माण किया। वैष्णव संहिता में सर्वप्रथम नारद संहिता है। उसके बार पाँचरात्र ग्रन्थों की रचनाएँ हुईं। उनमें नारद संहिता के अतिरिक्त गौतम संहिता, भार्गव संहिता, सनत्कुमार संहिता आदि हैं।

भार्गव संहिता को ही भार्गव तन्त्र कहते हैं। भार्गव नाम से लगता है कि इनकी रचना भृगु ने की है; परन्तु ऐसी बात नहीं है। जैसे पांडु से पांडव, कुरु से कौरव हुए वैसे ही भृगु के वंशज को भार्गव कहते हैं। भृगु के पुत्र च्यवन, च्यवन के ऋचिक, ऋचिक के जमदग्नि और जमदग्नि के पुत्र परशुराम हुए। परशुराम को भार्गव कहा गया है। परशुराम श्री विष्णु के चौबीस अवतारों में से एक हैं।

प्रश्न उठता है कि श्री परशुराम ने इस तन्त्र को किससे कहा? आधुनिक युग में लेखक पाठकों के लिये ग्रन्थ लिखते हैं; परन्तु वैदिक पौराणिक परम्परा में कोई प्रश्न करता है, तब कोई ईश्वरीय शक्ति या ऋषि उसका उत्तर देता है। आगम ग्रन्थों में पार्वती प्रश्न करती हैं और शिवशंकर उत्तर देते हैं। पुराणों में अधिकतर शौनक आदि प्रश्नकर्त्ता है और सूतजी वक्ता हैं। वैसे ही इस ग्रन्थ में अगस्त्य ऋषि प्रश्नकर्ता हैं और परशुराम जी वक्ता हैं।

महर्षि अगस्त्य वेदों में एक मन्त्र दृष्टा ऋषि हैं। उनकी पत्नी का नाम लोपामुद्रा है। बहुत विनती, स्तुति करने पर मित्र वरुण देवता ने अपना तेज एक घड़े में स्थापित किया। जिससे अगत्स्त्य जी की उत्पत्ति हुई। इनका नाम कुम्भज और घटोद्भव भी है। अगस्त्य अपनी पत्नी लोपामुद्रा के साथ भगवान शंकर के बड़े भक्त थे। काशी में रहकर वे सदैव प्रेम से श्री विश्वनाथ की उपासना करते थे। एक बार विन्ध्य पर्वत को ईर्ष्या हुई कि सभी देवता सूर्य, चन्द्र आदि सुमेरु गिरि की प्रदक्षिणा करते हैं। वे मेरी प्रदक्षिणा नहीं करते हैं। इसलिये उनका मार्ग अवरुद्ध कर दूँगा। ऐसा निश्चय करके विन्ध्याचल बढ़ने लगा। सूर्य, चन्द्र का मार्ग अवरुद्ध हो गया। सभी देवों के साथ सूर्य, चन्द्र ने सोचा कि यह अवरोध कैसे हटेगा और कैसे संसार में प्रकाश फैलेगा? सभी ऋषि, देवता महर्षि अगस्त्य की शरण में गये। अगस्त्य को ज्ञात था कि लोककल्याण के लिये शंकर ने क्षीरसागर के मन्थन से उत्पन्न हलाहल विष का पान कर लिया था। उन्होंने सोचा यदि मैं कल्याण के लिये भारत का उत्तरी भाग छोड़कर दक्षिण

भाग में रहूँ तो क्या हानि है? भगवान् शंकर की पूजा तो वहाँ भी हो सकती है। महर्षि अगस्त्य लोपामुद्रा के साथ विन्ध्याचल के पास गये। विन्ध्याचल शाप के डर से उनके चरणों में गिर गया और कहा कि मेरे योग्य सेवा बतलाइये। श्री अगस्त्य ने कहा कि जब तक मैं वापस न आऊँ तब तक तुम यों ही पड़े रहना। यह कहकर महर्षि उज्जैन की ओर चले गये। वहीं रहकर शंकर की आराधना करने लगे। तब से अब तक विन्ध्याचल ज्यों का त्यों पड़ा है। अगस्त्य नहीं लौटे।

महर्षि अगस्त्य ने समय-समय पर संसार के लिये बड़े-बड़े कल्याण के कार्य किए हैं। इन्द्र के द्वारा वृत्रासुर के मारे जाने पर बचे हुए दैत्य समुद्र में रहने लगे। रात में निकलकर ऋषियों को खा जाते थे। देवताओं की प्रार्थना पर अगस्त्य समुद्र जल को पी गये। देवों ने दैत्यों का विनाश कर दिया। इल्विल और वातापी नाम के दो बड़े भयंकर राक्षस थे। वे ऋषियों के पेट में घुसकर उन्हें मार डालते थे। महर्षि अगस्त्य ने उन दोनों का विनाश कर दिया।

इल्विल और वातापी को मारने के बाद उन्हें लगा कि हिंसा के कारण उनका तपोबल घट गया है। ऐसा विचार करके वे तप करने के लिये हिमालय पर गये। वहाँ घोर तप प्रारम्भ किया। आकाशवाणी हुई कि इस तप से तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं होगी। तुम दक्षिण देश में महेन्द्र पर्वत पर परशुराम से मिलो। वे ही तुम्हें उपाय बतलायेंगे। परशुराम ने अगस्त्य को जो बतलाया वही भार्गव संहिता या भार्गवतन्त्र के रूप में आपके करकमलों में विद्यमान है।

इसमें देवालय और प्रतिमा का निर्माण, नित्य नैमित्तिक पूजन और अर्चन के वर्णन हैं। मूलवैदिक संहिताओं में भी और ब्राह्मण आदि के देव प्रतिमाओं के निर्माण, चमत्कार तथा उनकी किसी प्रकार की विकृति में शान्ति के उपाय निर्दिष्ट हैं। विविध आगमों में विष्णु, शिव, गणपति, सूर्य, शक्ति आदि देवताओं की सोने की, मणि की, चाँदी की, ताँबे की, अष्टधातु की, पत्थर की, लकड़ी और मिट्टी की प्रतिमाओं के निर्माण प्रतिष्ठा अर्चा एवं उत्सव आदि के विधान विस्तृत रूप में निर्दिष्ट हैं। देव प्रतिमाओं का प्रचार-प्रसार बौद्ध, जैन तथा प्राय: सभी अन्य धर्मों के द्वारा भी सुदूर जावा, सुमात्रा, चीन, जापान, यूरोप और अमेरिका तक में बहुत प्राचीन काल से होता रहा है। वैदिक परम्परा का ही प्रभाव इन सभी धर्मों पर लक्षित होता है। जैसे ज्योति गणित के वार, नक्षत्र का प्रभाव खगोल, भूगोल पर हुआ है। इसमें भारतीय गणित शास्त्र, ज्यामिति शुल्वसूत्र एवं शिल्प प्रतिमा तथा वास्तुकला का प्रभाव ही प्रधान है। पांचरात्र और आगमों में भी प्रतिमा एवं देवमन्दिर निर्माण तथा पूजा विधान आदि के

विस्तृत वर्णन हैं। इनका उद्भव और पूर्ण विकास होने में इन ग्रन्थों की रचना एवं सुदूर व्यापी प्रचार-प्रसार में बहुत समय लगा होगा। इसका प्रमाण ज्योतिषशास्त्र है। आधुनिक विद्वानों का कालमान तो बहुत अल्प है। विविध पुराणों में और आगमों में स्वयं इन्द्र, कुबेर, वरुण आदि के द्वारा हजारों वर्षों तक शिवलिंग तथा देवी आदि की मूर्तियों का श्रद्धा से आराधन उपासन द्वारा ही पूर्ण सिद्धि प्राप्त करने के अनेक दृष्टान्त प्राप्त होते हैं।

देवी पुराण के मत से एक दिन देवराज इन्द्र ने ब्रह्मा से प्रतिमा की आराधना के विषय में कुछ प्रश्न किया। तब ब्रह्मा ने प्रधान देवताओं ने प्राचीन काल में जिस-जिस देवता की आराधना करके जैसा-जैसा वैभव प्राप्त किया था, उसके देवेश पहले भगवान् शंकर ने अक्षमाला धारण करके मन्त्र शक्तिमयी देवी की आराधना किया। इसी से वे सबके स्वामी हुए। मैं शैलमयी देवी की आराधना करता हूँ। इसी से यह दुर्लभ ब्रह्मत्व मुझे मिला है। विष्णु सदैव इन्द्रनीलमयी देवी की अर्चना करते हैं। इसी से उन्होंने सनातन ब्रह्मत्व प्राप्त किया। विश्वेदेवगण चाँदी की तथा वायु ने पितल की, वसुगण ने कांस्य की, अश्विनीकुमारों ने मिट्टी की, वरुण ने स्फटिक की, अग्नि ने अन्न की, दिवाकर ने ताम्बे की, चन्द्रमा ने मोती की, मातृकाओं ने वज्रलौह की प्रतिमा की आराधना करके परम वैभव को प्राप्त किया है। हे इन्द्र! यदि तुम परम गति प्राप्त करना चाहते हो तो मणिमय प्रतिमा का निर्माण कराकर देवी की आराधना करो। इससे तुम्हारे सभी अभिष्ट सिद्ध हो सकते हैं।

इसी प्रकार शिव, स्कन्द, लिंग, गणेश आदि पुराणों में विविध देवताओं शिव, विष्णु, सूर्य, शक्ति, गणेश आदि की प्रतिमाओं की दीर्घकाल तक उपासना करने और अभीष्ट सिद्धि प्राप्ति के उल्लेख प्राप्त होते हैं। इससे प्रतिमा पूजा की अनादिता और अद्भुत महत्ता सिद्ध होती है। प्रतिमा की विधिवत् उपासना के लिये शुभ मुहूर्त में शिला, काष्ठ आदि का ग्रहण, प्रतिमा निर्माण, निर्मित देव-मन्दिर में उसकी प्रतिष्ठा आदि आवश्यक है। जिसके लिये गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, माल्य, आभरण आदि के द्वारा प्रतिमा का अधिवासन करके पीछे नाना प्रकार के वेदमन्त्रों की ध्वनियों के साथ उसकी स्थापना की जाती है। समुचित विधान में प्रतिष्ठा और पूजा उपासना से देवताओं का अनुग्रह प्राप्त होता है।

प्रतिमा निर्मित करके उसकी पूजा करने के कारण तन्त्र में इस प्रकार लिखा है—

चिन्मयस्याप्रमेयस्य निष्कलस्या कारीरिणः ।
साधकानां हितार्थाय ब्रह्मणो रूप कल्पना ।।

साधकों की सुविधा के लिये ही उस चिन्मय, अप्रमेय, निष्कल और निराकार ब्रह्म के रूप की कल्पना की गयी है। प्रतिमा पूजा में श्रद्धा, भक्ति, देवता में पूर्ण विश्वास, भावना की दृढ़ता, वाह्याभ्यन्तर शुद्धि, द्रव्य शुद्धि और शास्त्रीय विधि उपचारों का अनुसरण आवश्यक होता है। इनमें भी भावना और आस्था का विशेष महत्व है।

सदियों से भारत के जनजीवन में धर्म का प्रमुख स्थान रहा है। बौद्ध, जैन और ब्राह्मण तीनों धर्मों का विस्तार हुआ। धर्म के प्रसार के साथ-साथ धार्मिक अनुष्ठानों के निमित्त उनके अनुयायियों ने कुछ ऐसी स्थायी वस्तुओं का निर्माण किया जिनमें उनका धर्म युग-युगान्तर तक अमर रहे। इसी सन्दर्भ में गुफाओं में अंकन, स्तूपों और मन्दिरों का निर्माण किया गया। जब ब्राह्मण धर्म का पुनः जागरण हुआ तब मन्दिरों का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ। मन्दिरों में देव प्रतिमाएँ स्थापित हुईं। प्राचीन भारतीय इतिहास से ज्ञात होता है कि भारत के सभी राजवंशों ने मन्दिरों का निर्माण कराया। काल्पनिक दृष्टि से विहंगम योगी होकर आकाश में उड़ते हुए भारत को देखा जाय तो अधिकांश ग्राम, नगरों में मन्दिरों के शिखर दिखायी पड़ेंगे। ऐसा दृश्य दुनिया के किसी देश में नहीं दिखेगा। भारतीय जीवन दर्शन की आधारशिला मन्दिर है।

भातीय जीवन दर्शन आध्यात्मिक है। दार्शनिक विचार की आधार शिला पर धर्म की सत्ता प्रतिष्ठित है। धर्म की सरल अभिव्यक्ति मन्दिरों और मूर्तियों से होती है। त्रिविध ताप (आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक) से तप्त मानवता को मुक्ति का मार्ग दिखलाना भारतीय तत्वज्ञान का मुख्य उद्देश्य रहा है। भारतीय जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष है। ईश्वर की भक्ति से ही मोक्ष की प्राप्ति सम्भव है। भगवत्कृपा के लिये साधना, उपासना आवश्यक है। साधना के तीन मार्ग हैं—ज्ञान, कर्म और भक्ति। ज्ञान मार्ग अत्यन्त दुरूह है। यह सर्वसाधारण के लिये नहीं है। कर्म मार्ग में कर्त्तव्य का पालन करते हुए चरित्र की शुद्धता तथा आचरण की पवित्रता अनिवार्य है। संसार से निर्लिप्त रहना ही कर्म की पूर्णता है। गीता के अनुसार—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

भक्तिमार्ग मानव प्रकृति के अनुकूल होने के कारण बहुत लोकप्रिय हुआ। परन्तु वास्तव में ज्ञान, कर्म और भक्ति के सामंजस्य से ही धर्म अपनी पूर्णता प्राप्त करता है। तुलसीदास के अनुसार अगुनहि सगुनहि नहीं कुछ भेदा।

अतएव भक्तों में निर्गुण और सगुण दोनों रूपों की उपासना की है। विश्व में एक निर्विकल्प, निरूपाधि और निर्विकार सत्ता विद्यमान है। जिसे ब्रह्म कहते हैं। निर्विकार ब्रह्म जब माया से आवृत्त हो जाता है, तब उसे सगुण ब्रह्म कहते हैं। यही ब्रह्म माया जगत की उत्पत्ति, स्थिति और लय का कारण है। वह सर्वकार्य समर्थ, सर्वज्ञ और मंगलमय है। भगवत भक्तों ने अपने अनुरूप ब्रह्म के विविध रूपों की कल्पना किया। उनका नामकरण विविध नामों से किया।

जनसाधारण के लिये धार्मिक और दार्शनिक दुरूह विषयों को बोधगम्य बनाने में मूर्तियाँ अति उपयोगी सिद्ध हुईं। देवभाव से इन मूर्तियों का पूजन, अर्चन किया जाने लगा। उपासना का यह मार्ग अति सरल, सुगम और सुलभ सिद्ध हुआ। मूर्ति निर्माण कराकर देवालय में प्रतिष्ठा पूजन का प्रारम्भ हुआ।

इन सबों के लिये पांचरात्रशास्त्र निर्मित हुए। नारायण संहिता में पांचरात्र आगम के सात्त्विक, राजस और तामस तीन भेद कथित हैं। इनके लक्षण वर्णित नहीं हैं, केवल नाम बतलाये गये हैं। तीनों में छत्तीस-छत्तीस ग्रन्थों को गिनाया गया है। षट्त्रिंशत सात्त्विक संहिताओं में पौष्कर, श्रीकर आदि हैं। राजस संहिताओं में भी छत्तीस ग्रन्थ हैं। इन छत्तीस में १३वें स्थान पर भार्गव संहिता है। तामस संहिताओं में भी छत्तीस ग्रन्थ हैं। इस प्रकार मन्दिर मूर्ति निर्माण पूजन के १०८ ग्रन्थ हैं। उनमें यह भार्गवतन्त्र जो आपके करकमलों में है, विष्णुमूर्ति मन्दिर निर्माण, प्रतिष्ठा, पूजन, अर्चन से सम्बन्धित है। वैष्णवों के लिये यह ग्रन्थ अति उपयोगी है।

स्वरूपावस्थित कपिलदेव नारायण
पुनाई चक पटना, बिहार

▼

विषयानुक्रमणिका

अध्यायः	पृष्ठाङ्कः

अध्यायः **पृष्ठाङ्कः**

अध्यायः	पृष्ठाङ्कः
दशमोऽध्यायः	७९-८८

अध्यायः पृष्ठाङ्कः

अध्यायः	पृष्ठाङ्कः

अध्यायः **पृष्ठाङ्कः**

अध्यायः	पृष्ठाङ्कः

अध्यायः पृष्ठाङ्कः

अध्यायः **पृष्ठाङ्कः**

अध्यायः पृष्ठाङ्कः

अध्यायः	पृष्ठाङ्कः

अध्यायः	पृष्ठाङ्कः

अध्यायः **पृष्ठाङ्कः**

।।श्रीः।।

भार्गवतन्त्रम्

प्रथमोऽध्यायः

भार्गवतन्त्रस्य प्रयोजनप्रतिपादनाध्यायः

भार्गवतन्त्र के प्रयोजन का प्रतिपादन

मङ्गलाचरणम्

ज्ञानानन्दमयं देवं निर्मलस्फटिकाकृतिम्।
आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे।।१।।

भार्गवतन्त्र के प्रयोजन का प्रतिपादन

मंगलाचरण

ज्ञान आनन्द देव निर्मल स्फटिक के समान स्वच्छ हैं। सभी विद्याओं के आधार हयग्रीव की उपासना करते हैं।

M कोश के मंगलाचरण में मंगलाचरण के दो और श्लोक हैं—

वन्दे लक्ष्मीपतिं देवं शंख चक्रगदाधरम्।
विद्यामूर्ति हयग्रीवं शब्दार्थ ज्ञान लब्धये।।
अमृताध्मात मेघाममममृताभरणं विभुम्।
पांचरात्रागमाचार्यं वन्दे वैकुण्ठभूपतिम्।।

प्रास्ताविकम्

अगस्त्यं मुनिशार्दूलं महेन्द्रशिखरे स्थितम्।
प्रणम्य प्रयताः भूत्वा पप्रच्छुर्मुनिपुंगवाः।।२।।

प्रास्तविक

मुनिशार्दूल अगस्त्य महेन्द्र पर्वत के शिखर पर आसीन हैं। श्रेष्ठ मुनियों ने नम्रता से उन्हें प्रणाम करके पूछा।

मुनयः

भगवन् मुनिशार्दूल सर्वशास्त्रविशारद।
कथमद्य वयं सर्वे तीर्णास्स्म भवसागरात्।।३।।
अधीतान्यपि शास्त्राणि समधीता त्रयी पुनः।
तथापि निर्मलं नैव मनोऽस्माकं मुनीश्वर।।४।।

कथं वयं समुत्तीर्णा भविष्यामो भवाम्बुधेः।
उपायमद्य नो ब्रूहि येन यामोऽक्षयं पदम्।।५।।
एतच्छ्रुत्वा महातेजाः स्वयं स्वायंभुवो मुनिः।
ऋषिभ्योः वक्तुमारेभे स्वधीतं च स्वनुष्ठितम्।।६।।

मुनियों ने कहा—भगवन् मुनिशार्दूल सभी शास्त्रों के विशारद हमें यह बतलाइये कि हम भवसागर से पार कैसे जायेंगे? हम लोगों ने सभी अन्य शास्त्रों का अध्ययन किया। पुनः तीनों वेदों ऋग्, यजु, साम का अध्ययन भलीभाँति किया है। तथापि मुनिश्वर ! हमारे मन निर्मल नहीं हैं। ऐसी स्थिति में हम भवसागर के पास कैसे जा सकते हैं? आप हमें ऐसा उपाय बतलाने की कृपा करें, जिससे हमें अक्षय पद की प्राप्ति हो सके। यह सुनकर महातेजस्वी स्वयं स्वायंभुव मुनि ने स्वयं अधीत और अनुष्ठित अनुभवों को ऋषियों से कहना प्रारम्भ किया।

अगत्स्यः

पुरा खलु मया रक्षो जीर्णितं श्राद्धभोजने।
वातापिरिल्वलः पश्चात् कुपितः सोऽपि मारितः।।७।।
अहो रक्षोद्वयं नष्टं मया खलु तपस्यता।
ताभ्यां नष्टं तपोऽस्माकं किं कुर्म इति चिन्तयन्।।८।।
हिमवन्तमुपासाद्य देवगन्धर्वसेवितम्।
विसर्पिगाङ्गसलिलं सिद्धविद्याधरार्चितम्।।९।।
शङ्करज्योतिषाश्लिष्टं पार्वतीतोषकारिणम्।
नारायणमहायोगिचरणाम्बुजमुद्रितम् ।।१०।।
पुण्यगन्धवहोपेतं पुरुहूतादिवन्दितम्।
पुरत्रयोपसंहारे चापरूपधरं परम्।।११।।
फलपुष्पभरानम्रवृक्षषण्डसमाकुलम् ।
अनेकाश्रमसंकीर्णममलं हरिमन्दिरम्।।१२।।

अगस्त्य ने कहा—प्राचीनकाल में वातापि और इल्विल राक्षसों ने श्राद्धभोजन में नरमांस मिला कर खिला दिया। तब क्रोध से मैंने दोनों का नाश कर दिया। राक्षसों के मरने पर मुझे चिन्ता हुई कि मेरी तपस्या से दोनों राक्षसों का विनाश हुआ, इससे मेरे तप में कमी हो गयी। मैं सोचने लगा कि अब क्या

किया जाय? तब मैंने हिमालय पर तप करने का निश्चय किया और वहाँ गया। हिमालय पर आकर मैंने देखा कि यह पर्वत देवता गन्धर्वों से सेवित है। बहती गंगा की धारा सिद्ध विद्याधरों से अर्चित है। यह शंकर की ज्योति से श्लिष्ट है। पार्वती को सन्तोष प्रदायक है। यह महायोगी नारायण के चरणों से निकली है। यह पुष्प गन्धों से परिपूर्ण है। पुरुहूतों से वन्दित है। तीनों लोकों के संहार में परम धनुष के रूप में है। फलों, पुष्पों से भरपूर नम्र वृक्षों से समाकुल है। इसमें अनेक आश्रम हैं और श्रीविष्णु का मन्दिर है।

हिमालये अगस्त्यतपश्चर्या आकाशवाणीश्रवणं च

अत्युग्रं तप आतिष्ठं निराहारो जितेन्द्रियः।
वर्धमाने तदा घोरे तपस्यघहरेऽद्भुते।।१३।।
आकाशवाणीमश्रौषमतिम्भीरवादिनीम्।
स्वल्पाक्षरां च बह्वर्थां परिणामसुखावहाम्।।१४।।

हिमालय में अगस्त्य की तपश्चर्या और आकाशवाणी श्रवण

अगस्त्य ने अति कठोर तपस्या का आरम्भ किया। निराहार, जितेन्द्रिय रहकर उनका तप घोर वर्धमान होने लगा। वे विष्णु की अद्‌भुत तपस्या करने लगे। ऐसी अवस्था में आकाशवाणी सुनायी पड़ी। आकाशवाणी अति गम्भीर वाणी में हुई। उसमें अक्षर कम और अनेक अर्थ थे। परिणाम सुखदायक थे।

हरेः आराधनमहत्त्वं, मुनेः महेन्द्रगिरिगमनाय निर्देशश्च

आराधितो यदि हरिस्तपसा किं प्रयोजनम्।
नाराधितो यदि हरिस्तपसा किं प्रयोजनम्।।१५।।
अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा किं प्रयोजनम्।
नान्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा किं प्रयोजनम्।।१६।।
तपसो विरम ब्रह्मन् मर्हेन्द्रं व्रज पर्वतम्।
तत्र रामं समासाद्य तस्मात् सुखमवाप्नुहि।।१७।।

विष्णु के आराधन का महत्त्व, मुनि को महेन्द्रपर्वत जाने का निर्देश

यदि विष्णु की आराधना तप से करो, तो उसका क्या प्रयोजन है? यदि विष्णु की आराधना तप से न करो, तो उसका क्या प्रयोजन है? अन्दर बाहर यदि विष्णु विद्यमान हैं, तब तप की क्या जरूरत है? हे ब्रह्मण! तप करना छोड़ दो, महेन्द्र पर्वत पर जाओ। वहाँ परशुराम से सत्संग करो। इसी से तुम्हें सुख प्राप्त होगा।

अगस्त्यस्य महेन्द्रगिरिगमनम्

एतच्छ्रुत्वाम्बराद्वाणीं मनःश्रुतिसुखप्रदाम्।
विरम्य तपसो भूयो दक्षिणां दिशमभ्यगाम्।।१८।।
ततो महेन्द्रमासाद्य पुण्यगन्धर्वसेवितम्।
रामं कमलपत्राक्षमद्राक्षमृषिभिः सह।।१९।।

अगस्त्य का महेन्द्र पर्वत जाना

मन और कान को सुखप्रद आकाशवाणी सुनकर अगस्त्य ने तप करना छोड़ दिया और दक्षिण दिशा में प्रस्थान किया। वहाँ से चलकर पुण्य गन्धर्व सेवित महेन्द्र पर्वत पर आयें। वहाँ पर उन्होंने कमलनयन परशुराम को ऋषियों के साथ देखा।

परशुरामस्य वर्णनम्

तप्तचामीकरनिभं पिङ्गश्मश्रुजटाधरम्।
वल्कलाजिनसंवीतं ज्वलत्परशुधारिणम्।।२०।।
तपन्तमिव चादित्यं शीतयन्तं मृगाङ्कवत्।
भासयन्तं जगत्सर्वं वासुदेवप्रभौघवत्।।२१।।
भान्तं ब्रह्म श्रियातीव श्रिया नारायणो यथा।
भारत्या परमेष्ठीव शर्वो गिरिजया यथा।।२२।।

परशुराम का वर्णन

श्री परशुराम का वर्ण तप्त सोने के समान है। पीली दाढ़ी और शिर पर जटा है। वल्कल के अजिन धारण किए हुए हैं। हाथ में प्रज्वलित परशु है। सूर्य के समान प्रकाशित, चन्द्रमा के समान शीतल है। सारे संसार को भासमान किए हुए परम औघ वासुदेव के समान हैं। ब्रह्मश्री से लक्ष्मी नारायण के समान सारे जगत को भासित किये हुए हैं। वे सरस्वती, ब्रह्मा और पार्वती शिव के समान प्रतीत हो रहे हैं।

अगस्त्यकृता परशुरामस्तुतिः

जामदग्न्यं तमालोक्य रामं सर्वाङ्गसुन्दरम्।
मुदा परमयोपेतः शिरसा समवन्दिषम्।।२३।।
कृत्तो वनस्पतिरिव पातितो धरणीतले।
विग्रहो मे मुनिश्रेष्ठाः रामस्य पदपद्मयोः।।२४।।

अनुज्ञातः समुत्थाय तोषयामास तं प्रभुम्।
उच्चैः स्वरं समासाद्य पुण्डरीकाक्षविद्यया।।२५।।

अगस्त्य कृत परशुराम की स्तुति

जमदग्नि के सर्वांग सुन्दर पुत्र राम को देखकर अगस्त्य ने परम प्रसन्न होकर शिर नवा कर प्रणाम किया। तब दण्ड के समान धरातल पर राम के चरण कमलों में गिर पड़े। राम ने उन्हें पहचान कर अपने हाथों से उठाकर उन्हें सन्तुष्ट किया। तब अगस्त्य ने उनकी स्तुति पुण्डरीकाक्ष विद्या को उच्च स्वर में बोलकर किया।

पुण्डरीकाक्ष स्तोत्र या विद्या

जितन्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुषपूर्वज।।२६।।
नमस्ते वासुदेवाय शान्तानन्दचिदात्मने।
अजिताय नमस्तुभ्यं षाड्गुण्यनिधये नमः।।२७।।
महाविभूतिसंस्थाय नमस्ते पुरुषोत्तम।
सहस्रशिरसे तुभ्यं सहस्रचरणाय ते।।२८।।
सहस्रबाहवे तुभ्यं सहस्रनयनाय ते।
अमूर्ताय नमस्तुभ्यमेकमूर्ताय ते नमः।।२९।।
अनेकमूर्तये तुभ्यमक्षराय च ते नमः।
व्यापिने वेदवेद्याय नमस्ते परमात्मने।।३०।।
चिन्मात्ररूपिणे तुभ्यं नमस्त्रैयन्तमूर्तये।
अणिष्ठाय स्थविष्ठाय महिष्ठाय च ते नमः।।३१।।
नेदिष्ठाय दविष्ठाय क्षेपिष्ठाय च ते नमः।
वरिष्ठाय वसिष्ठाय कनिष्ठाय च ते नमः।।३२।।
पञ्चात्मने नमस्तुभ्यं सर्वान्तर्यामिणे नमः।
कल्पनाक्रोडरूपाय सृष्टिस्थित्यन्तहेतवे।।३३।।
नमस्ते गुणरूपाय गुणरूपानुवर्तिने।
व्यस्ताय च समस्ताय समस्तव्यस्तरूपिणे।।३४।।
आदिमध्यान्तशून्याय तद्वते च नमो नमः।
प्रणवप्रतिपाद्याय नमः प्रणवरूपिणे।।३५।।

लोकयात्राप्रसिद्ध्यर्थं स्रष्टृब्रह्मादिरूपिणे।
नमस्तुभ्यं नृसिंहादिमूर्तिभेदाय विष्णवे।।३६।।
विपाकैः कर्मणां क्लेशैरस्पृष्टवपुषे नमः।
नमो ब्रह्मण्यदेवाय तेजसां निधये नमः।।३७।।
नित्यासाधारणानेकलोकरक्षापरिच्छदे।
सच्चिदानन्दरूपाय वरेण्याय नमो नमः।।३८।।
यजमानाय यज्ञाय यष्टव्याय नमो नमः।
इज्याफलात्मने तुभ्यं नमः स्वाध्यायशालिने।।३९।।
नमः परमहंसाय नमः सर्वगुणाय ते।
स्थिताय परमे व्योम्नि भूयो भूयो नमो नमः।।४०।।

अगस्त्यस्यागमनहेतुकः प्रश्नः अभयप्रदानं च

एवं स्तुतो जगन्नाथो रामः कमललोचनः।
अवेक्ष्य कृपया देवो मामुवाच जगत्प्रभुः।।४१।।

रामः

किमर्थं कुंभतनय महेन्द्रं समुपागतः।
भीतिवद्भासि योगीन्द्र कुतस्ते भयमागतम्।।४२।।
इन्द्राद्वा वरुणाद्वापि ब्रह्मणो वा त्रिलोचनात्।
साक्षान्नारायणाद्वापि न ते भूयादितो भयम्।।४३।।
वैवस्वतो वा रक्षांसि दानवा वा सपन्नगाः।
विप्रियं यदि कुर्युस्ते गतिस्तेषां परश्वधः।।४४।।
तस्मादभीतवत्स्थित्वा ब्रूहि कार्यं ससंभ्रमम्।
साधयाम्यहमद्यैव दर्शनं मे शुभोदयम्।।४५।।

अगस्त्य के आगमन के हेतु विषयक प्रश्न और अभय प्रदान

जगन्नाथ कमललोचन राम ने अगस्त्य की स्तुति सुनकर उन्हें कृपा दृष्टि से देखा और जगत्प्रभु ने कहा—हे अगस्त्य! तुम महेन्द्र पर्वत पर किस उद्देश्य से आयें हो? तुम भयभीत से दिखायी पड़ रहे हो। तुम्हें किससे भय प्राप्त हो गया है? इन्द्र या वरुण या ब्रह्मा या महेश और साक्षात् नारायण से भी तुम्हें भय नहीं हो सकता। वैवस्वत या राक्षसों या दानवों या नागों ने भी तुम्हें कष्ट दिया हो, तो उन सबों की गति अवरुद्ध कर दूँगा। इसलिये निर्भय

होकर अपने आने का उद्देश्य कहो। उन्हें मैं आज ही दूर कर दूँगा; क्योंकि मेरा दर्शन सुखदायक है।

अगस्त्येन स्वागमनहेतुनिवेदनम्

इत्युक्तो जामदग्न्येन भीतवत् कुंभसंभवः।
यथावद्वक्तुमारेभे रामायामिततेजसे।।४६।।
न भीतिः ब्रह्मणो देव न विष्णोर्न च शङ्करात्।
नापि जिष्णोर्न च यमात् वरुणाद्वापि राक्षसात्।।४७।।
राक्षसेभ्योऽपि न भयं न देवेभ्यो न चासुरात्।
नान्येभ्यश्च भयं मेऽद्य भीतः पापादिहागतः।।४८।।
वातापिरिल्वलश्चोभौ राक्षसौ ऋषिकण्टकौ।
तौ हन्तुमर्थितो देवैः ऋषिभिश्च महात्मभिः।।४९।।
दत्तं मयाभयं तेभ्यो वधे राक्षसयोस्तयोः।
निश्चितं मे मनः पश्चाद्रक्षसापि निमन्त्रितः।।५०।।
राक्षसस्य पितुः श्राद्धे सम्पन्नमपि पृष्टवान्।
उक्तं मयास्तु सम्पन्नं जठरे पिण्डतां गतः।।५१।।
जीर्णोऽभून्मम वातापिस्ततः कुपित इल्वलः।
मुष्टिना हन्तुमारेभे मां मया हुंकृतिः कृता।।५२।।
तेन दग्धोऽभवद्रक्षः सर्वं तेन हृतं तपः।
तेन खिन्नोऽगमं शैलं तपसे हिमभूषितम्।।५३।।
अत्युग्रं तप आतिष्ठं वाणी काप्यशरीरिणी।
तपसानेन किं ते स्यात् रामेण भव निर्भरः।।५४।।
तत उत्थाय तपसः त्वामद्य शरणं गतः।
अनागसं मां भगवन् कृत्वा समवलोकय।।५५।।

अगस्त्य के द्वारा अपने आगमन के हेतु का निवेदन

जामदग्न्य राम के इतना कहने पर भयभीत के समान अगस्त्य ने अमित तेजस्वी राम से यथावत् कहना प्रारम्भ किया। देव! मुझे न ब्रह्मा से, न विष्णु से और न शंकर से भय है। मुझे इन्द्र, यम, वरुण या राक्षसों से भी भय नहीं है। न राक्षसों से, न देवताओं से, न असुरों से और न किसी अन्य जनों से मुझे भय है। आज मैं पापों के भय से यहाँ आया हूँ।

वातापि और इल्विल दोनों राक्षस ऋषियों के नष्टकारक थे। देवताओं, ऋषियों और महात्माओं ने उन दोनों के नाश के लिये मुझसे कहा। मैंने उन्हें अभय प्रदान किया और कहा कि उनका नाश हो जायेगा। उनके नाश के लिये मन में निश्चय किया। इसके बाद राक्षसों ने भी अपने पिता के श्राद्ध में ऋषियों के साथ मुझे भी निमन्त्रित किया। मैंने श्राद्ध का अन्न खाया तब वे जठर में पिण्ड हो गये। अन्न में वातापि ने मांस चूर्ण मिला दिया था। वातापि का अन्त हो गया। इस पर इल्विल क्रुद्ध हो गया। मुझे मुट्ठी से मारने लगा। तब मैंने हुंकार किया। उससे सभी राक्षसों के साथ इल्विल भी दग्ध हो गया। इससे मेरा तप नष्ट हो गया। इससे खिन्न होकर मैं हिमालय में तप करने गया। वहाँ मैं अति उग्र तप करने लगा। तब आकाशवाणी हुई कि इस तप से तुम्हारा कोई काम नहीं होगा। परशुराम की शरण में जाओ। तब मैं वहाँ से चलकर आज आपकी शरण में आया हूँ। अब आप मुझ पर कृपा कीजिये।

भगवदाराधनतन्त्रश्रवणस्य पापनाशकत्वम्

एतच्छ्रुत्वा वचो देवो भगवान् भार्गवो मुनिः।
प्रत्युवाच ततः प्रीतो मैत्रावरुणये प्रभुः।।५६।।

भगवत् आराधन तन्त्र के श्रवण से पाप का नाशकत्व

यह सुनकर देव भगवान भार्गव मुनि परशुराम ने अगस्त्य से स्नेह-पूर्वक कहा—

रामः

ऋषीणामग्निकल्पानां देवानां प्रीतये त्वया।
वातापिरिल्वलश्चोभौ नाशितौ ते तपो बलात्।।५७।।
निश्शल्या ऋषयश्चापि देवाश्चासन् त्वयानघ।
तदर्थं च तपस्तप्तं भवता हिमवत्तटे।।५८।।
अस्मदालोकनेनैव पूतोऽभूर्मुनिपुङ्गव।
तपोधनक्षयभयं न ते भवति दारुणम्।।५९।।
या चासीद्धृदये शङ्का रक्षो नाशनिमित्तजा।
तां च हर्यर्चनातन्त्रं श्रुत्वा नाशय कुम्भज।।६०।।

राम ने कहा—ऋषियों और अग्निकल्पों में देवताओं की प्रीति के लिये तुमने वातापि और इल्विल दोनों का तपोबल से नाश किया। ऋषियों और देवताओं के लिये तुमने यह कार्य किया। इसके लिये हिमवत तट पर तप

किया। मेरी दृष्टि से तुम निष्पाप थे। तुम मुनि पुंगव पवित्र हो। तपोधन के क्षय का दारुण भय अब तुम्हें नहीं है। जो तुम्हारे हृदय में राक्षसों के नाश के लिये शंका है, उसका नाश विष्णु अर्चन तन्त्र के सुनने से हो जायेगा।

हर्यर्चनातन्त्रविषये अगस्त्योत्थापितजिज्ञासा

अगस्त्य:

किं तद्धर्यर्चनातन्त्रं तन्त्रं तत्कथमागतम्।
सर्वं निरवशेषेण उपदेष्टुं त्वमर्हसि॥६१॥

॥इति श्री भार्गवतन्त्रे प्रथमोऽध्याय:॥

हरि अर्चन तन्त्र के विषय में अगस्त्य उत्थापित जिज्ञासा

अगस्त्य ने कहा कि वह हरि अर्चन का तन्त्र क्या है और किस प्रकार प्रकट हुआ? उसके विषय में सब कुछ बतलाने में आप समर्थ हैं, अत: मुझे उपदेश दीजिये।

॥ श्रीभार्गवतन्त्र में प्रथम अध्याय सम्पूर्ण हुआ॥

द्वितीयोऽध्यायः

तन्त्रविवरणपूर्वकवासुदेवाराधनफलादिनिरूपणाध्यायः

तन्त्रविवरणम्

श्रीरामः

अक्षय्यसंख्यं तन्त्रं तत् परस्मिन् ब्रह्मणि स्थितम्।
सार्धकोटिप्रमाणेन जग्राह भगवान् विधिः।।१।।
नारदोऽपि च जग्राह कोट्यर्धं ब्रह्मणो मुनिः।
कपिलोऽपि मुनिः पञ्च लक्षमात्रमुपाहरत्।।२।।
वैनतेयोऽपि जग्राह पादलक्षं जनार्दनात्।
विंशत्सहस्रं जग्राह पूजातन्त्रं हरेः फणी।।३।।
चत्वारिंशत्सहस्राणि विखना मुनिरग्रहीत।
लक्ष्मीः षष्टिसहस्राणि लक्षमेकं वसुन्धरा।।४।।
शुकः पञ्च सहस्राणि सहस्रं सप्ततेर्हरः।
चतुर्दश सहस्राणि भगवान् स पराशरः।।५।।
विष्वक्सेनोऽपि जग्राह ग्रन्थं लक्षद्वयं हरेः।
अन्ये च बहवः कामं जगृहुर्मुनिपुङ्गवाः।।६।।

तन्त्र विवरणपूर्वक वासुदेव आराधन के फलादि का निरूपण

तन्त्र विवरण

श्रीराम ने का कि परम ब्रह्म के अक्षय असंख्य तन्त्र हैं। उन तन्त्रों में से ढाई करोड़ तन्त्रों को ब्रह्मा ने ग्रहण किया। नारद ने भी आधा करोड़ तन्त्र ग्रहण किया। ब्रह्मर्षि मुनियों और कपिल मुनि ने पाँच-पाँच लाख ग्रहण किया। जनार्दन से गरुड़ ने पच्चीस हजार तन्त्रों को ग्रहण किया। शेषनाग ने विष्णु से बीस हजार पूजा तन्त्र ग्रहण किया। विखना मुनि ने चालीस हजार तन्त्र ग्रहण किया। लक्ष्मी ने साठ हजार और वसुन्धरा ने एक लाख ग्रहण किया। शुक्र ने पाँच हजार और सत्तर हजार शंकर ने ग्रहण किया। भगवान पराशर ने चौदह हजार ग्रहण किया। विष्वक्सेन ने विष्णु से दो लाख ग्रन्थ ग्रहण किया। मुनिपुंगवों ने अन्य बहुत तन्त्रों को ग्रहण किया।

शास्त्रविधिना हरेः आराधनफलम्

असंख्यातमिदं शास्त्रं हरेर्जठरपूरितम्।
संग्रहेणाद्य ते वच्मि तेन पूतो भविष्यसि।।७।।

तेन शास्त्रविधानेन पूजयस्व रमापतिम्।
तेन सर्वं लयं याति कलुषं कलशोद्भव॥८॥
स्मरणं कीर्तनं विष्णोः पूजनं पादवन्दनम्।
प्रदक्षिणं दर्शनं च सर्वाघौघविनाशनम्॥९॥
एकैकमपि पर्याप्तं सर्वपापापनोदने।
किं पुनर्बहवो यस्य सः पुमान् हरिरेव हि॥१०॥
यद्यदिच्छन् धिया विष्णुं सेवते भक्तिसंयुतः।
तस्य तत्तत्करतले नात्र कार्या विचारणा॥११॥

शास्त्रीय विधि से हरि आराधन के फल

इसलिये शास्त्रीय विधान से रमापति की पूजा तुम भी करो। हे अगस्त्य! इससे सभी पापों का नाश हो जाता है। विष्णु के स्मरण, उनके गुणों का कीर्तन, पूजन, पादवन्दन, प्रदक्षिणा दर्शन से सभी पापों के समूह का नाश हो जाता है। एक ही विष्णु की आराधना सभी पापों के विनाश के लिये पर्याप्त है, तब बहुतों उपासना की क्या अवश्यकता है? हरि के बहुत रूप हैं। जो विष्णु की सेवा मन, बुद्धि, भक्ति से करते हैं, उनके करतल में सब कुछ होता है। इसमें विचार करने की जरूरत नहीं है।

देवालयादिकल्पनस्य तत्तदाराधनादेश्चफलकीर्तनम्

यस्तु विष्णुगृहं कुर्यात् वैकुण्ठे तस्य मन्दिरम्।
यस्तु बिम्बं हरेः कुर्यात् स तु विष्णौ लयं व्रजेत्॥१२॥
येन पीठानि कल्प्यन्ते स याने चरते दिवि।
यच्छत्रं चामरं पीठं पादपीठं तथाम्बरम्॥१३॥
अन्यान्युपचाराणि करोति कमलापतेः।
स तु तैस्तैस्तथाकाशे निर्मलेऽमरः सेविते॥१४॥
देवैः पर्युपचर्यन्ते स नाघेन विलिप्यते।
कासारवापिकाकूपतटाकादि करोति यः॥१५॥
स भूयात् सततं शान्तः स न तापेन लिप्यते।
कवचायुधमूषास्रक् किरीटादि करोति यः॥१६॥
उद्यानानि च रम्याणि धरणीं सस्यमालिनीम्।
सभां च मण्डपं रम्यं सर्वं तस्य परेऽम्बरे॥१७॥
नैवेद्यं विविधं भक्ष्यं भोज्यं लेह्यं च पानकम्।
उत्पादयति पश्चात् स सुधाशी भवति ध्रुवम्॥१८॥

अनिच्छन्नखिलं भोगं यः प्रीत्या कुरुते क्रियाः।
स भवेदमले धाम्नि परस्मिन्नेव लीयते।।१९।।
यः सदा देवसदने ध्यायन्नास्ते मुदा हरिम्।
पुनर्न मातुर्जठरे निवसेत्कलसोद्भव।।२०।।
पानीयं देवदेवाय यो ददाति गतस्पृहः।
मातुः स्तन्यं न पिबति पुनः कलशसंभव।।२१।।
तालवृन्तेन देवेशं यो वीजयति भक्तिमान्।
स न तापत्रयैर्लिप्येतेति शास्त्रविनिर्णयः।।२२।।
गन्धं ददाति यो भक्त्या नरके स न मज्जति।
आमोदयति यः सद्म स स्वर्गे तु महीयते।।२३।।
दद्याच्च यो अम्बरं विष्णोः नग्नत्वं तस्य नोच्यते।
आलोक्य हृष्टो विष्णुं यः स सालोक्यं समश्नुते।।२४।।
दीपान् प्रदीपयेद्यस्तु तद्ध्यानविषयो हरिः।
मार्जनालेपनैर्यान्ति पापानि विलयं ध्रुवम्।।२५।।
तोरणैरङ्गवल्याद्यैः मण्डयन् देवमन्दिरम्।
सर्वदा मण्डितो भूयाद्वैकुण्ठे देवमन्दिरे।।२६।।
वेदैरङ्गैस्तथा स्तोत्रैस्तोषयेद्यदि शार्ङ्गिणम्।
सर्वदा तोषितः सर्वैः भवेद्वैकुण्ठसद्मनि।।२७।।
गीतं नृत्यं तथा वाद्यं कारयेद्यो हरेः प्रियम्।
स तेन तेन भवति परितुष्टः परे पदे।।२८।।
अनन्तशयने देवे परमानन्दविग्रहे।
अचला परमा भक्तिर्यस्य स ब्रह्मभाजनम्।।२९।।
भगवद्भक्तियुक्तेषु भक्तिमान् यो भवेन्नरः।
स भवेद्भगवत्प्राणस्तस्य स्थानं भवेद्धरिः।।३०।।

देवालय आदि कल्पन उसके आराधन देश के फल कीर्तन

जो विष्णु मन्दिर का निर्माण करवाता है, उसका आवास वैकुण्ठ में होता है। जो विष्णु की प्रतिमा बनवाता है, वह विष्णु में लय हो जाता है। जो भगवत पीठ बनवाते हैं, वे विमान में आकाश भ्रमण करते हैं। जो छत्र, चामरपीठ, पादपीठ, वस्त्र अन्यान्य उपचार कमलापति को समर्पित करते हैं, वे आकाश में निर्मल अमरों से सेवित होते हैं। देव की जो पर्युपासना करते हैं,

उन्हें पाप नहीं लगता। जो कासार, वापिका, कूप, तटाक आदि बनवाते हैं, वे सदैव शान्त रहते हैं। वे किसी ताप से तप्त नहीं होते हैं। जो कवच, आयुध, वस्त्र, स्रक, किरीट आदि समर्पित करते हैं, रमणीक उद्यान धरती को सस्यमालिनी बनाते हैं, सभा मण्डप रम्य बनवाते हैं, सुन्दर वस्त्र अर्पण करते हैं, नैवेद्य में विविध भक्ष्य भोज्य लेह्य पानक बनाकर अर्पण करते हैं, वे अमृत का भोजन करते हैं, यह निश्चित है। जो प्रेम से सभी भोग बनाने की क्रिया करते हैं, वे अमलधाम परमब्रह्म में लीन हो जाते हैं।

हे अगस्त्य! जो हरि मन्दिर में प्रसन्न हो हरि का ध्यान करते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता। स्पृहारहित होकर जो देवेदेव को पानीय देता है, वह फिर माता के स्तन का पान नहीं करता। शास्त्र का निर्णय है कि जो भक्त तालवृन्त से हरि का भजन करता है, उसे तापत्रय नहीं होता। जो हरि को भक्ति से गन्ध अर्पण करता है, उसे नरक का दुःख नहीं भोगना पड़ता। जो मन्दिर में आमोद आयोजित करता है, वह स्वर्ग में रहता है। जो विष्णु को वस्त्र प्रदान करता है, उसे वस्त्रों की कमी नहीं होती। विष्णु को देखकर जो प्रसन्न होता है, उसे सालोक्य प्राप्त होता है। विष्णु का ध्यान करते हुए जो दीपदान करता है, मन्दिर में लेपन मार्जन करता है, उसके सभी पापों का नाश हो जाता है। जो देव मन्दिर को तोरण, रंगवल्ली आदि से सजाता है, वह वैकुण्ठ में मण्डित देव मन्दिर में रहता है। वेद वेदाङ्ग स्तोत्र से जो विष्णु को सन्तुष्ट करता है, वह सदैव तोषित होकर वैकुण्ठ के घर में रहता है। विष्णु को प्रीति के लिये जो गीत, नृत्य, वाद्य आयोजित करता है, वह उन सबों से परम पद में परितुष्ट रहता है। शेषशायी परमानन्द विग्रह देव में जिसकी अचला भक्ति होती है, वह ब्रह्मभाजन हो जाता है। जो मनुष्य भक्तिभाव युक्तों में भक्तिमान होता है, वह भगवत का प्राण हो जाता है, उसका स्थान विष्णु होते हैं।

वासुदेवध्यानस्य सिद्धिप्रदातृत्वम्

ततस्त्वं शार्ङ्गधन्वानं वासुदेवं सनातनम्।
ध्यायस्व सततं चित्ते तेन ते सिद्धिरव्यया।।३१।।

।।इति भार्गवतन्त्रे द्वितीयोऽध्यायः।।

वासुदेव के ध्यान का सिद्धिप्रदादित्व

इसलिये तुम शार्ङ्ग धनुषधारी सनातन वासुदेव का ध्यान चित्त में निरन्तर करते रहो। इससे तुम्हें अव्यय सिद्धि प्राप्त होगी।

।। श्रीभार्गवतन्त्र में द्वितीय अध्याय सम्पूर्ण।।

तृतीयोऽध्यायः

देवालयकल्पनप्रयोजनस्थानादिनिरूपणाध्यायः

भगवदालयकल्पनविषयकजिज्ञासा

अगस्त्यः

भगवन् भार्गव श्रीमन् सर्वकल्याणविग्रह।
हरिमन्दिरनिर्माणं कथं कुर्याज्जगत्प्रभो।।१।।

देवालय कल्पन प्रयोजन स्थान आदि का निरूपण

भगवत आलय कल्पन विषयक जिज्ञासा

अगस्त्य ने कहा सर्वकल्याण विग्रह भार्गव श्रीमन् भगवन जगत्प्रभु हरि मन्दिर का निर्माण क्यों होता है?

भगवदालयनिर्माणस्य प्रयोजनद्वयम्

श्रीरामः

कृत्वा प्रभूतं सलिलमारामान् विनिवेश्य च।
देवतायतनं कुर्यात् यशोधर्माभिवृद्धये।।२।।
इष्टापूर्तेन लभ्यन्ते ये लोकास्तान् बिभूषता।
देवानामालयः कार्यो द्वयमप्यत्र दृश्यते।।३।।

भगवदालय निर्माण के दो प्रयोजन

श्रीराम ने कहा कि कूप, वापी, तडाग आदि निर्माण कराकर यश, धर्म वृद्धि के लिये देवालय का निर्माण करायें। इष्टापूर्ति से जो लोक प्राप्त होते हैं, वे मन्दिरों के निर्माण से होते हैं। यहाँ जलाशय और देवालय दो ही कार्य दृष्टिगत होते हैं।

भगवदालयकल्पनयोग्यस्थाननिर्देशः

सलिलोद्यानयुक्तेषु कृतेष्वकृतकेषु च।
स्थानेष्वेतेषु सान्निध्यमुपगच्छन्ति देवताः।।४।।
सरस्सु नलिनीच्छत्रनिरस्तरविरश्मिषु।
हंसांसाक्षिप्तकल्हारवीचीविमलवारिषु ।।५।।
हंसकारण्डवक्रौञ्चचक्रवाकविराविषु ।
पर्यन्तनिचुलच्छायाविश्रान्तजलचारिषु ।।६।।
क्रौञ्चक्रौञ्चीकलापाश्च कलहंसकलस्वनाः।
फुल्लनीरद्रुमोत्तंसास्सङ्गमश्रेणिमङ्गलाः ।।७।।

पुलिनाभ्युन्नतोरस्था हंसहासाश्च निम्नगाः।
वनोपान्तनदीशैलनिर्झरोपान्तभूमिषु ।।८।।
रमन्ते देवताः नित्यं पुरेषूद्यानवत्सु च।
पर्वतेषु प्रशस्तेषु तीरेषु च पयोनिधेः।।९।।
आश्रमेषु मुनीनां च ब्राह्मणाः यत्र नित्यशः।
तत्र हर्यादयो देवाः वस्तुमिच्छन्ति सर्वदा।।१०।।
यत्र भूमिः प्रशस्ता स्यात् भूसुराणां मनोहरा।
सा भवेद्देवतानां च प्रिया कलशसंभव।।११।।

भगवत आलय कल्पन योग्य स्थान के निर्देश

निर्मित या अनिर्मित स्वतः उपलब्ध जलाशय उद्यान के स्थानों के सान्निध्य में देवता जाते हैं। सूर्य रश्मियों से खिले कमल छत्र वाले तालाब में जहाँ हंस क्रीड़ारत हों, तट पर कल्हार हो, विमल जल में लहरियाँ हो, जिसमें हंस कारण्ड क्रौञ्च चक्रवाक हों, तल पर छाया में जलचर विश्राम करते हो, जिसमें क्रौञ्च क्रौञ्ची कलाप हो, कलहंस का स्वर गूँजता हो, फुल्ल नारिद्रुम उत्तम मंगला श्रोणी संगम हो, जिसके तट ऊँचे हो, हंस हास निम्नगा हो, वन, उपान्त नदी, शैल, निर्झर उपान्त भूमि में देवता रमते हैं। नगर के उद्यान में प्रशस्त पर्वतों में समुद्र के तट पर, मुनियों के आश्रमों में जहाँ नित्य ब्राह्मण रहते हों, वहाँ पर विष्णु आदि देवता रहना पसन्द करते हैं। हे अगस्त्य! जहाँ भूमि प्रशस्त हो, उसमें ब्राह्मणों का वास हो, वह मनोहर हो, वह स्थान देवताओं को प्रिय होता है।

देवालयकल्पनक्रमे द्वारादितत्तद्भागानां प्रमाणादिः

चतुष्षष्टिपदं कार्यं देवतायतनं सदा।
द्वारं च मध्यमं तत्र समदिक्स्थं प्रशस्यते।।१२।।
यो विस्तारो भवेद्यस्य द्विगुणा तत्समुन्नतिः।
उच्छ्रायाद्यस्तृतीयोंऽशस्तेन तुल्या कटिर्भवेत्।।१३।।
विस्तारार्धं भवेद्गर्भो भित्तयोऽन्यास्समन्ततः।
गर्भपादेन विस्तीर्णं द्वारं द्विगुणमुच्छ्रितम्।।१४।।
उच्छ्रायात्पादविस्तीर्णा शाखा तद्वदुदुम्बरः।
विस्तारपादप्रतिमं बाहुल्यं शाखयोः स्मृतम्।।१५।।
त्रिपञ्चसप्तनवभिः शाखाभिस्तत्प्रशस्यते।
अधश्शाखाचतुर्भागे प्रतिहारौ निवेशयेत्।।१६।।

शेषं मङ्गल्यविहगैः श्रीवृक्षस्वस्तिकैर्घटैः।
मिथुनैः पत्रवल्लीभिः प्रतिमाभिश्च शोभयेत्।।१७।।
द्वारमानाष्टभागोना प्रतिमा स्यात् सपिण्डिका।
द्वौ भागो प्रतिमा तत्र तृतीयांशश्च पण्डिका।।१८।।

देवालय कल्पन क्रम में द्वारों और द्वार भागों के प्रमाण

मन्दिर का निर्माण कार्य सदैव चौंसठ पद में करना चाहिये। उसमें द्वार मध्य में दोनों ओर बराबर दिशा में होना चाहिये। मन्दिर के विस्तार में इसकी ऊँचाई दुगुनी प्रशस्त होती है। उच्छ्राय आदि तीसरे अंश में और इसी के बराबर कटि होना चाहिये। विस्तार का आधा गर्भगृह होता है। भीतों का न्यास समान होना चाहिये। गर्भ के चौथाई भाग द्वार की चौड़ाई और चौड़ाई की दोगुनी द्वार की ऊँचाई होती है। ऊँचाई के चौथे भाग की शाखा और उदुम्बर होती है। विस्तार के चौथे अंश के बराबर की प्रतिमा और शाखाएँ होती हैं। तीन, पाँच, सात, नव शाखाएँ वहाँ प्रशस्त हैं। नीचली शाखा के चतुर्थांश भाग में प्रतिहारी का निवेश होता है। शेष में मंगल्यविहग, श्रीवृक्ष, स्वस्ति घट होता है। दो पत्र वल्लियों से प्रतिमा को सुशोभित करें। द्वार मान के आठवें भाग की प्रतिमा शायद सपिण्डिश होती है। दो भाग की प्रतिमा और तीसरे अंश की पिण्डिका होती है।

विंशतिसंख्याकानाम् आलयानां परिगणनम्

मेरुमन्दरकैलासविमानच्छन्दनन्दनाः ।
समुद्रपद्मगरुडनदीवर्धनकुञ्जराः ।।१९।।
गुहराजो वृषो सिंहस्सर्वतोभद्रको घटः।
हंसो वृत्तश्चतुष्कोणः षोडशाष्टाश्रकस्तथा।।२०।।
इत्येते विंशतिः प्रोक्ताः प्रासादाः शार्ङ्गधन्वनः।

बीस संख्या में आलय की परिगणना

मेरु, मन्दर, कैलास, विमान, छन्दनन्दन, समुद्र, पद्म, गरुड़, नदीवर्धन, हाथी, गुहराज, वृष, सिंह, सर्वतोभद्र, घट, हंस, वृत्त, चौकोर, षोडशार, अष्टाश्र—इन बीस प्रकारों के मन्दिर विष्णु के होते हैं।

देवालयस्य सामान्यं लक्षणम्

यथोक्तेन क्रमेणैव तेषां लक्षणमुच्यते।।२१।।
पूर्वोक्तायामविस्तारावर्धीकृत्य यथावसु।
चतुर्भागेन वा कुर्यात् सर्वं वित्तानुसारतः।।२२।।

देवालय के सामान्य लक्षण

उपरोक्त क्रम से उनके लक्षण होते हैं। पूर्वोक्त आयाम के विस्तार आठ गुणा या चार गुणा अपने धन के अनुसार करना चाहिये।

आलयकल्पनक्रमे अर्धमण्डपाद्यायामादिः

गर्भगेहसमायामम् अर्धमण्टपमुच्यते।
सपादं सार्धयुक्तं वा त्रिपादाधिकसंयुता।।२३।।
अर्धमण्डपमानेन सार्धं नृत्तार्धमण्डपम्।
वैपुल्यसदृशं सार्धं द्विगुणं वा यथेच्छया।।२४।।
तयोर्मण्डपयोरेवमायामो मुनिपुङ्गव।
अन्तर्मण्डलनामानं प्राकारं प्रथमं विदुः।।२५।।
विमानं वेष्टयेदेतत् यद्वा स्यादर्धमण्डपम्।
अन्तर्हाराह्वयं वप्रं कारयेत्तदनन्तरम्।।२६।।
मर्यादाख्यं तृतीयं तत्प्राकारं विधिभाषितम्।

आलय कल्पन क्रम में अर्धमण्डप आदि के आयाम

गर्भगृह अयाम के आधे भाग के मण्डप बनाना चाहिये अथवा पौन भाग में अथवा पौन भाग में कुछ अधिक आयाम में मण्डप बनाना चाहिये। मण्डप मान के पौन मान नृत्तार्धमण्डप होता है। अथवा वैपुल्य के समान या आधा दोगुना मान में बनाना चाहिये या इच्छा के अनुसार बनाना चाहिये। उसके मण्डप के आयाम के बराबर आयाम के अन्तर्मण्डल मान का प्रथम प्राकार बनावें। इससे विमान को वेष्टित करें या अर्धमण्डप बनावें। अन्तर्हार वप्र उसके बाद बनावें। तृतीय मर्यादा प्रकार विधि भाषित है।

मूलबिम्बादिस्थापनस्थाननिर्देशः

मूलबिम्बं प्रतिष्ठाप्यं गर्भगेहे विधेः पदे।।२७।।
यद्वा दैवे मानुषे वा ध्रुवस्थापनमाचरेत्।

मूल मूर्ति आदि स्थापन स्थान के लिये निर्देश

गर्भगृह में मूल प्रतिमा का स्थापन विधिवत् करने के बाद देव मनुष्य या ध्रुवबिम्ब स्थापित करें।

द्वारपालस्थाननिर्देशः

चण्डप्रचण्डौ संस्थाप्य गर्भद्वारे यथाक्रमम्।।२८।।
अर्धमण्डपकद्वारे शङ्खचक्रोत्तमाङ्गिनौ।
अन्तर्मण्डलसंज्ञस्य स्थलस्य द्वारपार्श्वयोः।।२९।।

जयश्च विजयश्चोभौ कर्तव्यौ मुनिपुङ्गव।
अन्तर्हाराह्वये धाम्नि द्वारि पद्मगदाधरौ।।३०।।
दुर्जयप्रबलौ स्थाप्यौ मर्यादाद्वारपार्श्वयोः।

द्वारपाल स्थान निर्देश

गर्भगृह के द्वार पर चण्ड प्रचण्ड को यथाक्रम स्थापित करें। अर्धमण्डप के द्वार पर उत्तम अंगों वाले शंख, चक्र को स्थापित करें। अन्तर्मण्डल नामक स्थल के द्वार के बगल में इन्हें स्थापित करें। जय, विजय दोनों पद्म गदाधारियों को अन्तर्हार धाम के द्वार पर स्थापित करें। दुर्जय प्रवलों की स्थापना मर्यादा द्वार के पार्श्वों में करें।

परिवारदेवस्थाननिर्देशः

एकावरणके धाम्नि परिवारान्निमान् शृणु।।३१।।
नृत्तार्धमण्डपस्याग्रे कल्पनीयो विहङ्गराट्।
गोपुरस्योत्तरे साले मन्दिराभिमुखे रविः।।३२।।
तस्यैव दक्षिणे साले चन्द्रमाः परिकल्प्यते।
वह्नौ कामो यमे ब्रह्मा नैर्ऋते स्याद्गजाननः।।३३।।
वारुणे षण्मुखो दुर्गा वायौ सौम्ये धनाधिपः।
ईशाने शंकरं तत्र क्षेत्रपालं प्रकल्पयेत्।।३४।।
सोमेशयोरन्तराले विष्वक्सेनं प्रकल्पयेत्।
अङ्गणे दक्षिणे सप्तमातरः श्रीस्तु नैर्ऋते।।३५।।
इन्द्रादयो लोकपालाः पूज्याः स्वाशासु चाङ्गणे।
गोपुरस्य भवेदन्तर्बहिर्वा बलिपीठिका।।३६।।
अन्तर्हाराह्वयोपेते विशेषो धाम्नि कथ्यते।
सूर्याचन्द्रमसोः स्थाने विशेषौ पुरुषाच्युतौ।।३७।।
सूर्याचन्द्रमसौ कल्प्यौ द्वितीयावरणे तथा।
हयग्रीवः स्मरस्थाने स्थाप्यः सङ्कर्षणो विधेः।।३८।।
वराहो विघ्नराट् स्थाने प्रद्युम्नः षण्मुखस्य च।
कात्यायिन्याः अनन्तः स्यात् अनिरुद्धो नरासने।।३९।।
नृकेसरी शंकरस्य चाङ्गणे पीठिकासु चेत्।
इन्द्रादयः समभ्यर्च्याः तेषां स्थाने यथाक्रमम्।।४०।।

चक्री च मुसली शंखी खड्गी चैव गदाधरः।
शार्ङ्गी पद्मी तथा वज्री पूज्या दिव्यास्त्रधारिणः।।४१।।
प्रथमावरणे येषां स्थाना ये समुदीरिताः।

परिवार देव स्थान निर्देश

एक आवरण के धाम में इन परिवारों को सुनो। नृत्तार्धमण्डप में आगे गरुड़ को स्थापित करें। गोपुर के उत्तर साल में मन्दिर के सामने सूर्य की प्रतिष्ठा करें। उसके दक्षिण साल में चन्द्रमा को स्थापित करें। अग्नि, कामदेव, यम, ब्रह्मा, गजानन को नैर्ऋत्य में स्थापित करें। पश्चिम में कार्तिकेय, वायव्य में दुर्गा, उत्तर में कुबेर, ईशान में शंकर तथा क्षेत्रपाल को स्थापित करें। उत्तर और ईशान के अन्तराल में विष्वक्सेन को कल्पित करें। आंगण में दक्षिण में सप्तमातृका को और लक्ष्मी को नैर्ऋत्य में स्थापित करें। इन्द्रादि लोकपालों की पूजा आंगन में उनकी-उनकी दिशाओं में करें। गोपुर के अन्दर या बाहर बलि पीठिका होती है। अन्तर्हार से युक्त विशेष धाम को कहता हूँ। सूर्य चन्द्रमा के स्थान में विशेष अच्युत पुरुष है। द्वितीय आवरण में सूर्य चन्द्रमा की कल्पना करें। हयग्रीव को कामस्थान में बलराम और ब्रह्मा को स्थापित करें। वराह को गणेश के स्थान में, प्रद्युम्न को कार्तिकेय के स्थान में, अनन्त के स्थान में कात्यायनी, अनिरुद्ध को नरासन में स्थापित करें। नृसिंह को शंकर के स्थान आंगन की पीठिका में स्थापित करें। इन्द्रादि का समर्चन उनकी दिशाओं के स्थान में करें। चक्री, मुसली, शंखी, खड्गी, गदाधर, शार्ङ्गी, पद्मी, वज्री दिव्य अस्त्र धारियों की पूजा करें। प्रथम आवरण में ये स्थान बतलाये गये हैं।

आलये द्वितीयावरणस्थपरिवारदेवानां स्थानानि

ज्ञेयाः द्वितीये ते सर्वे परिवाराः यथाक्रमम्।।४२।।
मर्यादावरणे धाम्नि गोपुरोभयपार्श्वयोः।
शङ्खं चक्रं तथा स्थाप्य देवदेवायुधोत्तमौ।।४३।।
उपेन्द्रं गोपुरशिरोभागे स्थाप्य ततः परम्।
आग्नेयादिक्रमेणैव प्राकृतादीन् प्रकल्पयेत्।।४४।।
उपेन्द्रः प्राकृतः पुण्यः पुष्करो विश्वभावनः।
असुरघ्नः कृतान्तश्च भूतनाथोऽष्टमः स्मृतः।।४५।।
अङ्गणे पीठिकास्थाने कुमुदादीन् प्रकल्पयेत्।
कुमुदः कुमुदाक्षश्च पुण्डरीकाश्च वामनः।।४६।।

शङ्कुकर्णः सर्पनेत्रः सुमुखस्सुप्रतिष्ठितः।
विष्वक्सेनं तदाग्नेय्यां क्षेत्रपालं खगेश्वरम्।।४७।।
प्रधानवेद्यभिमुखं कल्पयेत्कुम्भसंभव।
महापीठं च तत्रैव ध्वजयष्टिं च शार्ङ्गिणः।।४८।।

मन्दिर में द्वितीय आवरणास्थ परिवार देवों के स्थान

दूसरे आवरण के सभी परिवार यथाक्रम ज्ञेय हैं। मर्यादा आवरण के धाम में, गोपुर के दोनों पर्श्वों में शंख, चक्र विष्णु के उत्तम आयुधों की स्थापना करें। गोपुर शीर्ष स्थान में इन्द्र की स्थापना करें। आग्नेय आदि के क्रम से प्रकृति आदि की स्थापना करें। इन्द्र प्राकृत पुण्य पुष्कर विश्वभाव असुरघ्न वृत्तान्त और भूतनाथ अष्टम हैं। आंगन के पीठिका स्थान में कुमुद आदि की स्थापना करें। कुमुद, कुमुदाक्ष, पुण्डरीक, वायन, शंकुकर्ण, सर्पनेत्र, सुमुख की प्रतिष्ठा करें। आग्नेयकोण में विष्वक्सेन, क्षेत्रपाल और गरुड़ को स्थापित करें। प्रधान वेदी के सामने महापीठ बनाकर विष्णु की ध्वज यष्टि को गाड़े।

आलये महानसादिस्थाननिर्देशः

प्रथमावरणे वापि द्वितीयावरणेऽपि वा।
तृतीयावरणे वापि पाकस्थानं प्रकल्पयेत्।।४९।।
वारुणे वाऽथवा सौम्ये कूपं शार्वेऽपि वा भवेत्।
यत्र वाऽपां रसास्सन्ति तत्र कूपं प्रकल्पयेत्।।५०।।

आलय में महानस आदि स्थान निर्देश

प्रथम आवरण में या द्वितीय आवरण में या तृतीय आवरण में पाकशाला बनावें। पश्चिम में या उत्तर में या ईशान में या जहाँ जल हो वहाँ कुएँ की कल्पना करें।

त्रिविधं वैष्णवविमानम्

नागरं द्राविडं चेति वेसरं च त्रिधा मतम्।
विमानं देवदेवस्य विमलं वैष्णवं स्मृतम्।।५१।।

।। इति भार्गवतन्त्रे तृतीयोऽध्यायः।।

तीन प्रकार के वैष्णव विमान

वैष्णव विमान नागर, द्राविड़ और वेसर तीन प्रकार के होते हैं। देवदेव के विमान को विमल वैष्णव कहते हैं।

।।श्रीभार्गवतन्त्र के तृतीय अध्याय सम्पूर्ण।।

▼

चतुर्थोऽध्यायः

प्रतिमाङ्गमानादिनिरूपणाध्यायः

प्रतिमानिर्माणविषये सामान्यजिज्ञासा

अगस्त्यः

कथं वा वासुदेवस्य निर्मेया प्रतिमा हरेः।
कति भेदानि बिम्बानां ब्रूहि मे कृपया प्रभो।।१।।

प्रतिमा के अंगों के मानादि का निरूपण

प्रतिमा निर्माण के विषय में सामान्य जिज्ञासा

अगस्त्य ने कहा कि वासुदेव की प्रतिमा का निर्माण कैसा होता है? उसके कितने भेद होते हैं? हे प्रभो! कृपा करके मुझे बतलाइये।

रेण्वादिमानविशेषाणां लक्षणम्

रामः

वातायनपथं प्राप्य ये भान्ति रविरश्मयः।
तेषु सूक्ष्मा विसर्पन्ति रेणवः परमाणवः।।२।।
परमाणुरजः केशलीक्षायूकयवाष्टकैः।
लब्धं मानाङ्गुलं शालित्रिभिर्मानान्तराङ्गुलम्।।३।।
आचार्यदक्षिणकरे मध्यमाङ्गुलमध्यमे।
पर्वणोरन्तरं दीर्घं मात्राङ्गुलमुदाहृतम्।।४।।
विनाङ्गुष्ठेन शेषाभिः मुष्टिमङ्गुलिभिः कृतम्।
चतुर्धा विभजेदेको भागो मुष्ट्यङ्गुलिः स्मृता।।५।।
यत्किञ्चित् प्रतिमामानं विभज्य दशधा पुनः।
एकं द्वादशधा लब्धं देहलब्धाङ्गुलं भवेत्।।६।।

रेणु आदि मान विशेषों के लक्षण

खिड़की से जो सूर्य रश्मियाँ आकर कमरे में भासती हैं, उनमें सूक्ष्म रेणु परमाणु चलते रहते हैं। इसी रेणु को परमाणु कहते हैं। परमाणु रज, केश, लीक्षायूक यव में आठ यव का एक अंगुल मान होता है। अंगुल मान ज्ञान होने पर तीन चावल का अंगुल भी माना जाता है। आचार्य के दाएँ हाथ की मध्यमा अंगुली के मध्य पर्व की लम्बाई को अंगुल मान कहा जाता है। अंगूठे को छोड़कर शेष चारों अंगुलियों की मुट्ठी मान को चार भाग में करने पर एक भाग

को मुट्ठी अंगुलमान कहते हैं। प्रतिमामान जो भी हो उसका दश भाग करके उसके एक भाग को बारह भागों में बाँटने पर देह लब्ध अंगुल मान होता है।

उपादानद्रव्यभेदानुसारं सप्तविधानि बिम्बानि

रत्नजं शैलजं बिम्बं दारुजं लोहजं तथा।
मृत्त्रैवस्तुकयोर्बिम्बं चित्रजं चेति सप्तधा।।७।।

उपादान द्रव्य भेद के अनुसार सात प्रकार की मूर्त्तियाँ

रत्नज, शैलज, दारुज, लौहज, पार्थिव, त्रैवस्तुज और चित्रज सात प्रकार की मूर्त्तियाँ होती हैं।

बिम्बोत्सेधविषये उत्तमः पक्षः

बिम्बानि वासुदेवस्य कथ्यन्ते कलशोद्भव।
तत्र प्रतिकृतेस्तावत्तदङ्गानां च कथ्यते।।८।।
उत्सेधमानं मूर्धादिपादान्तमनुपूर्वशः।
लब्धानां देहतस्तावत् अङ्गुलीनां शतेन च।।९।।
चतुर्विंशति मानेन प्रतिमां परिकल्पयेत्।

प्रतिमा उत्सेध विषयक उत्तम पक्ष

वासुदेव की मूर्ति को अगस्त्य कहता हूँ। उसमें प्रतिकृति के अंगों को कहता हूँ। उत्सेध मान मूर्धा से पैरों तक आनुपूर्वी के साथ कहता हूँ। एक सौ चौबीस अंगुल मान की प्रतिमा बनाना चाहिये।

प्रतिमायाः तत्तदङ्गमाननिर्देशः

उष्णीषमङ्गुलमितं केशान्तं त्र्यङ्गुलं मतम्।।१०।।
दृक्सूत्रान्तं तदारभ्य षट्त्रिंशत् यवसम्मितम्।
तद्वन्नासापुटान्तं स्यात् तद्वच्च चिबुकावधि।।११।।
तेन केशान्तमारभ्य मुखमानं मुनीश्वर।
अष्टोत्तरयवशतं चिबुकावयवावधि।।१२।।
गलमर्धाङ्गुलं सार्धं त्र्यङ्गुलं कण्ठमिष्यते।
हिक्कासूत्रं समारभ्य हृदयान्तं मुखेरितम्।।१३।।
ततः प्रभृति नाभ्यन्तं सार्धं सत्रिदशाङ्गुलम्।
ततः प्रभृति मेढ्रान्तं तद्वदुत्सेधमिष्यते।।१४।।
तन्मूलाज्जानुपर्यन्तं त्रिन्यूनं त्रिदशाङ्गुलम्।
चतुरङ्गुलमुत्सेधं जानुमण्डलमिष्यते।।१५।।

जानोरधस्तादक्षान्तमूरुमानमुदीरितम्
ततस्तालान्तमुत्सेधं चतुरङ्गुलसम्मितम्।।१६।।

प्रतिमा के अंगों के मान का निर्देश

एक अंगुल का उष्णीष, केशान्त तीन अंगुल मान का होना चाहिये। दृक्सूत्रान्त से लेकर छत्तीस यव के बराबर हो। उसी मान का नासापुटान्त, उसी मान का चिबुक तक होना चाहिये। मुनीश्वर अगस्त्य केशान्त से आरम्भ करके चिबुक अवयव तक एक सौ आठ यव का मुख मान होता है। आधे अंगुल का गला, साढ़े तीन अंगुल का कंठ होता है। हिक्कासूत्र से लेकर हृदय तक मुख होता है। वहाँ से नाभि तक साढ़े तेरह अंगुल का मान होता है। वहाँ से मेढ्र तक का उत्सेध भी साढ़े तेरह अंगुल का होता है। लिंगमूल से लेकर घुटने तक का मान तेरह अंगुल होता है। जानु मण्डल का उत्सेध चार अंगुल का होता है। जानु के नीचे दक्षान्त उरु मान कहता हूँ। तालान्त तक उत्सेध मान चार अंगुल होता है।

बिम्बोत्सेधविषये मध्यमपक्षः

देहलब्धानि यावन्ति दशतालेऽभिपूजिते।
विभज्य तावदुक्तानि मध्यमे प्रतिमाविधौ।।१७।।
त्रयोदशाङ्गुलं वक्त्रं त्रिस्थाने चतुरङ्गुलम्।
षड्विंशत्यङ्गुलोत्सेधमूरुमानमुदाहृतम्।।१८।।
तद्वज्जङ्धासमुत्सेधमुत्तरेणेतरत्समम्।

प्रतिमा उत्सेध विषयक मध्यम पक्ष

दशताल अर्थात् एक सौ बीस अंगुल मान की प्रतिमा मध्यम होती है। मध्यम प्रतिमा को उपरोक्त भागों में बाँटे। तेरह अंगुल का मुखमान, तीन स्थान में चार अंगुल उसका मान एक सौ छब्बीस अंगुल होता है उतना ही जंघा का उत्सेध होता है।

बिम्बोत्सेधविषये अधमः पक्षः तत्तदङ्गविस्तारादिकं च

अधमे दशताले तु मुखं शतयवं मतम्।।१९।।
त्रिस्थाने तावदेव स्यात् ऊरुर्यवशतद्वयम्।
जङ्घा च तत्समोत्सेधा मुख्येनान्यत्समं स्मृतम्।।२०।।
विंशद्यवशतं पादं द्राघिमा कमलापतेः।
अगुष्ठम् वेदमानं स्यात् तदायामा च तर्जनी।।२१।।

एकत्रिंशद्यवायामा मध्यमाङ्गुलिरिष्यते।
त्रिंशद्यवानामिका स्यात्कनिष्ठा त्र्यङ्गुलात्मिका।।२२।।
यवैश्च पञ्चभिर्युक्ता पार्ष्णी च चतुरङ्गुला।
हिक्कान्तयोरधो बाहुरङ्गुलिस्सप्तविंशतिः।।२३।।
ततश्च मणिबन्धान्तं षड्विंशत्यङ्गुलायतम्।
यवद्वयेन च युतं मणिबन्धात्तलं पुनः।।२४।।
मध्यमाङ्गुलिपर्यन्तम् अङ्गुलं सप्त कथ्यते।
पञ्चाङ्गुलमथाङ्गुष्ठं तर्जनी तद्वदायता।।२५।।
षड्यवैश्चाधिकायामा मध्यमा तु षडङ्गुला।
आयता षड्यवैश्चापि तर्जन्यानामिका समा।।२६।।
कनिष्ठाङ्गुष्ठतुलिता मांसलग्नं नखं स्मृतम्।
एकाङ्गुला नखायामा शिष्टा षड्यवसम्मिता।।२७।।

प्रतिमा उत्सेध विषयक अधमपक्ष उसके अंग विस्तारादि

अधम प्रतिमा एक सौ सोलह अंगुल और उसका मुख एक सौ यव का होता है। तीन स्थान एक-एक सौ यव के और उरु दो सौ यव का होता है। जंघा का उत्सेध भी दो सौ यव का होता है। मुख्य अन्य उसी के बराबर होते हैं। कमलापति के पैर एक सौ यव के होते हैं। अंगूठे चार अंगुल के और तर्जनी भी चार अंगुल के होते हैं। मध्यमा अंगुली एकतीस अंगुल की होती है। अनामिका की लम्बाई तीस यव की होती है। कनिष्ठा की लम्बाई तीन अंगुल की होती है। चार अंगुल पाँच यव लम्बी पार्ष्णी होती है। हिक्का से लेकर बाहु तक की लम्बाई सतहत्तर अंगुली होती है। वहाँ से मणिबन्ध तक की लम्बाई छब्बीस अंगुल होती है। करतल छब्बीस अंगुल दो यव का होता है। मध्यमा अंगुली तक की आयत सात अंगुल होता है। अंगूठा और तर्जनी की लम्बाई पाँच अंगुल होती है। मध्यमा अंगुली की लम्बाई छः अंगुल छः यव की होती है। छः अंगुल की तर्जनी और अनामिका होती है। कनिष्ठा अंगुष्ठ के समान मांस लग्न नख होते हैं। एक अंगुल छः यव नखों का आयाम होता है।

बाहुवच्चोपबंाहुः स्याच्चतुरङ्गुलमायतम्।
चतुर्यवं चोर्ध्वकण्ठं नालं पञ्चाङ्गुलायतम्।।२८।।
लिङ्गं पञ्चाङ्गुलायामं मुष्कं तु चतुरङ्गुलम्।
सार्धाष्टाङ्गुलविस्तारं ललाटं तदनन्तरम्।।२९।।

द्वादशाङ्गुलविस्तारं बालचन्द्रसमाकृतिः।
ततस्तु कर्णयोर्मध्यं सार्धं सत्रिदशाङ्गुलम्।।३०।।
दशाङ्गुलमधस्तस्य विस्तारं चिबुकस्य तु।
सपादं द्व्यङ्गुलं पूर्णं चापतुल्याकृतिर्भवेत्।।३१।।
मूलमध्याग्रविस्तारो ग्रीवायाः क्रमशो भवेत्।
नवाङ्गुलं तथैकोनं सार्धसप्ताङ्गुलं तथा।।३२।।
हिक्कान्ततोरधो बाहुर्मूलयोरन्तरं भवेत्।
यवैश्चतुर्भिर्विस्तीर्णं स चत्वारिंशदङ्गुलम्।।३३।।
कक्षयोर्मध्यविस्तारस्त्र्यङ्गुलः सार्धविंशतिः।
अष्टादशाङ्गुलं मानं स्तनयोरपि चान्तरम्।।३४।।
षोडशाङ्गुलविस्तारं तुन्दमध्यमुदाहृतम्।
अष्टादशाङ्गुला श्रोणिरधरोदरमिष्यते।।३५।।
कटिप्रदेशविस्तारस्त्र्यङ्गुलः सार्धविंशतिः।
ऊरुमूलस्य विस्तारस्सार्धं सत्रिदशांङ्गुलम्।।३६।।
अग्रमेकाङ्गुलं सार्धं द्व्यङ्गुलं मध्यमिष्यते।
द्व्यङ्गुलो मूलविस्तारो लिङ्गस्य समुदाहृतम्।।३७।।

बाहु उपबाहु का आयत चार अंगुल होता है। ऊर्ध्व कण्ठ चार यव का और नाल का आयत पाँच अंगुल होता है। लिंग का आयाम पाँच अंगुल और मुष्क चार अंगुल का होता है। ललाट का विस्तार साढ़े आठ अंगुल होता है। बारह अंगुल विस्तार बालचन्द्र की आकृति की होती है। वर्ध और कान के मध्य का विस्तार साढ़े तेरह अंगुल होता है। उसमें दश अंगुल नीचे चिबुक का विस्तार होता है। आकृति सवा दो अंगुल की पूर्ण धनुष के समान होती है। गर्दन के मूल, मध्य, अग्र का विस्तार क्रमशः नव अंगुल, आठ अंगुल और साढ़े सात अंगुल होता है। हिक्कान्त के नीचे और बाहुमूल के बीच का अन्तर चालीस अंगुल चार यव होता है। कक्ष मध्य का विस्तार साढ़े तेईस अंगुल होता है। स्तनों का अन्तर मान अट्ठारह अंगुल होता है। तोन्द के मध्य का विस्तार सोलह अंगुल होता है। श्रोणि के नीचे उदर का विस्तार अट्ठारह अंगुल होता है। कटि प्रदेश का विस्तार साढ़े तेईस अंगुल होता है। उस मूल का विस्तार साढ़े तेरह अंगुल होता है। अग्र एक अंगुल, मध्य ढाई अंगुल होता है। लिंगमूल

का विस्तार दो अंगुल होता है। तीन अंगुल विस्तीर्ण होता है। मूल और मध्य आधा अंगुल अधिक होते हैं। मूल दो अंगुल विस्तीर्ण होता है।

विस्तीर्णं त्र्यङ्गुलं मूलं मध्यमर्धाधिकं पुनः।
विस्तीर्णमग्रमुष्कस्य द्वात्रिंशद्यवसम्मितम्।।३८।।
विस्तीर्णमेकादशभिरङ्गुलैरूरुमध्यमम्।
अग्रं दशभिरेव स्यात् विस्तीर्णं कलशोद्भव।।३९।।
नवाङ्गुलं जानुचक्रं सार्धमर्धेन्दुसन्निभम्।
मूलं नवाष्टौ मध्ये स्याज्जङ्घाग्रं सार्धसप्तकम्।।४०।।
विस्तीर्णो नालिकाभागः सार्धैश्च चतुरङ्गुलैः।
अङ्घ्रिमूलस्य विस्तारस्त्र्यङ्गुलस्सचतुर्यवः।।४१।।

मूल तीन अंगुल विस्तृत और साढ़े तीन अंगुल होता है। अग्रमुष्क बत्तीस यव विस्तीर्ण होता है। उरुमध्य ग्यारह अंगुल विस्तीर्ण और अग्र दश अंगुल विस्तृत होता है। घुटना चक्र साढ़े नव अंगुल अर्धचन्द्र के समान होता है। मूल नव अंगुल, मध्य आठ अंगुल, जानु जंघाग्र साढ़े सात अंगुल का होता है। नलिका का अग्रभाग साढ़े चार अंगुल विस्तीर्ण होता है। पादमूल तीन अंगुल चार यव होता है।

सार्धपञ्चाङ्गुलं मध्यमग्रं सार्धषडङ्गुलम्।
सार्धमष्टाङ्गुलं मूलं बाहू सप्ताङ्गुलौ पुनः।।४२।।
मध्येऽग्रे तुल्यविस्तारे प्रकोष्ठावयवं पुनः।
सार्धेन सप्तभिर्मूले विस्तीर्णं सार्धपञ्चभिः।।४३।।
मध्ये चतुर्भिरग्रे स्यान्मणिबन्धस्य तूच्यते।
पञ्चाङ्गुलार्धसहितस्तद्वत् करतलं स्मृतम्।।४४।।
अङ्गुष्ठे मूलविस्तारो द्व्यङ्गुलो मध्यमाङ्गुलम्।
सषड्यवममुष्याग्रमङ्गुलेनैव सम्मतम्।।४५।।
तर्जन्या मूलविस्तारो नवभिः सम्मितो यवैः।
मध्यमेकाङ्गुलं सप्त यवमग्रमुदाहृतम्।।४६।।
मूलं दशयवं मध्यं मध्यमायाः यवा नव।
अग्रमेकाङ्गुलं प्रोक्तमितरा तर्जनी समा।।४७।।
मूलमष्टौ कनिष्ठायाः यवाः सप्तैव मध्यमे।
षड्यवोऽग्रेऽङ्गुलाग्रेभ्यः पादोना नखविस्तृतिः।।४८।।

साढ़े पाँच अंगुल मध्य और अग्र साढ़े छः अंगुल होता है। मूल साढ़े आठ अंगुल पुनः बाहु सात अंगुल होता है। मध्य और अग्र बराबर होते हैं, पुनः प्रकोष्ठ अवयव का विस्तार मूल साढ़े सात अंगुल और विस्तीर्ण साढ़े पाँच अंगुल होता है। मध्य चार अंगुल और अग्र मणिबन्ध तक होता है। साढ़े पाँच अंगुल के हाथ और करतल इनके समान ही होते हैं। अंगूठे के मूल का विस्तार दो अंगुल मध्यम अंगुल है। एक अंगुल छः यव का मुष्याग्र सम्मत है। तर्जनी मूल का विस्तार नव यव है। मध्य भाग एक अंगुल सात यव का होता है। मध्यमा का मूल दश यव और मध्य नव यव होता है। अग्र एक अंगुल का होता है। इतरा तर्जनी के बराबर होती है। कनिष्ठा मूल आठ यव और मध्य सात यव होता है। अग्र छः यव का होता है। अंगुल का चतुर्थांश नख की विस्तृति होती है।

मध्ये करतले रेखा मध्यमामूलमास्थिता।
कनिष्ठामूलमारभ्य रेखा मध्यमगा भवेत्।।४९।।
मध्यमाङ्गुलितर्जन्योर्निमातव्या विचक्षणैः।
अङ्गुष्ठमूलमारभ्य तर्जन्यन्तश्च मध्यमा।।५०।।
तयोश्च रेखयोर्मध्ये तर्जनी मूलगामिनी।
रेखा कल्प्या यथाशास्त्रं शास्त्राभिज्ञेन शिल्पिना।।५१।।
ललाटस्य च विस्तारस्सपादस्त्र्यङ्गुलो भवेत्।
तस्याधस्ताद्भ्रुवौ कल्प्यौ चत्वारिंशद्यवायतौ।।५२।।

करतल के मध्य में रेखा मध्यमा मूल में रहती है। कनिष्ठामूल से चलकर रेखा मध्यमगा होती है। मध्यमा अंगुली से तर्जनी तक विचक्षण निर्माता करें। अंगुष्ठ मूल से आरम्भ करके तर्जनी तक मध्यमा रेखा होती है। उसमें रेखा के मध्य से तर्जनी मूल तक जाती है। शास्त्र के जानकार शिल्पी को यथाशास्त्र रेखा बनाना चाहिये। ललाट का विस्तार सवा तीन अंगुल होता है। उसके नीचे भृकुटियाँ चौवालिस यव लम्बी होती हैं।

मध्ये यवेन विस्तीर्णे यूकाग्रे चापसन्निभे।
तयोर्मध्यं नव यवम् अष्टादशयवायतम्।।५३।।
चक्षुःकनीनिकायामो विस्तारश्च यवः स्मृतः।
अङ्गुलं श्वेतबिम्बस्य विस्तारं कृष्णमण्डलम्।।५४।।
यवोनमङ्गुलं ज्योतिस्तन्मध्ये यवसम्मितम्।
यूकमानं तु तन्मध्ये दृष्टिः पक्ष्मावली पुनः।।५५।।

अशीति पक्ष्मरोमाणि वक्त्राग्राण्यसितानि च।
द्व्यङ्गुलं चक्षुषोर्मध्यं मध्यं च श्रुत्यपाङ्गयोः।।५६।।
चत्वारिंशद्यवं कर्णविस्तारो द्व्यङ्गुलो भवेत्।
ऊर्ध्वकर्णस्य चायामस्सहार्धचतुरङ्गुलः।।५७।।
नालं पञ्चाङ्गुलमितं विस्तारः षड्यवं पुनः।
पश्चाच्चतुर्यवा पाली नालतुल्यं प्रकल्पयेत्।।५८।।
श्रवणस्य च पिप्पल्या मध्यगर्तं चतुर्यवम्।
त्रिवक्रकर्णपिप्पल्या गल्लपात्रमिव स्थितम्।।५९।।
बन्धनं त्र्यङ्गुलं रन्ध्रं नेत्रसूत्रसमुन्नतम्।
नासिकामूलमध्याग्रविस्तारः कथ्यते क्रमात्।।६०।।

भृकुटी मध्य ये यव भर विस्तृत होती हैं। यूकाग्र में धनुषाकार होती हैं। उनके मध्य नव यव का और आयत दश यव होता है। चक्षुओं का कनीनिका आयत विस्तार यव भर होता है। नेत्र में श्वेत भाग का विस्तार एक अंगुल, काले भाग का विस्तार अंगुल में एक यव का होता है। उसके मध्य में ज्योति यव भर होता है। उसके मध्य में दृष्टिमान एक यूक होता है। पक्ष्मावलि अशी रोम होते हैं। उनके अग्रभाग काले होते हैं। नेत्रों के मध्य दो अंगुल होते हैं। कान के अपांग का मध्य चालीस यव और विस्तार दो अंगुल होता है। कान के ऊपरी भाग का आयाम साढ़े चार अंगुल होता है। पाच अंगुल का नाल विस्तार छः यव होता है। कान का पिछला भाग चार यव और पाली नाल के बराबर होती है। कान की पिप्पली का मध्यगर्त चार यव होता है। तीन वक्र कर्ण पिप्पली गल्ल पात्र के समान होता है। बन्धन तीन अंगुल और रन्ध्र नेत्र सूत्र के बराबर उन्नत होता है। अब नासिका मूल, मध्य, अग्र के विस्तार को क्रम से कहता हूँ।

अङ्गुलं चाङ्गुलं सार्धं द्व्यङ्गुलं सचतुर्यवम्।
अङ्गुलेनोन्नतं मूलं तेन सार्धेन मध्यमम्।।६१।।
द्वाभ्यां यवाभ्यां मूलेन द्व्यङ्गुलेनाग्रमुत्तमम्।
षड्यवं सुषिरं तस्य पुटमध्यं चतुर्यवम्।।६२।।
पुटपार्श्वस्य विस्तारो द्वियवः परिकीर्तितः।
उत्सेधोऽर्धाङ्गुलस्तस्य नासिका तिलपुष्पवत्।।६३।।
उत्तरोष्ठायतं सार्धं चतुरङ्गुलमिष्यते।
विस्तारोऽर्धाङ्गुलस्तस्य पर सार्धाङ्गुलायतम्।।६४।।

विस्तीर्णमङ्गुलं तस्य पाली चैकयवायता।
चिबुकोऽष्टादशयवः विस्तारायामसम्मितः।।६५।।
गुल्फं पादाङ्गुलोत्सेधं दर्पणोदरसन्निभम्।
विस्तीर्णावयवौ तुल्यौ राजदन्तौ चतुर्यवौ।।६६।।
द्वात्रिंशद्दशनाः कल्प्याः यथाशास्त्रं विचक्षणैः।
जिह्वा षडङ्गुलायामा विस्तीर्णा त्र्यङ्गुलैर्भवेत्।।६७।।

एक अंगुल, डेढ़ अंगुल, दो अंगुल, चार यव, एक अंगुल उच्च उसका आधा मध्य होता है। मूल से दो यव दो अंगुल दो यव अग्र उत्तम होता है। उसका रन्ध्र छः यव और पुट मध्य चार यव होता है। नासापुट का विस्तार दो यव होता है! उत्सेध अंगुल भर होता है। नासिका तिल पुष्प के समान होती है। ऊपर के ओठ का आयत साढ़े चार अंगुल होता है। विस्तार आधा अंगुल और डेढ़ अंगुल का आयत होता है। उसका विस्तार एक अंगुल पाली का आयत एक यव होता है। चिबुक के अट्ठारह यव का विस्तार आयाम सम्मत होता है। गुल्फ और पैरों की अंगुलियों का उत्सेध दर्पण के समान होता है। अवयव के तुल्य विस्तीर्ण होता है। राजदन्त चार यव का होता है। बत्तीस दाँत यथाशास्त्र कल्पित करें। जीभ का आयाम छः अंगुल और विस्तार तीन अंगुल होता है।

रेखात्रयाङ्किता ग्रीवा हिक्कासूत्रात् स्तनस्थितिः।
एकादशाङ्गुलं वृत्तं द्व्यङ्गुलं स्तनमण्डलम्।।६८।।
चतुर्यवं चूचुकं स्यात् स्तनमण्डलमध्यगम्।
चतुर्यवं नाभिगर्तं दक्षिणावर्तमिष्यते।।६९।।
अध्यर्धमङ्गुलं वृत्तमक्षमर्धाङ्गुलोन्नतम्।
उष्णीषात्पृष्ठकेशान्तमेकाधिकदशाङ्गुलम् ।।७०।।
उष्णीषात्पार्श्वकेशान्तं द्वादशाङ्गुलमानकम्।
कर्णयोरन्तरं विद्यात् सार्धं सत्रिदशाङ्गुलम्।।७१।।
मूलमध्याग्रभागेषु पृष्ठग्रीवा यथाक्रमम्।
विस्तीर्णा नवभिः सार्धैरङ्गुलैर्नवभिस्तथा।।७२।।
अष्टभिश्च भवेत्तस्या अधस्तात् ककुदस्थितिः।
आयामोत्सेधविस्तारैः ककुदन्तं चतुर्यवम्।।७३।।
षट्त्रिंशदङ्गुलं बाह्वोर्मध्यं विस्तार पृष्ठतः।
षड्विंशतिश्चाङ्गुलानां कक्षयोरन्तरं भवेत्।।७४।।

पृष्ठमध्यस्य विस्तारो ब्रह्मन् सप्तदशाङ्गुलः।
विस्तीर्णौ पञ्चविंशत्या श्रोणीपार्श्वौ तथाङ्गुलैः।।७५।।

ग्रीवा तीन रेखाओं से युक्त और हिक्कासूत्र में स्तन स्थिति होती है। स्तन का घेरा ग्यारह अंगुल और दो अंगुल का स्तन मण्डल होता है। चार यव का चुचुक स्तन मण्डल मध्य में होता है। नाभिगर्त चार यव का दक्षिणावर्त होता है। आधा अंगुल वृत्त आधा अंगुल उन्नत अक्ष होता है। उष्णीश से पीठ केश तक ग्यारह अंगुल होता है। उष्णीश से पार्श्व केश तक का मान बारह अंगुल होता है। कानों का अन्तर साढ़े तेरह अंगुल होता है। मूल मध्य अग्र भागों में पीठ ग्रीवा यथाक्रम होते हैं। इनका विस्तार नव और साढ़े नव अंगुल होते हैं। नीचे से ककुद की स्थिति आठ अंगुल होती है। ककुद आयाम उत्सेध ककुद के अन्त तक चार यव होता है। पीठ से बाहु मध्य का विस्तार छत्तीस अंगुल होता है। कक्षों का अन्तर छब्बीस अंगुल होता है। पीठ मध्य का विस्तार सत्तरह अंगुल होता है। श्रोणि पार्श्व पच्चीस अंगुल विस्तृत होते हैं।

कटिप्रदेशविस्तारष्षड्विंशत्यङ्गुलो भवेत्।
षट्त्रिंशदङ्गुलं मध्ये ककुदस्य कटेस्तथा।।७६।।
द्व्यङ्गुलोन्नतिरेतस्य स्फीतौ तन्मध्यमाङ्गुलम्।
अष्टाङ्गुलं स्तने मूलं मध्यं सप्ताङ्गुलं भवेत्।।७७।।
अग्र्यं त्र्यङ्गुलविस्तारम् ऊर्वोर्मूलादिषु त्रिषु।
भवेत्क्रमेण विस्तारः सार्धः सत्रिदशाङ्गुलः।।७८।।
द्वादशाङ्गुलयुक्तः स्यात् तथैव द्वादशाङ्गुलः।
जान्वष्टाङ्गुलविस्तारं सार्धमष्टाङ्गुलं भवेत्।।७९।।
जङ्घामध्यस्य विस्तारो नलका चतुरङ्गुला।
चतुर्यवाधिका चैव गुल्फश्च चतुरङ्गुलः।।८०।।
विस्तारमानं त्रिगुणं सर्वेषां नहनं मतम्।
अभीतिदो वा वरदो मुख्यो वामेतरः करः।।८१।।
स्तनसूत्रसमं कार्यं अङ्गुलाग्रं करस्य तु।
तयोर्भवेदन्तरालं द्वादशाङ्गुलमानकम्।।८२।।

कटि प्रदेश का विस्तार छब्बीस अंगुल होता है। ककुद और कटि का मध्य छत्तीस अंगुल होता है। दो अंगुल उन्नत मध्यमा अंगुली के बराबर स्फूर्ति

होती है। स्तन का मूल आठ अंगुल और मध्य सात अंगुल होता है। अग्र का विस्तार तीन अंगुल होता है। उरु मूल में विस्तार तीन अंगुल होता है। क्रम से साढ़े तेरह अंगुल, बारह अंगुल होता है। जंघा मध्य के नलका विस्तार चार अंगुल होता है या इससे अधिक होता है। गुल्फ का विस्तार चार अंगुल होता है। इसका तिगुना सर्वो का विस्तार नहन के मत से है। हाथों में अभय और वर मुद्रायें होती हैं। स्तन सूत्र के समान हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग होते हैं। बारह अंगुल का अन्तर होता है।

प्रतिमाया: आभूषणानाम् विवरणम्

अङ्गुष्ठतर्जनीमध्ये सनालं कमलं भवेत्।
वरदे कमलाकारं लिखेत् करतलोदरे।।८३।।
अधोमुखे वामहस्ते मुख्ये कुर्याद्गदां शुभाम्।
जघन्ययोस्तु करयो: शङ्खं चक्रं निवेशयेत्।।८४।।
बाहुष्वष्टसु देवस्य तानि तान्यायुधान्यपि।
निवेशयेद्यथाकामं शिल्पशास्त्रविचक्षण:।।८५।।
किरीटं कुण्डले हारान् यज्ञसूत्राङ्गुलियके।
कौस्तुभं वनमालां च श्रीवत्सं दक्षिणोरसि।।८६।।
अङ्गदे कटके रम्ये काञ्चीदाम च नूपुरे।
दुकूलमन्तरीयं च सोत्तरीयं निवेशयेत्।।८७।।
देशकालोपलाल्यानि भूषणानि निवेशयेत्।

प्रतिमा के आभूषणों का विवरण

अंगूठे और तर्जनी के बीच में नाल सहित कमल होता है। करतल में वरद को कमल के आकार में बनावें। अधोमुख बांयें हाथ में गदा होती है। अन्य हाथों में शंख, चक्र का निवेश करें। आठों बाहुओं में देव के आयुधों का निवेश यथाक्रम शिल्पी करें। किरीट, कुण्डल, हार, जनेऊ, अंगूठी, कौस्तुभ, वनमाला और श्रीवत्स दाएँ उर में करें। अंगद, कटक सुन्दर कांची वस्त्र, नुपूर, दुपट्टा, अन्तरीय उत्तरीय का निवेश यथास्थान करें। देशकाल में उपलब्ध आभूषणों का निवेश करें।

भवगत: प्रतिमाया: आसीनादिस्वरूपविवेक:

आसीनं वा शयानं वा तिष्ठन्तं वा यथारुचि।।८८।।
आरुढं पक्षिराजे वा कल्पयेद्विष्णुविग्रहम्।

भगवत प्रतिमा के आसीन आदि स्वरूप विवेक

खड़ी, सोयी या बैठी या गरुड़ पर सवार विष्णु विग्रह की कल्पना करें।

प्रतिमाया: स्थापनस्थानविवेक:

एवं गर्भगृहे देवं ब्रह्मस्थाने निवेशयेत्।।८९।।
यद्वा दिव्ये मानुषे वा द्वारसूत्रे निवेशयेत्।
एवं संस्थापयेद्देवं प्रतिष्ठासमये सुधी:।।९०।।

प्रतिमा के स्थापन स्थान का विवेक

इस प्रकार देव प्रतिमा का विनिवेश ब्रह्म स्थान में करें। दिव्य या मानुष का विनिवेश द्वारसूत्र में करें। इस प्रकार सुधी प्रतिष्ठा के समय में देव प्रतिमा का स्थापन करें।

देवीप्रतिमास्थापनस्थाननिर्देश:

अष्टौ देवी: श्रियाद्याश्च पार्श्वयोर्विनिवेशयेत्।
श्रीर्दक्षिणे धरा वामे देव्यौ देवस्य कल्पयेत्।।९१।।
रतिस्सरस्वती तुष्टिर्देव्यो देवस्य दक्षिणे।
कीर्ति: प्रीतिश्च शान्तिश्च वामे देवस्य संस्थिता:।।९२।।

देवी प्रतिमा स्थापन निर्देश

लक्ष्मी आदि आठों देवियों को पार्श्वों में स्थापित करें। दाएँ भाग में लक्ष्मी और बाएँ भाग में वसुधा को स्थापित करें। रति, सरस्वती, तुष्टि को देव के दाएँ भाग में और कीर्ति, प्रीति, शान्ति को देव के बाएँ भाग में स्थापित करें।

देव्या: संख्याविचार:

अष्टभिर्वा चतसृभिर्द्वाभ्यां यद्वैकयापि वा।
विना वा देवदेवेशं सश्रीवत्सं निवेशयेत्।।९३।।

देवियों की संख्या का विचार

देवियों की संख्या ८ या ४ या २ या १ या बिना किसी देवी के देव देवेश को श्रीवत्स युक्त विनिवेश करें।

देवीनां मूर्तिकल्पने विशेष:

देवीनान्तु श्रियादीनां विशेषश्चैष कल्पने।
रेखात्रयाङ्किता ग्रीवा हिक्कासूत्रात्स्तनस्थिति:।।९४।।

एकादशाङ्गुलं वृत्तं द्व्यङ्गुलं स्तनमण्डलम्।
चतुर्यवं चूचुकं स्यात् स्तनमण्डलमध्यगम्।।९५।।
अष्टादशाङ्गुलमुरस्स्तनयोरपि मण्डलम्।
अङ्गुलैः पञ्चदशभिः परिच्छिन्नं यथातथम्।।९६।।
नवाङ्गुलश्च विस्तारः उत्सेधश्चापि तादृशः।
द्वादशाङ्गुलविस्तारः स्तनयोर्मध्य इष्यते।।९७।।
कृष्णमण्डलविस्तारो द्व्यङ्गुलं परिकीर्तितम्।
श्रोणी षडङ्गुला यामा योनिस्सार्धाङ्गुलत्रयम्।।९८।।

देवियों की मूर्तियों के निर्माण में विशेष

देवियों में लक्ष्मी आदि की प्रतिमा कल्पना विशेष है। देवियों की ग्रीवा में तीन रेखायें होती हैं। हिक्कासूत्र से स्तनों की स्थिति होती है। स्तनों का वृत्त ग्यारह अंगुल और स्तन मण्डल दो अंगुल होता है। चार यव का चुचुक स्तन मण्डल के बीच में होता है। स्तन मण्डल वक्ष में अट्ठारह अंगुल का होता है पन्द्रह अंगुल परिच्छिन्न यथातथ होता है। स्तन का विस्तार और उत्सेध नव-नव अंगुल के होते हैं। स्तन मध्य की दूरी बारह अंगुल की होती है। कृष्ण मण्डल का विस्तार दो अंगुल का होता है। श्रोणी छः अंगुल की, योनि साढ़े तीन अंगुल की होती है।

देवीप्रतिमायाः आभूषणादिनिर्देशः

अबलानुगुणैरन्यैरम्बरैरपि भूषणैः।
भूषयेन्मकुटं यद्वा धम्मिलं वा प्रकल्पयेत्।।९९।।
अस्वतन्त्राः यदा देव्यः द्विभुजाः पार्श्वभूमिषु।
चतुर्भुजास्ताः स्वातन्त्र्ये द्विभुजा वा यथामति।।१००।।
दक्षिणेतरभागस्था दक्षिणे पुष्पधारिणी।
वामेतरस्थिता देवी वामे कमलधारिणी।।१०१।।
अन्येन चोरुविश्रान्ताः कल्पयेच्छिल्पतन्त्रवित्।

देवी प्रतिमा में आभूषण निर्देश

स्त्रियों के अनुगुण वस्त्र और अन्य भूषण होते हैं। मुकुट या धम्मिल कल्पित करें। देवी यदि अकेली नहीं हैं, तो पार्श्वों में दो भुजाएँ होती हैं। यदि स्वतन्त्र अकेली हैं, चार भुजाएँ या दो भुजाएँ होती हैं। ये मति के अनुसार

कल्पित होती है। देव के दक्षिण भाग से स्थित देवियों की स्थिति इस प्रकार की होती है। अन्य भाग में होने पर पुष्पधारिणी होती हैं। यह स्थिति देव के वाम भाग के अतिरिक्त अन्य भाग में रहने पर होती है। यदि देव के वाम भाग देवी की स्थापना होती है, तब वे कमलधारिणी होती हैं। अन्य उरु विस्तार आदि शिल्पतन्त्रज्ञ कल्पित करते हैं।

उत्सवादिप्रतिमोत्सेधादिविवरणम्

मूलबिम्बतृतीयांशसममुत्सवकौतुकम्।।१०२।।
स्नपनप्रतिमा चापि तदुत्सेधाः प्रकीर्तिताः।
बलिबिम्बप्रतिकृतिः शयनोत्थानकौतुकम्।।१०३।।
कर्मबिम्बं च निर्मेयं मूलतालप्रमाणतः।

उत्सवादि प्रतिमाओं के उत्सेध आदि के विवरण

मूल प्रतिमा के तृतीय अंश के बराबर उत्सव कौतुक मूर्ति होती है। स्नपन प्रतिमा का उत्सेध भी तृतीयांश ही होता है। बलि प्रतिमा शयन उत्थान कौतुक कर्म प्रतिमा का निर्माण मूल ताल प्रमाण से होता है।

अङ्गबिम्बकल्पनविचारः

ब्राह्मे भागे ध्रुवे न्यस्ते नैवाङ्गपरिकल्पना।।१०४।।
लौकिकेनैव बिम्बेन कुर्यान्नैमित्तिकं बुधः।
ध्रुवबेरार्धमानेन कौतुकं लोहनिर्मितम्।।१०५।।
लौकिकं तेन कुर्वीत सर्वां देवक्रियां सुधीः।
चक्रेण बलिदानं स्यात् तथा तीर्थावगाहनम्।।१०६।।
कूर्चेन शयनं कार्यं ब्राह्मे मूलार्चनाविधौ।
दैवे वा मानुष्ये स्थाप्ये ब्राह्मे कर्माणि विन्यसेत्।।१०७।।
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं सर्वं तेनैव पूर्यते।
स्थानयानासनविधौ ध्रुवबिम्बं यथाक्रमम्।।१०८।।
कर्मार्चादीनि तद्वत् स्याद्ध्रुवे तु शयिते पुनः।
तिष्ठेद्वासीत वा कामं कर्माद्यर्चा यथामति।।१०९।।
नित्योत्सवप्रतिकृतिः सर्वत्रैव स्थिता भवेत्।
कर्मादिबिम्बषट्कं च श्रीभूमिसहितं भवेत्।।११०।।
यद्वा श्रीभूमिसहितमेकं वा मखकौतुकम्।

अंग बिम्ब कल्पन विचार

अचल मूर्ति की स्थापना ब्राह्मभाग में होने पर अंगों की परिकल्पना नहीं होती। लौकिक मूर्ति से नैमित्तिक कार्य विद्वान् करते हैं। ध्रुव अचल प्रतिमा के आधे मान में लौह निर्मित कौतुक प्रतिमा होती है। लौकिक मूर्ति से ही सभी देव क्रियायें होती हैं। चक्र से बलिदान और तीर्थावगाहन होता है। ब्राह्म मूल प्रतिमा की अर्चन विधि से शयन कराया जाता है। दैव और मानुष्य प्रतिमा की स्थापना में ब्राह्म के समान क्रिया करें। नित्य नैमित्तिक काम्य सभी में उसी प्रक्रिया को अपनायें। ध्रुवबिम्ब के समान स्थानयान और आसन विधि अपनायें। कर्मार्चन आदि में उसी प्रकार ध्रुव के समान और शयित मूर्ति में यही प्रक्रिया होती है। खड़ी, बैठी या काम प्रतिमा अर्चा कर्म आदि यथामति करें। नित्योत्सव प्रतिकृति सर्वत्र बैठी हुई होती है। कर्मादि छः प्रतिमाएँ लक्ष्मी और वसुधा के साथ होती हैं। मखकौतुक में लक्ष्मी और वसुधा में से एक होती हैं।

पीठकल्पनप्रकार:

अर्चायामं त्रिधा कृत्वा पीठमेकेन कल्पयेत्।।१११।।
उपानहादिपञ्चाङ्गयुक्तं वृत्तं सुखावहम्।
अथवा चतुरश्रं वा विस्तारतुलितायति।।११२।।
पीठोत्सेधं त्रिधा कृत्वा पद्ममेकेन कल्पयेत्।
दलैर्द्वादशभिर्युक्तमष्टाभिर्वा यथारुचि।।११३।।
पादमानं दलायामं केवलं वा सरोरुहम्।
पीठं वा केवलं वापि कल्पयेत्कलशोद्भव।।११४।।
आसीनेऽश्रायतं यद्वा कुर्याद्वृत्तायतं तु वा।
प्रतिमार्धेन वा पीठं तृतीयांशेन वा तथा।।११५।।
पद्मं बहुदलैर्युक्तं कर्णिकाकेसरान्वितम्।
लम्बमानपदाधारं कमलं तत्र कल्पयेत्।।११६।।
सङ्कोचितप्रसव्याङ्घ्रेरितरं लम्बयेदधः।
मूलबेरत्रिपादेन पादेनार्धेन वा भवेत्।।११७।।
उच्छ्रायः परिवाराणाम् एवं वैकुण्ठभाषितम्।
अंसतुल्या हरेर्देवी ब्रह्माद्या परिवारवत्।।११८।।
बलिपीठानि सर्वाणि पिण्डिकामानमानतः।

कल्पित होती है। देव के दक्षिण भाग से स्थित देवियों की स्थिति इस प्रकार की होती है। अन्य भाग में होने पर पुष्पधारिणी होती हैं। यह स्थिति देव के वाम भाग के अतिरिक्त अन्य भाग में रहने पर होती है। यदि देव के वाम भाग देवी की स्थापना होती है, तब वे कमलधारिणी होती हैं। अन्य उरु विस्तार आदि शिल्पतन्त्रज्ञ कल्पित करते हैं।

उत्सवादिप्रतिमोत्सेधादिविवरणम्

मूलबिम्बतृतीयांशसममुत्सवकौतुकम्।।१०२।।
स्नपनप्रतिमा चापि तदुत्सेधाः प्रकीर्तिताः।
बलिबिम्बप्रतिकृतिः शयनोत्थानकौतुकम्।।१०३।।
कर्मबिम्बं च निर्मेयं मूलतालप्रमाणतः।

उत्सवादि प्रतिमाओं के उत्सेध आदि के विवरण

मूल प्रतिमा के तृतीय अंश के बराबर उत्सव कौतुक मूर्ति होती है। स्नपन प्रतिमा का उत्सेध भी तृतीयांश ही होता है। बलि प्रतिमा शयन उत्थान कौतुक कर्म प्रतिमा का निर्माण मूल ताल प्रमाण से होता है।

अङ्गबिम्बकल्पनविचारः

ब्राह्मे भागे ध्रुवे न्यस्ते नैवाङ्गपरिकल्पना।।१०४।।
लौकिकेनैव बिम्बेन कुर्यान्नैमित्तिकं बुधः।
ध्रुवबेरार्धमानेन कौतुकं लोहनिर्मितम्।।१०५।।
लौकिकं तेन कुर्वीत सर्वां देवक्रियां सुधीः।
चक्रेण बलिदानं स्यात् तथा तीर्थावगाहनम्।।१०६।।
कूर्चेन शयनं कार्यं ब्राह्मे मूलार्चनाविधौ।
दैवे वा मानुष्ये स्थाप्ये ब्राह्मे कर्माणि विन्यसेत्।।१०७।।
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं सर्वं तेनैव पूर्यते।
स्थानयानासनविधौ ध्रुवबिम्बं यथाक्रमम्।।१०८।।
कर्मार्चादीनि तद्वत् स्याद्ध्रुवे तु शयिते पुनः।
तिष्ठेद्वासीत वा कामं कर्माद्यर्चा यथामति।।१०९।।
नित्योत्सवप्रतिकृतिः सर्वत्रैव स्थिता भवेत्।
कर्मादिबिम्बषट्कं च श्रीभूमिसहितं भवेत्।।११०।।
यद्वा श्रीभूमिसहितमेकं वा मखकौतुकम्।

अंग बिम्ब कल्पन विचार

अचल मूर्ति की स्थापना ब्राह्मभाग में होने पर अंगों की परिकल्पना नहीं होती। लौकिक मूर्ति से नैमित्तिक कार्य विद्वान् करते हैं। ध्रुव अचल प्रतिमा के आधे मान में लौह निर्मित कौतुक प्रतिमा होती है। लौकिक मूर्ति से ही सभी देव क्रियायें होती हैं। चक्र से बलिदान और तीर्थावगाहन होता है। ब्राह्म मूल प्रतिमा की अर्चन विधि से शयन कराया जाता है। दैव और मानुष्य प्रतिमा की स्थापना में ब्राह्म के समान क्रिया करें। नित्य नैमित्तिक काम्य सभी में उसी प्रक्रिया को अपनायें। ध्रुवबिम्ब के समान स्थानयान और आसन विधि अपनायें। कर्मार्चन आदि में उसी प्रकार ध्रुव के समान और शयित मूर्ति में यही प्रक्रिया होती है। खड़ी, बैठी या काम प्रतिमा अर्चा कर्म आदि यथामति करें। नित्योत्सव प्रतिकृति सर्वत्र बैठी हुई होती है। कर्मादि छः प्रतिमाएँ लक्ष्मी और वसुधा के साथ होती हैं। मखकौतुक में लक्ष्मी और वसुधा में से एक होती हैं।

पीठकल्पनप्रकारः

अर्चायामं त्रिधा कृत्वा पीठमेकेन कल्पयेत्।।१११।।
उपानहादिपञ्चाङ्गयुक्तं वृत्तं सुखावहम्।
अथवा चतुरश्रं वा विस्तारतुलितायति।।११२।।
पीठोत्सेधं त्रिधा कृत्वा पद्ममेकेन कल्पयेत्।
दलैर्द्वादशभिर्युक्तमष्टाभिर्वा यथारुचि।।११३।।
पादमानं दलायामं केवलं वा सरोरुहम्।
पीठं वा केवलं वापि कल्पयेत्कलशोद्भव।।११४।।
आसीनेऽश्रायतं यद्वा कुर्याद्वृत्तायतं तु वा।
प्रतिमार्धेन वा पीठं तृतीयांशेन वा तथा।।११५।।
पद्मं बहुदलैर्युक्तं कर्णिकाकेसरान्वितम्।
लम्बमानपदाधारं कमलं तत्र कल्पयेत्।।११६।।
सङ्कोचितप्रसव्याङ्घ्रेरितरं लम्बयेदधः।
मूलबेरत्रिपादेन पादेनार्धेन वा भवेत्।।११७।।
उच्छ्रायः परिवाराणाम् एवं वैकुण्ठभाषितम्।
अंसतुल्या हरेर्देवी ब्रह्माद्या परिवारवत्।।११८।।
बलिपीठानि सर्वाणि पिण्डिकामानमानतः।

पीठ कल्पन प्रकार

अर्चा आयाम का तीन भाग करके एक में पीठ कल्पन करें। उपानह आदि पंचांग युक्त वृत्त सुखदायक होता है अथवा चतुरश्र विस्तार आयत के तुल्य होना चाहिये। पीठ के उत्सेध का तीन भाग करके एक भाग में कमल की कल्पना करें। यह कमल बारह दल का या आठ दल का यथारूचि बनावें। पादमान में कल्पित करें या दल के आयाम में या केवल कमल बनावें। हे अगस्त्य! अथवा केवल पीठ ही परिकल्पित करें। खड़े या सोये बिम्ब के लिये वृत्त या आयत बनावें। प्रतिमा का आधा या तीसरे अंश के बराबर पीठ बनावें। बहुत दलों से युक्त कर्णिका केसर अंकित लम्बमान पदाधार वहाँ कल्पित करें। संकोचित प्रसारित दूसरे पैर को लम्बमान करें। वैकुण्ठ भाषित परिवारों का उच्छ्राय इस प्रकार के होते हैं। शंकर और देवी के उच्छ्राय असंतुल्य, आद्य ब्रह्म के परिवार के समान होते हैं। सभी बलिपीठों का मान पिण्डिका मान के समान होता है।

विमाने कीलकल्पनाद्यवसर:

एवं प्रकल्प्य बिम्बानि विमाने कीलकल्पनम्।।११९।।
ततस्तु कलशन्यास: प्रतिष्ठा तदनन्तरम्।

।।इति भार्गवतन्त्रे चतुर्थोऽध्याय:।।

विमान में कील कल्पन आदि के अवसर

इस प्रकार प्रतिमा कल्पन के बाद विमान में कील कल्पन करें। इसके बाद कलश स्थापित करें, तब प्रतिष्ठा करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में चतुर्थ अध्याय सम्पूर्ण ।।

▼

पञ्चमोऽध्यायः

प्रतिष्ठाङ्गसंभारविवरणाध्यायः

प्रतिष्ठाक्रमे मण्डपादीनां कल्पनादिविषयक जिज्ञासा

अगस्त्यः

कथं नु भगवन् विष्णोः प्रतिष्ठां कारयेत्सुधीः।
संभाराः के च सम्भार्यास्तत्र योग्याः ब्रवीतु मे।।१।।

प्रतिष्ठा क्रम में मण्डपादि कल्पन आदि विषयक जिज्ञासा

अगस्त्य ने कहा कि भगवन विष्णु की प्रतिष्ठा विद्वान किस प्रकार करें? संभार कितने होते हैं? प्रतिष्ठा के योग्य उपचारों को हमे बतलाने की कृपा करें।

मण्डपकुण्डस्वरूपादिनिर्देशः

श्रीरामः

प्रासादस्याग्रतः कुर्यादधिवासनमण्डपम्।
प्रथमावरणे वापि द्वितीयावरणेऽपि वा।।२।।
तृतीयावरणे यद्वा देशे योग्यावकाशके।
बाहुदण्डैश्च दशभिश्चतुरश्रं मनोहरम्।।३।।
चतुर्द्वारसमायुक्तं कल्पयेच्छिल्पवित्तमः।
तन्मध्ये पञ्चभिर्हस्तैः चतुरश्रा मनोहरा।।४।।
हस्तोच्छ्रायाथवार्धेन चतुरश्रेष्टकाचिता।
तालत्रयात् बहिस्तस्याः कुण्डानि परिकल्पयेत्।।५।।
चतुरश्रं भवेत्प्राच्यां याम्ये चापसमाकृतिः।
वृत्तकुण्डं तु वारुण्यां सौम्ये कोणत्रयान्वितम्।।६।।
चतुर्विंशाङ्गुलं सूत्रं विस्तारायामसम्मितम्।
प्राग्भागे कल्पितं कुण्डं चतुरश्रं विधीयते।।७।।
षष्ठ्यङ्गुलं भवेच्चापं ज्या तु षट्त्रिंशदंगुला।
चापकुण्डं भवेदेतद्दक्षिणे वेदिका भुवः।।८।।
द्वात्रिंशदङ्गुलं सूत्रं त्रिगुणेन प्रकल्पयेत्।
उत्तरे वेदिकाभूमेः त्रिकोणं विद्यते स्फुटम्।।९।।

पक्षसंख्याङ्गुलं सूत्रं मध्यतो भ्रामयेद्यदि।
वृत्तकुण्डं भवेदेतद्वारुणे वेदिका भुवः।।१०।।
सूत्रपातं पुरा कृत्वा विंशत्या चतुरङ्गुलैः।
अगाधमवनीं खात्वा द्व्यङ्गुलं तद्बहिः पदे।।११।।

मण्डप कुण्ड स्वरूप आदि विषयक निर्देश

श्री परशुराम ने कहा कि मन्दिर के आगे अधिवास मण्डप बनावें। प्रथम आवरण में अथवा दूसरे आवरण में अथवा तीसरे आवरण में देशकाल के अनुसार बहुत खम्भों से या दश खम्भों से वर्गाकार मनोहर मण्डप बनावें। शिल्पज्ञ मण्डप में चार द्वार बराबर-बराबर दूरी पर बनावें। उसके मध्य में पाँच हाथ लम्बे चौड़े वर्गाकार मनोहर एक हाथ उच्च या आधे हाथ उच्च चार श्रेष्ठ कुण्ड बनावें। उसका बाहरी भाग तीन ताल का होना चाहिये। पूर्व दिशा का कुण्ड चतुरश्र, दक्षिण भाग का कुण्ड धनुषाकार बनावें। पश्चिम में गोलाकर कुण्ड बनावें। उत्तर दिशा का कुण्ड त्रिकोणाकार बनावें। कुण्ड के आयाम विस्तारसूत्र चौबीस अंगुल होते हैं। पूर्व भाग में कल्पित कुण्ड चतुरश्र होता है। वेदी के दक्षिण भाग में चाप कुण्ड साठ अंगुल का होता है। उसकी ज्या छत्तीस अंगुल की होती है। वेदी के उत्तर तरफ त्रिकोण कुण्ड होता है। इसका आयाम बत्तीस अंगुल का त्रिगुणित होता है। वेदी के पश्चिम में वृत्तकुण्ड होता है। पन्द्रह अंगुल के सूत्र को मध्य से घुमाने पर यह कुण्ड बनता है। पहले चौबीस अंगुल के सूत्र का पात करके भूमि को खोद कर उसके बाहर दो अंगुल का पद बनावें।

कुण्डमेखलाकल्पनप्रकारः

मेखलायास्त्रयं कुर्यात् दृढयेष्टकया सुधीः।
अथवा प्रकृतेर्बाह्ये चतुरङ्गुलमानतः।।१२।।
मेखलायास्त्रयं कुर्यात् सुपक्वेष्टकया दृढम्।
प्रथमा तालमाना स्यात् मध्यमाष्टाङ्गुलोन्नता।।१३।।
चतुरङ्गुलमानैव चरमा मेखला भवेत्।

कुण्ड में मेखला बनाने की विधि

कुण्डों में ईंटों में दृढ़ तीन मेखला बनावें अथवा प्रकृति के बाहर चार अंगुल के मान से बनावें। पके ईंटों से दृढ़ तीन मेखला बनावें। पहली मेखला की ऊँचाई ताल मान की होती है। बीच की मेखला आठ अंगुल उन्नत होती है। चरम तीसरी मेखला की ऊँचाई चार अंगुल की होती है।

कुण्डे योनिकल्पनक्रमः

पश्चिमे वाथवा याम्ये भागे योनिं प्रकल्पयेत्।।१४।।
पक्षसंख्याङ्गुलायामां काहलाकृतिसन्निभाम्।
मूलसूक्ष्मोर्ध्वविस्तीर्णां मध्ये निम्नां शिरो भुवि।।१५।।
अश्वत्थदलवद्दृश्यां प्रतिकुण्डं प्रकल्पयेत्।
मुमुक्षोर्नैव योनिः स्यात् कुण्डं वा सैकमेखलम्।।१६।।

कुण्ड में योनि निर्माण क्रम

पश्चिम या दक्षिण भाग में योनि बनावें। इसका आयाम पन्द्रह अंगुल और आकृति पीपल के पत्ते के समान होती है। मूल सूक्ष्म, ऊर्ध्व विस्तीर्ण और मध्य निम्न और शिर अधोमुखी होता है। पीपल के पत्ते के समान दीखती है। प्रत्येक कुण्ड में योनि बनावें। मुमुक्षुओं के कुंडों में योनि नहीं होती। मेखला भी एक ही होती है।

प्रपादिकल्पनक्रमनिर्देशः

प्रपां वा परिकुर्वीत चतुर्द्वारसमन्विताम्।
समध्यवेदिकुण्डाढ्यामैशान्यां स्नानमण्डपम्।।१७।।
अङ्कुरार्पणभूभागं कल्पयेत सुरक्षितम्।
दृढास्तिरस्करिण्यश्च बन्धनीया यथाविधि।।१८।।
द्विहस्ता वा त्रिहस्ता वा वेदिका स्नानमण्डपे।

प्रपादि कल्पन क्रम निर्देश

चार द्वारों वाला प्याऊ बनावें। ईशान में स्नान मण्डप बनावें। उसके मध्य में वेदीकुण्ड होना चाहिये। सुरक्षित अंकुरार्पण भूभाग कल्पित करें। दृढ़ तिरस्करिणी से उसे बाँधें। स्नान मण्डप में दो हाथ या तीन हाथ की वेदी बनावें।

स्रुक्स्रुवोः कल्पनप्रकारः

स्रुक्स्रुवौ कल्पनीयौ च रम्भापुष्पदलाननौ।।१९।।
सूच्यग्रे सूकरमुखं घृतकुल्या निवेशनम्।
सर्पिः कुण्डबभृद्वक्त्रं न सूकरमुखं स्रुवे।।२०।।
मुखादधस्तात् कण्ठं च बाहुदण्डायतावुभौ।
कन्दं वा कमलं वापि तयोर्मूले प्रकल्पयेत्।।२१।।

स्रुक, स्रुव कल्पन विचार

केले के फूल के आकार के स्रुक और स्रुव बनावें। वह सूकर मुख

सूच्यग्र हो। घृतकुल्या निवेश करें। सर्पिकुण्ड बभ्रुमुख हो। स्रुवा सूकर मुख नहीं होता। मुख के नीचे कण्ठ बनावें। दोनों के आयत बाहु दण्ड के बराबर होना चाहिये। उनके मूल में कन्द या कमल कल्पित करें।

तोरणस्नानपीठादिकल्पनक्रमः

तोरणानि च चत्वारि शूलत्रययुतानि च।
अधः शाखाविहीनानि कल्पयेत्कलशोद्भव।।२२।।
द्वाविंशत्यङ्गुलायामं तदर्धेन च विस्तृतम्।
घनं चापि तदर्धेन कल्पयेदष्टमङ्गुलम्।।२३।।
बिम्बप्रमाणानुगुणं स्नानपीठं प्रकल्पयेत्।
ऋत्विजां पूजकानां च देशिकस्यासनानि च।।२४।।

तोरण स्नान पीठ आदि के निर्माण क्रम

त्रिशूल युक्त चार तोरण बनावें। अगस्त्य उनका निम्न भाग शाखा रहित होना चाहिये। उनका आयाम बाईस अंगुल और विस्तार ग्यारह अंगुल होना चाहिये। उसका घन आठ अंगुल का बनावें। मूर्ति प्रमाण के अनुरूप स्नानपीठ बनावें। ऋत्विज पुजारी देशिक आचार्य के लिये स्थान बनावें।

पादुकादिसंभाराणां विवरणम्

पादुके पादसदृशौ सर्वं स्याद्यज्ञवृक्षजम्।
श्रीवत्सं पूर्णकुंभं च भेरीं दर्पणमण्डलम्।।२५।।
मत्स्ययुग्मं तथा शंखं चक्रं काश्यपनन्दन।
प्रत्येकमष्टावेतानि विलिखिदष्टमङ्गले।।२६।।
कूर्माकारं लिखेत्तत्तदासनेष्वधिकारिणाम्।
श्वेतौ रक्तौ तथा पीतौ नीलावष्टाविमे ध्वजाः।।२७।।
महाकुंभोपकुंभाश्च करकं मणिकं तथा।
कलशाश्चापि सम्भार्याः दीपस्तम्भास्तथा घृतम्।।२८।।
तैलं च दीपपात्राणि वर्तिनी सुगुणान्यपि।
चन्दनानि सुगन्धानि पुष्पाणि सुरभीणि च।।२९।।
वस्त्राणि च दुकूलानि कम्बलान्याविकानि च।
व्याघ्रकृष्णाजिनादीनि शोभनान्यक्षतानि च।।३०।।
समिधश्च कुशाः काशाः धान्यानि शयनासनम्।
शिरोपधानं गण्डूषं तूलिकारत्नकम्बलम्।।३१।।

विविधानि च धान्यानि रत्नानि विविधानि च।
स्वर्णादिसप्तलोहानि गाः सवत्साः मनोहराः।।३२।।
धूपद्रव्याणि कर्पूरं घनसारं च गुग्गुलम्।
ताम्बूलं क्रमुकं माला हाराश्च कुसुमैः कृताः।।३३।।
फलानि मकरन्दं च पयोदधि च शर्करा।
गुडं च नेत्र सामग्री शलाके द्वे च हेमजे।।३४।।
कुंभप्रतिकृतिः पञ्च भूषणानि च कङ्कणम्।
कटाहं च जलद्रोणी सौवर्णकमलानि च।।३५।।
तन्तवश्चापि कुंभानां पालिकाश्च घटादयः।
शरावाश्चापि सामान्या मृद्भाण्डानि शुभान्यपि।।३६।।

पादुका आदि संभारों का विवरण

पैरों के समान पादुका सभी यज्ञ वृक्षों में निर्मित होता है। श्रीवत्स पूर्ण कुंभ, ढोल, दर्पणमण्डल, मछली का जोड़ा, शंख, चक्र और गरुड़ आठों का अंकन मांगलिक अष्टगन्ध से होता है। उनके आसनों का निर्माण कछुए के आकार में होता है। श्वेत, लाल, पीला, नीला रंग की आठ ध्वजाएँ होती हैं। महाकुंभ, उपकुंभ, करक, मणिक, कलश आदि संभार दीपक, घी, तेल, दीपपात्र, बत्ती, सुगुण अन्य, चन्दन, सुगन्ध, सुगन्धित फूल, वस्त्र, गमछी, कम्बल अन्य बाघम्बर काला मृगचर्म, अन्य शोभन, अक्षत, समिधा, कुश, काश, धान्य, शयनासन, शिरोपधान, गण्डूष, तूलिका, रत्नकम्बल, विविध अन्न, विविध रत्न, स्वर्णादि सप्तलौह, सुन्दर सवत्सा गाय, धूप, द्रव्य, कपूर, घनसार, गुग्गुल, पान, क्रमुक माला, फूलों की माला, फल, मकरन्द, दूध, दही, शक्कर, गुड़, नेत्र सामग्री, सोने की दो शलाका आदि होना चाहिये। कुंभ प्रतिकृति, पाँच भूषण कंगन, कड़ाह, जलद्रोणी, सौवर्ण कमल धागा, घड़ा पालिका, घटादि, शराव, सामान्य मिट्टी बर्तन अन्य शुभ संभारों का होना आवश्यक है।

कन्यकारुचिराश्चापि रूपवत्यः स्वलङ्कृताः।
धूपपात्रं दीपपात्रं घण्टाकर्पूरपङ्कजम्।।३७।।
पाद्याचमनयोः पात्रमर्घ्यमावाहनाह्वयम्।
नैवेद्यपात्रं पानीयभाजनं च प्रतिग्रहम्।।३८।।
पादुकादर्पणं स्वर्णकङ्कतं घटदीपकम्।
नीराजनस्याञ्जनस्य बलिदानस्य भाजनम्।।३९।।

व्यजनं चातपत्रं च चामरं पुष्पभाजनम्।
पिटकानि खनित्रं च करीषं काष्ठसंचयः।।४०।।
हविः पात्रं मेक्षणं च धमन्यो व्यजनानि च।
आज्यपात्रं चरुस्थाली प्रणीता प्रोक्षणी तथा।।४१।।
अष्टबन्धनवस्तूनि लाङ्गलं हेमनिर्मितम्।
दक्षिणार्थं धनं पूर्णं वाद्यानि विविधान्यपि।।४२।।
रूपवत्यश्च गणिकाः नृत्तगीतविशारदाः।
वेदवेदाङ्गनिपुणाः ब्राह्मणाः भगवन्मयाः।।४३।।
यात्रापीठं च देवस्य यानानि विविधान्यपि।
बाहुप्रदीपाः विविधाः शुभदो मत्तवारणः।।४४।।
सूत्राण्यपि शलाकाश्च सम्भार्या यज्ञकर्मणि।

।।इति भार्गवतन्त्रे पञ्चमोऽध्यायः।।

सुन्दर कुमारी वस्त्राभूषण से अलंकृत होनी चाहिये। धूपदान, दीपदान, घण्टा, कपूर, कमल, पाद्य, आचमनीय अर्घ्यपात्र, आवाहनद्रव्य, नैवेद्य पात्र, पानीयभाजन, प्रतिग्रह, पादुका दर्पण, स्वर्णकंकत, घड़ा, दीपक, नीराजन पात्र, अंजन, बलिदान के पात्र, पंखा, चातपत्रं, चामर, फूल रखने का बर्तन, पिटका, खनिज, करीष, हवन की लकड़ी, पायसपात्र, मेक्षण, धमन व्यजनादि, आज्यपात्र, चरुस्थाली, प्रणीता, प्रोक्षणी, अष्टबन्धन वस्तु, लांगल, सोने का दक्षिणा के लिये धन, विविध प्रकार के बाजे, सुन्दर गणिका जो नृत्य-गीत विशारद हो। वेद वेदांग के जानकार भगवत भक्त ब्राह्मण, यात्रापीठ देव की सवारी विविध प्रकार की, बाहुप्रदीप जो कई प्रकार का शुभद हो। मतवाले हाथी, धागे, शलाका और यज्ञ कर्म के संभार आदि होना चाहिये।

।। श्रीभार्गवतन्त्र में पंचम अध्याय सम्पूर्ण।।

षष्ठोऽध्यायः

प्रतिष्ठाविषयविवेचनाध्यायः

प्रतिष्ठाविषयकजिज्ञासोपस्थापनम्

प्रतिष्ठा कीदृशी ब्रह्मन् प्रतिष्ठाता तु कीदृशः।
को वा कालः प्रतिष्ठायाः शुभदः सर्वदेहिनाम्।।१।।
कीदृशोऽप्यधिकारी वा कथं वा तत्समाप्यते।
जामदग्न्यपरं धामन् कृपया ब्रूहि मे प्रभो।।२।।

प्रतिष्ठा विषयक विवेचन

प्रतिष्ठा विषयक जिज्ञासा का उपस्थापन

अगस्त्य ने कहा कि ब्रह्मन प्रतिष्ठा कैसी होती है? प्रतिष्ठाता को कैसा होना चाहिये? प्रतिष्ठा का समय कौन होता है? जो सभी जीवों को शुभदायक हो, इसके अधिकारी कौन हैं? कैसे उसका समापन होता है? जामदग्न्य परमधाम राम प्रभो! कृपा करके मुझे बतलाइये।

प्रतिष्ठाक्रमे यजमानलक्षणम्

श्रीरामः

श्रद्धया परया युक्तः कल्याणहृदयः स्वयम्।
आस्तिको देवदेवेशे न्यस्तचित्तः स्वयं प्रभुः।।३।।
अप्रमेयं धनं धान्यम् उत्साहश्च इमे त्रयः।
वसन्त्यविरतं यत्र स प्रतिष्ठापको भवेत्।।४।।
परिशुद्धश्च दक्षश्च कृतज्ञो गुरुपङ्क्तिषु।
अलोभयति कार्याणि यः स एवारभेत् क्रियाम्।।५।।
चातुर्वर्ण्योऽनुलोमो वा ज्ञातिभिः सकलैर्युतः।
आचार्यं पुरतः कृत्वा प्रतिष्ठां तेन साधयेत्।।६।।

प्रतिष्ठा क्रम में यजमान के लक्षण

श्री परशुराम ने कहा कि यजमान को परा श्रद्धा से युक्त और कल्याण-कामी होना चाहिये। वह आस्तिक हो। स्वयं देव देवेश में दत्त चित्त हो। अप्रमेय, धन-धान्य, उत्साह तीनों से संयुक्त हो। प्रतिष्ठापक को वसन्त्यविरत होना चाहिये। प्रतिष्ठापक को परिशुद्ध दक्ष और गुरुओं का कृतज्ञ होना चाहिये। जो

कार्यों में अलोभ हो वही इस कार्य का प्रारम्भ करें। चातुर्वर्ण्य अनुलोम या सभी परिवार से युक्त हो, वह आचार्य को आगे करके प्रतिष्ठा का कार्य करें।

प्रतिष्ठाक्रमे आचार्यस्य लक्षणम्

पाञ्चरात्रविदं शान्तं सर्वसिद्धान्तकोविदम्।
निःस्पृहं निर्जितद्वन्द्वं सर्वदोषविवर्जितम्।।७।।
ऋजुबुद्धिं सदा ब्रह्मध्यानैकनिरतं शुभम्।
आद्यवर्णं भागवतं नारायणपरायणम्।।८।।
प्रतिष्ठोत्सवकार्येषु प्रायश्चित्तादिकर्मसु।
निपुणं वरयेत्पूर्वमाचार्यत्वे सुबुद्धिमान्।।९।।

प्रतिष्ठा क्रम में आचार्य के लक्षण

आचार्य को पांचरात्र का ज्ञान होना चाहिये। उसे शान्त और सर्वसिद्धान्त का विद होना चाहिये। वह निःस्पृह हो, द्वन्द्वरहित हो, उसमें कोई दोष न हो। वह सरल बुद्धि, सदैव ब्रह्मध्यान में निरत और शुभ हो। वह ब्राह्मण हो। भागवत और नारायण परायण हो। प्रतिष्ठा अवसर के कार्यों में प्रायश्चित्त आदि कर्मों में निपुण हो। बुद्धिमान पहले आचार्य का वरण करें।

प्रतिष्ठासम्पादनार्थमृत्विगादिविचारः

ततस्तेनैव गुरुणा ऋत्विजः षोडशाथवा।
अष्टौ वा चतुरो यद्वा त्रीन् द्वौ वा वरयेत् सुधीः।।१०।।
अलाभे ऋत्विजां यज्ञं गुरुरेकः समापयेत्।
एकाध्वरविधानेन यथावत्कलशोद्भव।।११।।

प्रतिष्ठा सम्पादन के लिये ऋत्विज आदि का विचार

उसी प्रकार के गुरु ऋत्विज सोलह या आठ या चार या तीन या दो का वरण बुद्धिमान करें। ऋत्विजों के न मिलने पर एक ही गुरु यज्ञ को पूरा करें। अगस्त्य इसका सम्पादन एकाध्वर विधान से यथावत् करें।

आचार्यवरणक्रमे निषिद्धाः

वानप्रस्थो यतिश्चापि ब्राह्मणादितरे त्रयः।
नैवाधिकारिणः सर्वे पञ्चसंस्कारवर्जिताः।।१२।।
न कुण्डगोलकौ नैव भवेयुरनुलोमजाः।
कर्माधिकारिणो नैव जात्या ब्राह्मणयोनयः।।१३।।

आचार्य वरण क्रम में निषिद्ध

वानप्रस्थ या यति या ब्राह्मणों के अतिरिक्त तीनों वर्णों में से कोई अधिकारी नहीं है; क्योंकि सभी पंच संस्कार से रहित होते हैं। न कुण्डगोल और न अनुलोमज को कर्म का अधिकार है। केवल ब्राह्मण जाति को यह अधिकार है।

आचार्यवरणक्रमः

विधुरोऽप्यधिकारी स्यात् गुरुत्वे ज्ञानगौरवात्।
एवं विचार्य सकलमाचार्यं वरयेत्पुरा।।१४।।
समये यजमानस्तु गां भुवं काञ्चनं तथा।
नारिकेलं च कर्मादावाचार्याय प्रदापयेत्।।१५।।

आचार्य वरण क्रम

विधुर भी गुरुत्व और ज्ञान गौरव आचार्य होने का अधिकारी है। इन सभी बातों पर विचार करके पहले आचार्य का वरण करें। वरण के समय यजमान आचार्य को गाय, जमीन, सोना और नारियल कर्म के प्रारम्भ होने से पहले प्रदान करें।

प्रतिष्ठाक्रमे ग्राह्याग्राह्यकालविवेकः

प्रतिष्ठाकालमधुना वक्षे शृणु मुनीश्वर।
मुख्यं पूर्वायनं प्रोक्तं जघन्यं दक्षिणायनम्।।१६।।
ध्रुवबेरप्रतिष्ठायां मुख्यमेवायनं वरम्।
जघन्यं कर्मबिम्बानां दोषाय न कदाचन।।१७।।
प्रतिष्ठाकरणे त्याज्यं पितृमासचतुष्टयम्।
मासेष्वन्येषु सर्वेषु कारयेदविचारयन्।।१८।।
बाल्यं च सोमपुत्रस्य मौढ्यं च गुरुशुक्रयोः।
उपरागयुतं मासं सर्वथा परिवर्जयेत्।।१९।।
यद्वा पक्षं पुरस्ताच्च परस्ताच्च परित्यजेत्।
दुर्दिनं रविसङ्क्रान्तिमतिमासं मलाह्वयम्।।२०।।
गण्डातिगण्डयोगानि सर्वथा परिवर्जयेत्।
अर्कारवारौ मन्दस्य वारं विष्टं च वर्जयेत्।।२१।।
अमारिक्ताष्टमीतिथ्यः वर्जनीयाः प्रयत्नतः।
कृत्तिका भरणी जेष्ठा सर्वरौद्रद्विदैवतम्।।२२।।

त्रीणि पूर्वाणि पितृभं निन्दितानि परित्यजेत्।
आसुरं मारुतं चित्रा श्रविष्ठा शततारकम्।।२३।।
नात्युच्चं नातिनीचं च समं ग्राह्यं मनीषिभिः।
पापदृग्योगसहितमष्टमे ग्रहसंयुतम्।।२४।।
दशमे पापसंयुक्तं तल्लग्नं परिवर्जयेत्।
एवं विलोक्य नितरां सह मौहूर्तिकैर्गुरुः।।२५।।
विलोक्य गुणसंवाधं गुणग्रामं च शास्त्रतः।
यजमानग्रामधाम्नामनुकूले समाचरेत्।।२६।।
ईदृशं मङ्गलदिनं विनिश्चित्य द्विजोत्तमैः।
आरभेत प्रतिष्ठातुं देशिकः शास्त्रसारवित्।।२७।।

प्रतिष्ठा क्रम में ग्राह्य, अग्राह्य काल विचार

अब मैं प्रतिष्ठा काल को कहता हूँ। मुनीश्वर सुनो! सूर्य के उत्तरायण काल को श्रेष्ठ कहा गया है और दक्षिणायन को जघन्य कहा गया है। अचल प्रतिमा की प्रतिष्ठा में उत्तरायण मुख्य और श्रेष्ठ है। जघन्य कर्म मूर्तियों में कदापि दोष नहीं होता है। प्रतिष्ठा वरण में पितृमास चारों त्याज्य हैं। अन्य सभी महीनों में विचार करके प्रतिष्ठा करावें। बाल्य बुधमौढ्य, गुरु और शुक्र के अस्त रहने पर प्रतिष्ठा सर्वथा वर्जित है। इनके पहले पक्ष और बाद के पक्ष परित्याज्य हैं। दुर्दिन रविसंक्रान्ति और मलमास का त्याग करें। गण्ड और अतिगण्ड योग का त्याग करें। रविवार, शनिवार विष्ट वर्जित हैं। अमावस्या और रिक्ता तिथियाँ यत्न से वर्जनीय हैं। कृत्तिका, भरणी, ज्येष्ठा, सर्वरौद्र द्विदैवत, तीनों पूर्वा, पितृनक्षत्र त्याज्य हैं। आसुर, गारुत, चित्रा, श्रविष्ठा, शततारक, न अति उच्च और न अति नीच समग्राह्य हैं, ऐसे मनीषियों के मत हैं। पापग्रहों दृष्ट अष्टम में ग्रह हों, दशम में पापग्रह हों, तब उस लग्न को त्याग दें। ऐसा देखकर गुरु अन्य मुहूर्त को ग्रहण करें। शास्त्रसम्मत गुणसंबाध गुणग्राम का अवलोकन के बाद यजमान के ग्राम धाम के अनुकूल होने पर प्रतिष्ठा कार्य करें। इस प्रकार के मंगल दिन द्विजोत्तम निश्चित करके देशिक शास्त्रज्ञ प्रतिष्ठा आरम्भ करें।

अङ्कुरमृत्संग्रहणात् पूर्वं सम्पादनीयानि कृत्यानि

तदर्थं यजमानश्च ऋत्विजश्च गुरूत्तमः।
अनुकूले शुभे काले स्नायासुः क्षुरकर्मणा।।२८।।
स्नाताश्शुद्धाम्बरधरास्सर्वालङ्कारभूषिताः ।
आहूय रथकारं च कुलालमपि शिल्पिनः।।२९।।

आचार्यस्तोषयित्वा तान्विसृज्यानु च शिल्पिना।
नेत्राण्युन्मील्य विधिवत् कर्मबिम्बेषु शिल्पिनः।।३०।।
तोषयित्वा धनैर्वस्त्रैः मनः प्रह्लादनैरपि।
निर्गमय्याथ पुण्याहं वाचयेत्सर्वशुद्धये।।३१।।
गोमयालेपिते भूमौ रङ्गबल्या परिष्कृते।
धान्यपीठे न्यसेत् कुंभं साक्षतं सूत्रवेष्टितम्।।३२।।
शरावकूर्चपत्राढ्यं तत्रावाह्य श्रियः पतिम्।
गायत्र्या चैव वैष्णव्या समभ्यर्च्याक्षतादिभिः।।३३।।
अब्लिङ्गैः पवनैर्मन्त्रैः पवमानैः पवित्रकैः।
शान्तिमन्त्रैश्च ऋत्विग्भिः जप्त्वा व्याहृतिविद्यया।।३४।।
पीठं संक्षालितं बिम्बमासादितशुभोदकैः।
प्रोक्षयेदङ्कुरायाथ मृत्सङ्ग्रहमाचरेत्।।३५।।

अंकुर मिट्टी संग्रह के पहले सम्पादनीय कृत्य

प्रतिष्ठा के लिये यजमान ऋत्विज और गुरु अनुकूल शुभकाल में क्षौर कराकर स्नान करें। स्नान के बाद शुद्ध वस्त्र सभी अलंकारों से भूषित होकर, रथकार कुलाल शिल्पी को बुलावें। आचार्य को सन्तुष्ट करके विदा करें। तब शिल्पी कर्मबिम्बों के नेत्रोन्मीलन विधिवत् करें। उसे धन, वस्त्र देकर प्रसन्न करें। पुण्याह के लिये निकल कर सर्वशुद्ध हो जाय। गोबर से लेपित भूमि में रंग वल्ली बनावें। धान्यपीठ पर सूत्र वेष्टित कुंभ को अक्षत के साथ स्थापित करें। शराव, कूर्च, पत्र कुंभ के मुख पर रखें। उसमें लक्ष्मीपति का अवाहन करें। गायत्री और वैष्णव गायत्री से अक्षत आदि से अर्चन करें। अब्लिङ्ग पवन मन्त्र पवमान पवित्रक शान्ति मन्त्र का जप ऋत्विज व्याहृतियों के साथ करें। पीठ मूर्ति का संक्षालन शुद्ध जल में करें। अंकुर के अन्न का प्रोक्षण करें। इसके मिट्टी का संग्रह करें।

अंकुरार्थं मृत्सङ्ग्रहक्रमः

आजानुपादौ प्रक्षाल्य हस्तौ चामणिबन्धनात्।
त्रिराचम्य मृदा पुण्ड्रैरलङ्कृत्य पवित्रवान्।।३६।।
पिटकं च खनित्रं च शोधयित्वा शुभोदकैः।
वस्त्रैर्गन्धैश्च माल्यैश्च खनित्रं भूषितं पुरा।।३७।।

शिरसा धारयेदृत्विगथवा परिचारकः।
ब्राह्मणैः शाकुनं सूक्तं पठद्भिः वाद्यमङ्गलैः।।३८।।
बाहुप्रदीपैर्विमलैः पूजोपकरणैः सह।
दिशं प्राचीमुदीचीं वा शुभां भूमिं समाश्रयन्।।३९।।
आसीनः प्राङ्मुखो भूत्वा प्राणानायम्य देशिकः।
भूतग्रामं विशोध्याथ पुण्याहमपि वाचयेत्।।४०।।
'व्याहृत्या' प्रोक्षयेद्भूमिं खनित्रं पिटकं तथा।
'भूमिसूक्तेन' धरणीम् ऋत्विग्भिरभिमन्त्रयेत्।।४१।।

अंकुर के लिये मिट्टी संग्रह का क्रम

मिट्टी संग्रह कर्ता मिट्टी लेने जाने के पहले घुटने से पैरों तक और मणिबन्धों से करतलों को धोकर तीन आचमन करके मिट्टी का पुण्ड्र लगाकर पवित्र हो जायें। पिटक और खन्ती को पवित्र जल में शोधन करें। खन्ती को गन्ध, वस्त्र, माला से भूषित करें। परिचारक उन्हें शिर पर धारण करें या ऋत्विज धारण करें। ब्राह्मण शाकुन सूक्त का पाठ करें। मंगल वाद्यों को वादक बजाते रहें। विमल बाहु दीपक पूजन सामग्रियों के साथ पूर्व या उत्तर दिशा में जाकर भूमि के समाश्रित होवें। आचार्य देशिक पूर्वाभिमुख बैठकर प्राणायाम करें। भूतग्राम का शोधन करें। पुण्याह भी वाचन करें। व्याहृतियों से खन्ती भूमि और मिट्टी ग्रहण पात्र का प्रोक्षण कर ऋत्विज भूमि सूक्त से भूमि को अभिमन्त्रित करें।

समुद्रवसनां देवीं पर्वतस्तनमण्डिताम्।
रत्नगर्भां गुरुर्ध्यायेत् वसुधां सस्यसालिनीम्।।४२।।
आवाह्य भूमिमन्त्रेण भूमिं भूमौ समर्चयेत्।
अर्घ्यपाद्यादिभिर्गन्धैः पुष्पैर्नानाविधैरपि।।४३।।
धूपैर्दीपैश्च नैवद्यैः विविधै रसनाप्रियैः।
स्तोत्रेणाभिष्टुयाद्देवीं वसुधां रत्नमण्डिताम्।।४४।।

गुरु समुद्र वसना पर्वतस्तनमण्डिता रत्नगर्भा सस्यसालिनी वसुधा देवी का ध्यान करें। भूमिमन्त्र से भूमि का आवाहन करके उसका समर्चन करें। धूप, दीप, स्वादिष्ट नैवेद्य अर्पित करें। निम्नलिखित स्तोत्र से भूमि की स्तुति करें।

मृत्सङ्ग्रहक्रमे भूस्तुतिः

सर्वभूतधरे कान्ते सर्वलोकनमस्कृते।
विष्णुपत्नि जगद्धात्रि वसुधे सस्यमालिनि।।४५।।

पुण्यकाननकेशाढ्ये पर्वतस्तनमण्डिते।
समुद्रवसने देवि नदीविषयवासिनि।।४६।।
वल्मीकश्रवणे वेदभाषिणि श्रुतिसेविते।
फुल्लाम्बुजेक्षणे देवि प्रसीद हरिवल्लभे।।४७।।
नमस्ते भुवनेशाने नमः सर्वसुरार्चिते।
नमो भार्गवि मे मातः प्रणतोऽस्मि वसुन्धरे।।४८।।
विष्णुशक्तिसमुद्भूते शङ्खवर्णे महेश्वरि।
अनेकरत्नसङ्कीर्णे भूमि तुभ्यं नमो नमः।।४९।।
इति स्तुत्वा च नत्वा च ध्यात्वा विमलचेतसा।

निर्मल चेतना से स्तुति प्रणाम और ध्यान से मिट्टी इकट्ठा करें।

मृत्सङ्ग्रहमन्त्रनिर्देशः

'अश्वक्रान्ते'ति मन्त्रेण खनित्रेण गुरूत्तमः।।५०।।
मृदं समग्रां गृह्णीयात् प्राङ्मुखः क्रोडविद्यया।

मृदानयनं गुर्वादिसम्माननं च

तां मृदं मूलमन्त्रेण पिटके वेत्रनिर्मिते।।५१।।
आच्छाद्य नव वस्त्रेण मन्त्रेणा'स्त्रे'ण देशिकः।
स्वयं गृहीत्वा शिरसा ब्राह्मणैः स्वस्तिपाठकैः।।५२।।
विविधैर्मङ्गलैरन्यैः प्रविशेन्मन्दिरं गुरुः।
धाम प्रदक्षिणीकृत्य अङ्कुरार्पणमण्डपे।।५३।।
विन्यसेत्तां मृदं पश्चात् यजमानो गुरुं तथा।
ऋत्विजो वस्त्रगन्धाद्यैः पुष्पैः पञ्चाङ्गभूषणैः।।५४।।
हारोपवीतकटककेयूराङ्गुलिभूषणम् ।
पञ्चाङ्गभूषणमिदं कथितं कमलोद्भव।।५५।।

मिट्टी संग्रह का निर्देश

'अश्वक्रान्ते' मन्त्र से खनित्र के द्वारा उत्तम गुरु पूर्वमुख होकर क्रोडविद्या से सारी मिट्टी को ग्रहण करें। उस मिट्टी को बेंत निर्मित टोकरी में मूल मन्त्र से ग्रहण करें। उस टोकरी को नये वस्त्र में देशिक अस्त्र मन्त्र से ढक दें। ब्राह्मणों के स्वस्तिवाचन के साथ गुरु मन्दिर में प्रवेश करें। धाम की प्रदक्षिणा करके अंकुरार्पण मण्डप में उस मिट्टी को रखें। इसके बाद यजमान गुरु और ऋत्विज

को वस्त्र, गन्ध, फूल, पंचांग भूषण-माला, जनेऊ, कटक, केयूर, अंगूठी अर्पित करें। अगस्त्य इन्हीं पाँचों को पंचांग भूषण कहते हैं।

पालिकास्थापनमङ्कुरधान्यसंस्कारः तत्तद्देवताराधनञ्च

अथ तेऽलङ्कृताः सम्यक् अङ्कुरार्पणभूतले।
पुण्याहं वाचयित्वाथ प्रोक्षयेत् पालिकादिकम्।।५६।।
पालिका द्वादशाहृत्य तासां कण्ठं तृणादिभिः।
बद्धवाऽपूर्य मृदा पश्चादङ्कुरार्पणभूतले।।५७।।
गोमयेन समालिप्तां रङ्गवल्या परिष्कृताम्।
आसाद्य धान्यैः सम्पूर्णैः पीठं तत्र प्रकल्पयेत्।।५८।।
प्रागायतानि पञ्चैव तथा तिर्यञ्चि पातयेत्।
सूत्राणि षोडशपदे मध्ये पदचतुष्टयम्।।५९।।
सोमकुंभाय सम्मार्ज्य परितः पालिकास्पदम्।
'पौरुषे'णैव मन्त्रेण पालिकास्थापनं चरेत्।।६०।।
सोमकुंभमलङ्कृत्य गन्धैः पुष्पैश्च साक्षतैः।
सूत्रैर्वस्त्रैश्शरावेण कूर्चेन च यथाक्रमम्।।६१।।

पालिका (अंकुररोपन पात्र) स्थापन अंकुर धान्य संस्कार और उनके देवों का आराधन

सम्यक् रूप से अलंकृत पालिकों (पात्र) को अंकुर अर्पण भूतल पर रखकर पुण्याहवाचन करते हुए पालिकादि का प्रोक्षण करें। बारह पालिकाओं के कंठ में तृणादि बाँधें। तब उसमें मिट्टी भरें। इसके बाद अंकुरार्पण भूतल को गोबर से लीपकर रंगोली से परिष्कृत करें। सभी धान्यों से पीठ कल्पित करें। पाँच पूर्वायत और पाँच तिर्यक सूत्र पातन से सोलह चौकोरों के मध्य में चार पद बनावें। सोम कुंभ का मार्जन करके उसके बगल में 'पौरुषमन्त्र' से पालिश स्थापित करें। सोम कुम्भ को अलंकृत करके गन्ध, पुष्प, अक्षत, सूत्र, वस्त्र, शराव, कूर्च से यथाक्रम अलंकृत करें।

विन्यस्याङ्कुरधान्यानि गोधूमव्रीहिसाढकी।
मुग्दं सचणकं राजमाषं च सतिलं तथा।।६२।।
माषं कलुत्थमेतानि धान्यानि नव चाहरेत्।
संक्षाल्य 'विष्णुगायत्र्या' चाप्लुत्य पयसा गवाम्।।६३।।
'ऋतं सत्ये'ति मन्त्रेण ब्रह्मावाह्य समर्चयेत्।
गन्धोदकेन सम्पूर्य सोमकुम्भं सरत्नकम्।।६४।।

गेहूँ, ब्रीहि, आढ़की, मूँग, चना, राजमा, तिल, उड़द, कुल्थी नव प्रकार के धान्य को रखें। इनको 'विष्णुगायत्री' से संक्षालित करें। गाय के दूध से भिंगोये। 'ऋतं सत्येति' मन्त्र से ब्रह्मा का आवाहन करके अर्चन करें। सोमकुंभ को गन्धोदक से भरकर उसमें रत्न डालें।

'सन्ते पयांसि' मन्त्रेण सोममावाह्य पूजयेत्।
पालिकासु द्वादशसु विष्णोरावाहनं चरेत्।।६५।।
'तदस्योरु' 'प्रतद्विष्णु'र्यस्योरुच परे उभे।
'विचक्रमे' 'ध्रुवासोऽस्य' 'त्रिर्देवश्च' 'प्रविष्णकम'।।६६।।
'अतो देवा' 'इदं विष्ण'रिति मन्त्रैर्यथाक्रमम्।
पालिकासु सकूर्चासु प्रागादीशावसानकम्।।६७।।
आवाह्य गन्धपुष्पाद्यैरर्चयित्वा ततः परम्।

'सन्ते पयांसि' मन्त्र से सोम को आवाहित करके पूजन करें। बारह पालिकाओं में विष्णुओं का आवाहन करें। 'तदंस्योरु', 'प्रतद्विष्णु', 'र्यस्योरु', 'विचक्रमे', 'ध्रुवासोऽस्य' 'त्रिदेवश्च', 'प्रविष्णकम', 'अतोदेवा', 'इदं विष्ण' रिति मन्त्रों से यथाक्रम पालिकाओं में कूर्च से पूर्वादि से अवसान तक आवाहन करें। गन्ध पुष्पादि से अर्चन करें।

होमप्रकारः

प्राग्भागे पालिकावेद्याः स्थण्डिलं परिकल्पयेत्।।६८।।
अग्निं संसाध्य विधिवत् सर्पिषाष्टोत्तरं शतम्।
'सन्ते पयांसि'मन्त्रेण हुत्वा सम्पातमाहरेत्।।६९।।
'इदं विष्णुरि'ति श्रुत्या हुत्वा पूर्णाहुतिं गुरुः।

होम प्रकार

पालिका वेदी के पूर्व भाग में स्थण्डिल बनावें। अग्नि का संसाधन विधिवत् करके 'सन्ते पयांसि' मन्त्र से गोघृत की एक सौ आठ आहुतियों से हवने करें। श्रुति हवन करके गुरु पूर्णाहुति डालें।

बीजावापरक्षणादिप्रकारः

सम्पाताज्येन संसिञ्चेद्बीजपात्रं च पालिकाः।।७०।।
सोमकुंभे पुनः सोममभ्यर्च्य च निवेद्य च।
'द्वादशाक्षर'मन्त्रेण बीजावापं समाचरेत्।।७१।।

आचार्यो वापयेद्बीजं तूष्णीमन्ये च ऋत्विजः।
'मूर्धानमि'ति मन्त्रेण मृद्भिराच्छादयेत्ततः।।७२।।
'इमं मे वरुणे'त्येव पयसा सेचयेदपि।
अनिर्वाणं ततो दीपं रक्षेन्नक्तं दिवं मुदा।।७३।।
सोमकुम्भार्चनं नित्यं यावत्कर्म समाप्यते।
पालिकाराधनं कुर्यात् सायं प्रातर्निवेदयेत्।।७४।।

।।इति भार्गवतन्त्रे षष्ठोऽध्यायः।।

हवन प्रकार

गोघृत के समय हवन से सम्पात घी से बीजपात्र और पालिका को सिंचित करें। पुनः सोमकुंभ से सोम का पूजन, निवेदन करके द्वादशाक्षर मन्त्र से बीज का वपन करें। आचार्य बीजवपन करें। ऋत्विज 'मूर्धानमिति' मन्त्र से बीजों को मिट्टी से ढक दें। 'इमं मे वरुणे' मन्त्र से दूध से सिंचित करें। अखण्डदीप की रक्षा रात दिन करें। जब तक कर्म समाप्त न हो तब तक सोमकुंभ का नित्य अर्चन करें। पालिका आराधन करें और शाम और सबेरे निवेदन करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में छठा अध्याय सम्पूर्ण।।

सप्तमोऽध्यायः

वास्तुपूजाबिम्बजलाधिवासविवरणाध्यायः

वास्तुपूजायाः प्रयोजननिर्देशः

रामः

अङ्कुराण्यर्पयित्वैवं वास्तुपूजां समाचरेत्।
विमानमण्डपादीनां प्राकाराणाञ्च शुद्धये।।१।।
शान्तये सर्वदोषाणां क्रियमाणस्य कर्मणः।
निर्विघ्नेन समाप्त्यर्थं वास्तुपूजा प्रशस्यते।।२।।

वास्तुपूजा प्रतिमा का जलाधिवास विवरण

वास्तुपूजा के प्रयोजन का निर्देश

श्रीपरशुराम ने कहा कि अंकुरार्पण के बाद वास्तुपूजन करें। विमान मण्डप आदि की शुद्धि के प्रकार सभी दोषों की शान्ति के लिये क्रियमाण कर्मों को निर्विघ्न समाप्ति के लिये वास्तुपूजन प्रशस्त होता है।

वास्तुपूजाप्रकारः

कुशैः काशैस्तृणैश्चापि वास्तुनाथस्य विग्रहम्।
कृत्वा सर्वाङ्गसम्पूर्णं वाससा भूषणेन च।।३।।
कुसुमैरप्यलङ्कृत्य मण्डपे दक्षिणे भुवि।
सप्तदर्भकृतं कूर्चं कृत्वोरसि नियोजयेत्।।४।।
पुण्याहवारिभिः प्रोक्ष्य पूजयेद्वास्तुनायकम्।
वास्त्वीशाष्टाक्षरेणैव कूर्चे आवाह्य देशिकः।।५।।
'असुनीते'ति मन्त्रेण कुर्यात्प्राणं प्रतिष्ठितम्।
अर्घ्यैः पाद्यैस्तथाचामैर्गन्धैः पुष्पैस्तथाक्षतैः।।६।।
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैस्ताम्बूलैर्वासनायुतैः।
अर्चयित्वा यथाशास्त्रं तोषयित्वा यथावसु।।७।।

वास्तुपूजा प्रकार

कुश, काश, घास से वास्तुनाथ का विग्रह बनाकर वस्त्र, आभूषण और फूलों से सर्वांग अलंकृत करें। मण्डप के दक्षिण धरातल पर सात कुशों को कूर्च बनाकर स्थापित करें। पुण्यावाह के साथ जल से प्रोक्षण करके वास्तुनायक का पूजन करें। वास्तु ईश के अष्टाक्षर मन्त्र से कूर्च में देशिक आवाहन करें।

'असुनीति' मन्त्र से प्राण प्रतिष्ठा करें। पाद्य, अर्घ्य, आचमन, गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, वासनायुत ताम्बूल से यथाशास्त्र अर्चन करके तुष्ट करें।

वास्तुपूजाङ्गहोमः वास्तुशेषपरित्यागादिकञ्च

पश्चिमे वास्तुनाथस्य जुहुयाज्जातवेदसि।
'पञ्चोपनिषदै'र्मन्त्रैः सर्पिषा जुहुयाच्छतम्।।८।।
शम्यपामार्गखदिरसमिद्भिश्च यथाक्रमम्।
'वास्त्वीश'मूलमन्त्रेण ह्यष्टावष्टौ पृथक् पृथक्।।९।।
'वास्तोस्पते प्रतीत्यादि' ऋग्भिश्चापि चतसृभिः।
चरुणा जुहुयादग्नौ ततो 'वास्त्वीश'मूलतः।।१०।।
अष्टोत्तरशतं वारान् सर्पिषा जुहुयात्पुनः।
'इदं विष्णु'रिति श्रुत्या हुत्वा पूर्णाहुतिं ततः।।११।।
दग्ध्वा वास्तुप्रतिकृतिं 'परिवाजे'ति वै ऋचा।
पर्यग्निकरणं कृत्वा धाम तन्मण्डपादिकम्।।१२।।
ईशानभागे ग्रामस्य वास्तुशेषं परित्यजेत्।
ततः स्नात्वा विधानेन पुण्याहप्रोक्षणं चरेत्।।१३।।

वास्तु पूजा के अंग हवन वास्तुशेष का परित्याग

वास्तुनाथ के पश्चिम भाग में अग्नि में हवन करें। 'पंचोपनिषद' मन्त्र बोलकर गोघृत से एक सौ हवन करें। शमी, चिड़चिड़ा, खैर की समिधाओं से यथाक्रम हवन करें। वास्त्वीश के मूल मन्त्र से आठों का अलग-अलग हवन करें। 'वास्तोस्पते प्रतीत्यादि' ऋचाओं से चार आहुति डालें। इसके बाद 'वास्त्वीश' के मूल मन्त्र से अग्नि में चरु से हवन करें। फिर गोघृत से एक सौ आठ बार हवन करें। 'इदं विष्णु' वैदिक मन्त्र से हवन के बाद पूर्णाहुति करें। पर्यग्निकरण के बाद धाम मण्डपादि के ईशान भाग में ग्राम के ईशान भाग में वास्तु शेष का त्याग करें। इसके बाद विधान से स्नान करके पुण्याह से प्रोक्षण करें।

मानादिप्रयुक्तदोषशान्तिप्रकारः

मानोन्मानप्रमाणादेर्हानिवृद्ध्यघशान्तये ।
प्रतिमालयपीठानां शान्तिहोमं समाचरेत्।।१४।।
पीठे बिम्बानि विन्यस्य क्षालयित्वा शुभोदकैः।
पीठानि च तथा धामाद्यालिंपेद्गोमयादिभिः।।१५।।

बिम्बानां पुरतो वह्निं प्रतिष्ठाप्य समीदलैः।
साक्षतैर्व्याहृतीभिश्च होमश्चाष्टोत्तरं शतम्।।१६।।
पूर्णाहुत्यवसाने तु वह्न्युपस्थानमाचरेत्।
'नमस्तुभ्यं भगवते जातवेदःस्वरूपिणे।।१७।।
नारायणाय हव्यस्य कव्यस्य च यथाक्रमम्।
होत्रे यष्टव्यदेवानामात्मने परमात्मने।।१८।।
सन्निधत्स्व चिरं देव प्रतिमायां हिताय नः।'
इत्युपस्थाय मेधावी शुद्धस्नपनमाचरेत्।।१९।।

मानादि प्रयुक्त दोष की शान्ति के प्रकार

मान, उन्मान, प्रमाण आदि की हानि वृद्धि से उत्पन्न पापों की शान्ति के लिये प्रतिमालय पीठों में शान्ति हवन करें। पीठ पर मूर्ति को रखकर शुद्ध जल से प्रक्षालित करें। पीठ और आदि को गोबर आदि से लीपें। प्रतिमा के आगे समी की लकड़ी से आग जलावें। व्याहृतियों के द्वारा अक्षत से एक सौ आठ हवन करें। पूर्णाहुति के बाद अग्नि का उपस्थान करें। उपस्थान म़न्त्र है—

'नमस्तुभ्यं भगवते जातवेदःस्वरूपिणे।।
नारायणाय हव्यस्य कव्यस्य च यथाक्रमम्।
होत्रे यष्टव्यदेवानामात्मने परमात्मने।।
सन्निधत्स्व चिरं देव प्रतिमायां हिताय नः।'

इस प्रकार उपस्थापन के बाद मेधावी शुद्ध स्नान करें।

बिम्बाधिवासक्रमे घृतस्नानप्रकारः

बिम्बानां पुरतः कुंभं धान्यपीठे निवेशयेत्।
सूत्रवेष्टितसर्वाङ्गं गन्धवस्त्राद्यलङ्कृतम्।।२०।।
आढकद्वयमात्रेण गोधृतेन प्रपूरितम्।
सकूर्चं पल्लवयुतं शरावेणावकुण्ठितम्।।२१।।
संस्थाप्य कृत्वा पुण्याहं प्रोक्षयित्वा यथाविधि।
वासुदेवं समावाह्य 'द्वादशाक्षर'विद्यया।।२२।।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्नैवेद्यान्तं यथाक्रमम्।
'घृतं मिमिक्षि' मन्त्रेण घृतेन स्नपनं चरेत्।।२३।।
'मानस्तोके'ति मन्त्रेण स्नापयेदुष्णवारिभिः।
ततो बिम्बानि सर्वाणि भूषयित्वा नवाम्बरैः।।२४।।

भूषणैर्गन्धमाल्यैश्च यथाविधि यथावसु।

प्रतिमाधिवास क्रम में घृत स्नान का प्रकार

प्रतिमा के आगे धान्यपीठ पर कुंभ स्थापित करें। सूत्र वेष्टित घट सर्वांग को गन्ध, वस्त्रादि से अलंकृत करें। घट को दो आढ़क गाय के घी से प्रपूरित करें। घट के मुख पर कुश पल्लव रखकर उस पर मिट्टी का प्याला रखें। स्थापन करके पुण्याहवाचन करके प्रोक्षण करें। द्वादशाक्षर विद्या ॐ नमो भवगते वासुदेवाय से वासुदेव का आवाहन करें। तब गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य से यथाक्रम पूजन करें। 'घृत मिमिक्षि' मन्त्र के द्वारा घी से स्नान करावें। 'मानस्तोके' मन्त्र से गरम जल से स्नान करावें। तब मूर्ति को नूतन वस्त्र से विभूषित करें। यथाशक्ति यथाविधि भूषण, गन्ध, माला आदि से अलंकृत करें।

जलाधिवासप्रकारः

जलाधिवासं कुर्वीत नद्यादौ मङ्गलोदके।।२५।।
जलाधिवासायोग्यानां त्रिवस्तुकमृदात्मनाम्।
चित्राणां पटजानां वा गुरूणां च शिलादिषु।।२६।।
छायाधिवासं कुर्वीत प्रतिष्ठातन्त्रसारवित्।
जलद्रोण्यां कटाहे वा समुद्धृत्य महज्जलम्।।२७।।
धान्यराशौ विनिक्षिप्य गन्धैस्तदधिवास्य च।
गङ्गाद्यास्सरितस्तत्र समावाह्य समर्चयेत्।।२८।।

जलाधिवास प्रकार

पावन नदी, तालाब आदि के जल से जलाधिवास करावें। जलाधिवास के योग्य तीन पदार्थ जैसे मिट्टी, चित्र, वस्त्रांकित चित्र या गुरु या पत्थर की मूर्तियाँ होती हैं। प्रतिष्ठा तन्त्रज्ञ इनका अधिवास करावें। जलद्रोणी, कड़ाह में जल भरकर उसमें धान्य राशि डालें। गन्ध डालें। गंगा आदि नदियों का आवाहन करके यथाविधि पूजन करें।

अष्टाविंशतिभिर्दर्भैः कृतं कूर्चं विनिक्षिपेत्।
तत्र देवं समावाह्य पूजयित्वा यथाविधि।।२९।।
संहारक्रममाचार्यः संस्मरेत्तत्र तन्त्रवित्।
चक्रमुदां दर्शयित्वा रक्षाकुम्भार्चनं चरेत्।।३०।।
धान्यपीठेऽथ तत्पार्श्वे तोयपूर्णान् घटान् नव।
सालङ्कारान् सकरकान् सरत्नान् लोहसंयुतान्।।३१।।

संस्थाप्य मध्ये ब्रह्माणं करके चायुधेश्वरम्।
इन्द्रादिदिक्पतीनन्यकलशेष्वर्चयेद्बुधः।।३२।।
सर्वाण्यङ्गानि बिम्बस्य वेष्टयेन्नववाससा।
'रक्षोहणे'ति मन्त्रेण सिद्धार्थान् विकिरेद्बुधः।।३३।।

अट्ठाइस कुशों से निर्मित कूर्च उसमें डालें। उसमें देवता का आवाहन करके यथाविधि पूजा करें। आचार्य मन्त्र के संहारक्रम से स्मरण करके चक्र मुद्रा दिखावें। तब रक्षा कुम्भ का अर्चन करें। उसके बगल में धान्यपीठ पर जलपूर्ण नव घटों को स्थापित करें। सभी घट अलंकृत करकयुक्त, रत्नयुक्त, लौहयुक्त होना चाहिये। इन घटों को स्थापित करके मध्य के घट में ब्रह्मा का आयुधेश्वर इन्द्र आदि दिक्पालों की पूजा अन्य कलशों में करें। मूर्ति के सभी अंगों को नये वस्त्र लपेटें। तब रक्षोहण मन्त्र से सभी दिशाओं में सरसों छीटें।

देवीनां तु श्रियादीनां त्रयोविंशतिभिः कुशैः।
पञ्चविंशतिभिर्दर्भैः रुद्रस्य परमेष्ठिनः।।३४।।
द्वाविंशद्भिः कुशैः कूर्चं कुर्यादन्यामृताशिनाम्।
आरोप्य याने बिम्बानि वेदवाद्यसमन्वितम्।।३५।।
सर्वमङ्गलसंयुक्तं प्रापयेच्च नदीतटम्।
तीरे निवेश्य नद्यादेः प्रोक्ष्य पुण्याहवारिणा।।३६।।
शोषयेद्वायुबीजेन 'वह्निमन्त्रेण' दाहयेत्।
सुधाक्षरेण संप्लाप्य गङ्गामावाह्य पूजयेत्।।३७।।
एवं शुद्धे नदीतोये पीठं तत्र विनिक्षिपेत्।
कल्पयित्वा योगपीठं बिम्बं प्राक्शिरसं न्यसेत्।।३८।।
शाययेच्च समभ्यर्च्य संहारं चिन्तयेत्ततः।
चक्रमुद्रां प्रदर्श्याथ नदीतीरे यथापुरम्।।३९।।
रक्षाकुम्भार्चनं कुर्यात् सिद्धार्थान् दिक्षु पातयेत्।
आरोपयेदनिर्वाणान् दीपान् अपि सुवर्चसः।।४०।।
त्रयी प्रवर्तनं कुर्यात् ब्राह्मणैः वेदपारगैः।
तस्मिन् जले न कुर्वीरन् स्नानपानादिकाः क्रियाः।।४१।।
वाद्यानि च विचित्राणि घोषयेयुः समन्ततः।
त्रिरात्रमेकरात्रं वा यद्वा यामं मुहूर्तकम्।।४२।।

जलाधिवासं कुर्वीत तत्र नद्याद्यसंभवे।
कटाहे वा जलद्रोण्यां बिम्बानामधिवासनम्।।४३।।

।। इति भार्गवतन्त्रे सप्तमोऽध्यायः।।

लक्ष्मी आदि देवियों का अर्चन तेइस कुशों के कूर्च में करें। रुद्र और ब्रह्मा के लिये पच्चीस कुशों का कूर्च बनावें। अन्य देवों के कूर्च बाइस कुशों से बनावें। तब मूर्तियों को वेदपाठ और बाजा बजाते हुए रथ पर चढ़ावें। सभी मंगलों से युक्त नदी किनारे ले आयें। नदी के तट पर रखकर पुण्याहवाचन करते हुए उनका प्रोक्षण करें। वायुबीज 'यं' से शोषण करें। अग्नि बीज 'रं' से तपावें। अमृताक्षर बोलकर गंगा को आवाहित करके पूजन करें। इस प्रकार शुद्ध नदी जल से शुद्ध करके पीठ को विसर्जित करें। योगपीठ कल्पित करके मूर्ति को पूर्व शिर करके सुलावें। अर्चन करें। संहार का चिन्तर करें। चक्र मुद्रा दिखावें। नदी तट पर पूर्ववत् रक्षाकुम्भ का पूजन करें। दशों दिशाओं में सरसों छीटें। सुन्दर दीपकों को जलावें। वेदपारग ब्राह्मण तीन प्रवर्तन करें। उस जल से कोई स्नान, पानादि क्रिया न करें। विचित्र बाजों को बजवायें। ऐसा तीन रात या एक रात या प्रहर भर तक करें। जलाधिवास के लिये नदियों, तालाबों के न होने पर प्रतिमाओं का अधिवास कड़ाह या जल द्रोणी में करावें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में सप्तम अध्याय सम्पूर्ण ।।

▼

अष्टमोऽध्यायः

प्रतिष्ठाङ्गभूतप्रतिमानेत्रोन्मीलनादिनिरूपणाध्यायः

यागमण्डपालङ्करणप्रकारः

श्रीरामः

यागमण्डपमासाद्य यजमानेन देशिकः।
स्थूणांश्च मण्डपे तस्मिन् वासोभिर्वेष्टयेन्नवैः॥१॥
वितानयेच्छुभैर्वस्त्रैः पताकाभिश्च भूषयेत्।
मुक्तादामभिरन्यैश्च कदलीक्रमुकादिभिः॥२॥
सफलैर्दर्भमालाभिर्मणिकाञ्चनभूषणैः।
शोभयेन्मण्डपं सर्वं तोरणानि च बन्धयेत्॥३॥
खात्वा द्वितालं धरणीं द्वारे द्वारे चतुर्दशम्।
स्थापयेदपि पूर्वादिपताकाश्चापि बन्धयेत्॥४॥
अश्वत्थोदुम्बरवटप्लक्षक्लृप्तानि वै क्रमात्।
शोभयत्विा यथादृश्यं दीपानुद्दीप्य सर्वतः॥५॥

प्रतिष्ठाङ्गभूत प्रतिमा के नेत्रोन्मीलन आदि का निरूपण

याग मण्डप के अलंकरण के प्रकार

श्री परशुराम ने कहा कि देशिक यजमान के द्वारा मण्डप के स्थूणों को नये-नये वस्त्रों से वेष्टित करावें। सुन्दर वस्त्र का चन्दोवा टँगवावें। पताकाओं से सजावें। मुक्तादाम आदि और केले के खम्भों से सजावें। सभी दर्भों की माला मणि और सोने के भूषणों से सजावें। पूरे मण्डप को सुशोभित करें। तोरण आदि बाँधें। दो ताल जमीन खोदकर प्रत्येक द्वार पर चौदह पताका पूर्वादि क्रम से गाड़ें। पीपल, गूलर, बरगद, पाकड़ की लकड़ियों के पताका के खम्भे होंगे। सभी ओर से दीपानुदीप यथादृश्य सुशोभित बनावें।

अधिवासितबिम्बोत्थापनम् यागमण्डपानयनं च

अपराह्णे तु सम्प्राप्ते काले संकल्पिते गते।
उत्थाप्य बिम्बान्युदकात् कुम्भाच्च कलशादपि॥६॥
उद्वास्य देवताः सर्वाः प्रतिमास्तीरविष्टरे।
निवेश्य प्राङ्मुखं शुद्धैर्वारिभिः क्षालयेद्गुरुः॥७॥
लोहजानि च बिम्बानि तिन्त्रिणीफलवारिणा।
वस्त्राभरणपुष्पाद्यैरलङ्कृत्य विचक्षणः॥८॥

यानमारोप्य विप्रेन्द्रैर्वेदवाद्यादिमङ्गलैः।
प्रादक्षिण्येन वै धाम्नो गमयेद्यागमण्डपम्।।९।।
उत्तरे विष्टरे बिम्बं प्राङ्मुखं विनिवेशयेत्।
तत उत्थाप्य कूर्चानि बिम्बे तां शक्तिमुद्वसेत्।।१०।।
कुम्भेभ्यः देवताः सर्वाः पूर्ववच्च विसर्जयेत्।

अधिवासित प्रतिमा को उठाकर यागमण्डप में लाना

अपराह्न के बाद संकल्पित समय में प्रतिमा को जल में से निकालकर कुम्भ कलश के देवताओं को उद्‌वासित करें। तट के विस्तर पर प्रतिमा को पूर्वाभिमुख बैठायें। गुरु उनको प्रक्षालित करें। लौहज मूर्तियों को फल जल से तीन-तीन बार प्रक्षालित करें। तब वस्त्र, आभूषण, पुष्पादि से अलंकृत करें। मूर्ति को रथ पर चढ़ाकर श्रेष्ठ विप्र वेदपाठ करें। मंगल वाद्य बजवावें। इसके बाद धाम की प्रदक्षिणा करके याग मण्डप में ले जायें। उत्तर आसन पर प्रतिमा को पूर्वाभिमुख बिठावें। बिम्बकूर्च को उठाकर विसर्जित करें। कुम्भ के सभी देवताओं का विसर्जन पूर्ववत् करें।

प्रतिमानयनोन्मीलनक्रमः

नयनोन्मीलनं कुर्यात् बिम्बानां तु यथाविधि।।११।।
सौवर्णं राजतं चापि पात्रयुग्मं शलाकया।
राजत्या स्वर्णमय्या च धान्यराशौ निवेशयेत्।।१२।।
सौवर्णं पूर्वदिग्भागे पश्चिमे राजतं न्यसेत्।
परितः कलशानष्टौ चणकैः परिपूरितान्।।१३।।
स्थापयेद्वाचयेत्पश्चात् पुण्याहं प्रोक्षयेदपि।
आवाहयेन्मधुघटे 'उद्वयं तमसे'त्यृचा।।१४।।
आदित्यमितरेऽपीन्दुं 'सोमोधेन्वि'ति विद्यया।
सम्पूज्य गन्धपुष्पाद्यैर्द्वे पात्रे सशलाकिके।।१५।।
'मधुत्रयेण' च मधु 'सविराजेति' वै घृतम्।
कन्यकारुचिराश्चाष्टौ गाः सवत्साः मनोहराः।।१६।।
स्थापयित्वाथ तत्पार्श्वे त्रयी घोषं प्रवर्तयेत्।
शलाकया च सौवर्ण्या मध्वाक्तमुखया गुरुः।।१७।।
उन्मील्य दक्षिणं नेत्रं राजत्या च घृताक्तया।
उन्मीलनं तु वामाक्ष्णः दक्षिणोत्तरयोर्मनुः।।१८।।

'चित्रं देवा' च 'तच्चक्षु'रिति मन्त्रद्वयं स्मृतम्।
एवमुन्मील्य नेत्रे द्वे आच्छादनपटं त्यजेत्।।१९।।
मकरन्दश्च सर्पिश्च चणकं चापि कन्यकाः।
गाः सवत्साश्च देवाय दर्शयेद्देशिकोत्तमः।।२०।।
सर्वेषामपि बिम्बानामेवमुन्मीलनं दृशाम्।

प्रतिमा नयनोन्मीलन क्रम

प्रतिमा का नेत्रोन्मीलन विधिवत् करें। सोने और चाँदी के दो पात्रों में धान्य राशि भरकर दोनों में सोने चाँदी की शलाकाओं को घुसा दें। सोने के पात्र को पूरब दिशा में और चाँदी के पात्र को पश्चिम दिशा में रखें। उनके सामने चना से भरे हुए आठ कलशों को रखें। इसके बाद पुण्याहवाचन करके उनका प्रोक्षण करें। 'उद्वयं तमसे' ऋचा से मधुघट में आवाहन करें। सूर्य और चन्द्र का पूजन 'सोमोधेन्वि' विद्या से करें। दोनों पात्रों में रखें शलाकाओं की पूजा गन्ध, पुष्पादि से करें। आठ सुन्दर कन्याओं और मनोहर सवत्सा गायों को 'मधुत्रयेण' और मधु 'सविराज' मन्त्र से स्थापित करें और तीन उद्घोष करें। तब स्वर्णिम शलाका का मुख मधु से अक्त करके गुरु प्रतिमा के दाहिने नेत्र को खोलें। चाँदी की शलाका के मुख को घी में डुबा कर बाएँ नेत्र का उन्मीलन करें। दक्षिण नेत्रोन्मीलन के समय 'चित्रदेवा' मन्त्र और वाम नेत्रोन्मीलन के समय 'तच्चक्षु' मन्त्र का पाठ करें। इस प्रकार दोनों नेत्रों के उन्मीलन के बाद आच्छादन पट को हटा दें। तब देशिक श्रेष्ठ मधु, गोघृत, चना, कन्याओं, सवत्सा गौओं को देव को दिखावें। सभी प्रतिमाओं का नयनोन्मीलन इसी प्रकार से होता है।

प्रतिसरबन्धनावसरनिर्देशः

कौतुकं तु करे धार्यं स्नपनेऽम्ब्वधिवासने।।२१।।
प्रतिष्ठायां च बिम्बानाम् आचार्यस्यापि ऋत्विजाम्।
तत्प्रकारमितो वक्ष्ये शृणु कुम्भसमुद्भव।।२२।।

प्रतिसरबन्धन के अवसर का निर्देश

प्रतिमा प्रतिष्ठा के समय स्नान और जलाधिवास के क्रम में आचार्य और ऋत्विज कौतुक को हाथ में रखें। हे अगस्त्य! उसके प्रकार को कहता हूँ।

प्रतिसरपरिकल्पनम्

सौवर्णं वाथ कौशेयं कार्पासं वा यथावसु।
सप्तभिर्पञ्चभिर्वापि सूत्रैः प्रतिसरं भवेत।।२३।।
निष्कप्रमाणस्वर्णेन कौतुकं परिकल्पयेत्।

प्रतिसर का परिकल्पन

सोने, रेशम, कपास या यथोपलब्ध सात या पाँच धागों से प्रतिसर का निर्माण होता है। एक निष्क सोने में कौतुक कल्पित होता है।

कौतुकसंस्कार: कौतुकन्धनप्रकारश्च

कमले तण्डुलैः पूर्णे ताम्बूलीदलशोभिते।।२४।।
कदलीनारिकेराद्यैः फलैश्च परिमण्डिते।
विन्यस्य तत्र सूत्राणि प्रोक्ष्य पुण्याहवारिभिः।।२५।।
सुदर्शनं हेतिराजं तत्रावाह्य समर्चयेत्।
सुदर्शनषडर्णेन सप्तवाराभिमन्त्रणम्।।२६।।
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु चन्दनक्षोदवारिणा।
आलिंपेत् कौतुकं सम्यगपराजितविद्यया।।२७।।
मूलमन्त्रेण देवस्य वध्नीयाद्दक्षिणे करे।
देवीनां तु श्रियादीनां वामे कौतुकमङ्गलम्।।२८।।
आचार्याणां मूर्तिपानामङ्कुरार्पणकर्मणि।
कौतुकं दक्षिणे हस्ते येन दीक्षा प्रसिध्यति।२९।।
मन्त्रस्तु देवदेवीनामन्यासां वा मुनीश्वर।
बन्धने स्व स्व विद्यैव चक्रमन्त्राभिमन्त्रणम्।।३०।।
विश्वेतातेति मन्त्रेण बन्धनं कौतुके गुरोः।
ऋत्विजामपि सर्वेषां यो ब्रह्मेत्यभिमन्त्रणम्।।३१।।
वृहत्सामेति मन्त्रेण रक्षैषां धूपभस्मना।
प्रणम्य पुण्डरीकाक्षं द्वादशाक्षरविद्यया।।३२।।

कौतुक संस्कार और कौतुक बन्धन प्रकार

कमल फूल, चावल, पान पत्ता, केला, नारियल आदि फलों की ढेरी पर धागों को रखकर पुण्याहवाचन करते हुए जल से प्रोक्षण करें। अर्थात् जल का छींटा डालें। शस्त्रराज सुदर्शन का उनमें आवाहन करके पूजन करें। सुदर्शन के षडक्षर मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित करें। चन्दन लेप में जल मिलाकर अपराजित विद्या से अंगूठे और अनामिका से कौतुकों को आलेपित करें। उसे देव के दाहिने हाथ में मूल मन्त्र से बाँधें। लक्ष्मी आदि देवियों के वाम हस्त में कौतुक मंगल बाँधें। आचार्यों आदि की मूर्तियों को पानीय और अंकुर अर्पण के समय प्रतिसर दाहिने हाथ में बाँधें जिससे दीक्षा की सिद्धि होती है। अन्य देवता, देवियों और मुनीश्वरों के प्रतिसर बन्धन के समय अपने-अपने उनके मन्त्रों से चक्र

मन्त्र से अभिमन्त्रित करें। 'विश्वेतात' मन्त्र से गुरु को कौतुक बाँधें। ऋत्विजों के प्रतिसरों को 'ब्रह्मेति' मन्त्र से अभिमन्त्रित करें। 'वृहत्साम' मन्त्र से राक्षसों को धूप, भस्म लगावें। पुण्डरीकाक्ष के द्वादशाक्षर विद्या से विष्णु को प्रणाम करें।

स्नपनकुंभानां स्थापनक्रमः

स्नानपीठे तु बिम्बानि समारोप्य गुरूत्तमः।
कलशान् सप्तदश च धान्यपीठे निवेशयेत्।।३३।।
घृतकुम्भं पदे ब्राह्मे सोष्णमम्बु दिवस्पतौ।
फलोदकं यमपदे स्नानीयं वारुणे दिशि।।३४।।
सौम्ये भवेदक्षताम्बु वह्नौ तु मणिजीवनम्।
यातुधाने लोहतीर्थं गन्धतीर्थं तु मारुते।।३५।।
सोमैशानयोरक्षतयवे प्राच्यां पादाम्बु कल्पनम्।
अर्घ्यतीर्थं पदे याम्ये आचामं वारुणे दिशि।।३६।।
पञ्चगव्यमुदीचीने दध्यग्नौ नैर्ऋते पयः।
मारुते मधु भूतेशे काषायाम्बुप्रकल्पनम्।।३७।।

स्नान कलशों के स्थापन का क्रम

उत्तम गुरु प्रतिमाओं को स्नानपीठ पर रखें। सत्तरह कलशों को धान्यपीठ पर रखें। घृत कुम्भ के बगल में ब्रह्मा को रखें। सूर्य को गर्म जल कुम्भ के बगल में रखें। फलोदक दक्षिण में रखें। स्नानीय जल को पश्चिम में रखें। आग्नेय में मणि जल रखें। नैर्ऋत्य में लौह जल रखें। वायव्य में गन्ध जल रखें। उत्तर में अक्षत जल और ईशान में यव रखें। पूर्व में पाद जल कल्पित करें। अर्घ्य जल दक्षिण में और आचमनीय पश्चिम में रखें। पंचगव्य उत्तर में, दही आग्नेय में और दूध नैर्ऋत्य में रखें। वायव्य में मधु और ईशान में काषाय जल रखें।

होमाभिषेचनक्रमः

देवतावाहनं कृत्वा तत्तन्नामभिरष्टधा।
आवृत्य जुहुयादग्नौ सम्पातं तत्र सेचयेत्।३८।।
मन्त्रस्तु वैष्णवः सूक्तः पुंसूक्तेनाभिषेचनम्।
घृतकुम्भस्य मन्त्रस्तु गायत्री वैष्णवी मता।।३९।।

होमाभिषेचन क्रम

देवता का आवाहन करके उनके नाम से आठ बार अग्नि में हवन करें। सम्पात घी से सेचन करें। सेचन मन्त्र वैष्णव सूक्त और पुरुष सूक्त है। घृत कुम्भ का मन्त्र वैष्णवी गायत्री है। यही विद्वानों के मत हैं।

बिम्बाधिवासनप्रकारः

शाययेद्वेदिकामध्ये शालितण्डुलकल्पिते।
सतिले मञ्चमारोप्य कृष्णाजिनपरिष्कृतम्।।४०।।
तूलिकां तत्र विन्यस्य रत्नकंबलमण्डिताम्।
क्षौमं च चित्रवस्त्रं च गण्डूषाणि च विन्यसेत्।।४१।।
शिरोपधानं च तथा सुगन्धैरधिवासयेत्।
'इदंविष्णु'रिति प्रायैमन्त्रैः परमपावनैः।।४२।।
शाययेद्देवदेवेशं सांगं वै दक्षिणे शिरः।
कम्बलैश्च दुकूलैश्च प्रतिमां छादयेद्गुरुः।।४३।।

बिम्बाधिवासन प्रकार

वेदी के मध्य में शालिचावल की ढेरी पर देव को लिटायें। मंच पर तिल बिछाकर उस पर काला मृगचर्म बिछावें। उस पर रत्न कम्बल रखकर उस पर तूलिका रखें। रेशमी और रंग-बिरंगे वस्त्र के साथ गण्डूष रखें। शिरोपधान रखें और सुगन्ध से अधिवास करें। उस पर देवदेवेश को दक्षिण तरफ शिर रखकर 'इदं विष्णु' परम पावन मन्त्र बोलते हुए सुलावें। प्रतिमा को गुरु कम्बल या दुपट्टा से ढक दें।

कुम्भस्थापनप्रकारः

आशास्वष्टस्वष्टकुम्भान् सूत्रवस्त्रादिवेष्टितान्।
सकूर्चान् पल्लवयुतान् सरत्नान् स्वर्णसंयुतान्।।४४।।
वेष्टितान् वस्त्रयुग्मेन यद्वैकेन समष्टिना।
गन्धोदकेन सम्पूर्णान् धान्यपीठे निवेशयेत्।।४५।।
शालीनां तण्डुलानूर्ध्वं तेषामूर्ध्वं तिलं भवेत्।
अन्तरान्तरवस्त्राढ्यं धान्यपीठमिदं स्मृतम्।।४६।।
तत्तत्प्रतिकृतिं तत्र सौवर्णीं विनिवेशयेत्।
कुम्भानामन्तरालेषु विन्यसेदष्टमङ्गलान्।।४७।।
अपिधाय शरावेण नालिकेरादिभिः फलैः।
अलङ्कृत्य यथायोग्यं महाकुम्भं तु पश्चिमे।।४८।।
करकेण समायुक्तं नवरत्नसमन्वितम्।
सर्वलोयुतं सर्वगन्धयुक्तं सकूर्चकम्।।४९।।
पिप्पलच्छदसंयुक्तं मूलप्रतिमयान्वितम्।
सूत्रवेष्टितसर्वाङ्गं जम्बीरफलसान्तरम्।।५०।।

वेदिकायां धान्यपीठे सशरावं निवेशयेत्।
अलङ्कुर्याद्विशेषेण वस्त्रयुग्मेन वेष्टयेत्।।५१।।
तस्य दक्षिणपार्श्वे तु तादृशं करकं न्यसेत्।
तोरणानामुभयतः द्वारकुम्भौ निवेशयेत्।।५२।।
अलङ्कुर्याद्यथायोगं पूरयेद्गन्धवारिणा।
महाकुम्भं च करकं पूरयेद्गन्धवारिभिः।।५३।।
एवं संस्थाप्य मेधावी वेदघोषे प्रवर्तिते।
तूर्यवादित्रनिनदे प्रवृद्धेऽति कुतूहले।।५४।।
आवाहयेन्महाकुम्भे वासुदेवं सनातनम्।

।। इति भार्गवतन्त्रेऽष्टमोऽध्यायः।।

कुम्भस्थापन प्रकार

आठ घटों को सूत्र वस्त्रादि से वेष्टित करें। घटों में सोना और रत्न डालें। घट के मुख पर पल्लव और कूर्च रखें। सबों को दो वस्त्रों से या एक ही वस्त्र से वेष्टित करें। उनमें सुगन्धित जल भरें। उन्हें धान्यपीठ पर रखें। शालिचावल पर तिल रखें। अन्तरान्तर वस्त्राढ्य करें। इसे धान्यपीठ कहते हैं। उरु पर सोने की प्रतिमा रखें। कुम्भों के अन्तराल में आठ प्रकार के मांगलिक द्रव्यों को रखें। घटों पर ढक्कन और ढक्कन पर नारियल आदि के फूल रखें। यथायोग्य अलंकृत महाकुम्भ को पश्चिम में रखें। उसके साथ नवरत्न युक्त सर्वलौहयुक्त, सर्वगन्ध समन्वित कूर्च युक्त पीपल पत्रों से युक्त करके रखें। उरु पर मूल प्रतिमा रखें। उसके सभी अंगों को सूत्र में वेष्टित करें। जम्बीर फल को दूरी पर रखें। वेदी पर धान्यपीठ बनाकर ढक्कन सहित रखें। विशेष रूप से अलंकृत करें। दो वस्त्रों से वेष्टित करें। उसके दायें तरफ उसी प्रकार के करक रखें। तोरण के दोनों द्वार कुम्भ रखें। उन्हे यथायोग्य अलंकृत करें। उनमें सुगन्धित जल भरें। महाकुंभ और करकों में भी सुगन्धित जल भरें। इस प्रकार स्थापित करके मेधावी वेदघोष करें। वाद्यों को बजवावें। इससे कुतूलह बढ़ती है। महाकुंभ में सनातन वासुदेव का आवाहन करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में आठवाँ अध्याय सम्पूर्ण।।

नवमोऽध्यायः

प्रतिष्ठाङ्गकुंभार्चनादिविधिनिरूपणाध्यायः

कुंभतोरणाद्याराध्यदेवताविवेक:

श्रीरामः

गम्भीरवेदनिर्घोषवादित्रध्वनिमण्डिते ।
दिगन्तरे द्विजगणे प्रसन्नवदनान्विते।।१।।
मङ्गलालापचतुरे संहृष्टवनिताजने।
आकाशे निर्मले ज्योत्स्नामङ्गले चन्द्रमण्डले।।२।।
सुखस्पर्शे गन्धवहे निर्मले मानसे गुरोः।
सुमुहूर्ते शुभे लग्ने कुम्भावाहनमाचरेत्।।३।।
पुण्याहं वाचयेत् सार्धं ब्राह्मणैः वेदपारगैः।
प्रोक्षयेदखिलान् कुंभान् यागद्रव्याणि तोरणान्।।४।।
भूतशुद्धिं पुरा कृत्वा मानसं यागमाचरेत्।
पूर्वस्मिन् तोरणे पूज्यो महेन्द्रः पाकशासनः।।५।।
ध्वजयोरन्तरयोस्तत्र पार्श्वयोर्वेष्टयेद्गुरुः।
कुमुदं कुमुदाक्षं च पौर्वापर्येण पूजयेत्।।६।।
कुंभयोरुभयोस्तत्र पूजयेत्पूर्णपुष्करौ।
धर्मराजं तथा याम्ये तोरणे ध्वजयोस्तथा।।७।।
पुण्डरीको वामनश्च कुंभयोरुभयोरपि।
आनन्दो नन्दनश्चोभौ पूजनीयौ यथाक्रमम्।।८।।
वारुणे तोरणे चापि वरुणं देवमर्चयेत्।
पार्श्वयोर्ध्वजयोर्देवौ शङ्कुश्रुतिसुनेत्रकौ।।९।।
कुंभयोर्वीरसेनं च सुषेणं च समर्चयेत्।
सौम्ये तु तोरणे सोमं बद्धयोर्ध्वजयोस्तयोः।।१०।।
सुमुखं सुप्रतिष्ठं च सम्भवप्रभवौ तथा।
कुम्भयोरर्चयेद्देवौ दक्षिणादित्रयो ध्वजाः।।११।।
पीतनीलास्तथा श्वेताः कल्पिताः कलशोद्भव।

प्रतिष्ठाङ्ग कुंभार्चन विधि का निरूपण

कुंभ, तोरण आदि के आराध्य देवता का विवेक

श्री भार्गव राम ने कहा कि गम्भीर वेद निर्घोष, वाद्यों की ध्वनि से मण्डित, दिगन्तर, प्रसन्न मुख ब्राह्मण, मंगल गायन में चतुर, प्रसन्न वनिताजन, आकाश में निर्मल ज्योत्सना, मंगल चन्द्रमण्डल, सुगन्धित वायु के स्पर्शयुक्त निर्मल मानस गुरु शुभ मुहूर्त, शुभ लग्न में कुम्भ में आवाहन करें। वेदपारग ब्राह्मणों के साथ पुण्याहवाचन करें। तब सभी कुंभों, याग द्रव्यों और तोरणों का प्रोक्षण करें। पहले भूत शुद्धि करें तब मानस पूजन करें। पूर्व द्वार के तोरण में पाकशासन इन्द्र पूज्य हैं। वहाँ ध्वज के अन्तराल के दोनों पार्श्वों को गुरु वेष्टित करें। वहाँ कुमुद और कुमुंदाक्ष की पूजा करें। कुंभ के दोनों ओर पूर्ण और पुष्कर की पूजा करें। धर्मराज की पूजा दक्षिण तोरण और ध्वज में करें। कुंभ के दोनों ओर पुण्डरीक और वामन की पूजा करें। वही पर आनन्द और नन्दन दोनों की पूजा यथाक्रम करें। पश्चिम के तोरण में वरुण की पूजा करें। ध्वज के पार्श्वों में शंख श्रुति सुनेत्र की पूजा करें। कुंभ में वीरसेन सुषेण का समर्चन करें। उत्तर के तोरण में चन्द्र की पूजा करें। उसमें बँधे ध्वज में सुमुख सुप्रतिष्ठ, शम्भव और प्रभव की पूजा करें। दक्षिण आदि के कुम्भ और ध्वज पीला, नीला, श्वेत बनावें।

तत्तद्वेदपारायणस्थाननिर्देशः

ऋचं प्राच्यां यजुर्याम्ये सामनाम च वारुणे।।१२।।
अथर्वणं तथोदीच्यां पाठयेद्ब्राह्मणोत्तमः।

वहाँ वेद पारायण स्थान निर्देश

पूर्व में ऋग्वेद का, दक्षिण में यजुर्वेद का, पश्चिम में सामवेद का और उत्तर में अथर्ववेद का पाठ उत्तम ब्राह्मण करें।

कुंभे भगवदर्चनं होमप्रकारश्च

आवाहनं तु सर्वत्र योगपीठपुरस्सरम्।।१३।।
शायितानां तु बिम्बानां परितः स्थापितेष्वपि।
कुम्भेष्वावाहनं कुर्यात् प्रागाद्याशापुरस्सरम्।।१४।।
विष्णवादिमूर्तिरष्टौ च तदस्येत्यादिभिः क्रमात्।
अष्टभि'र्विष्णुसूक्त'स्य तेषां पूजा यथाक्रमम्।।१५।।
ततस्तु परमात्मानं वासुदेवं सनातनम्।
महाकुम्भे समावाह्य 'द्वादशाक्षर'विद्यया।।१६।।

सुदर्शनं च करके सहस्रादित्यसन्निभम्।
आवाह्य पूजयेद्धीमान् अर्घ्याद्यैः स्व स्व विद्यया।।१७।।
अर्घ्यं पाद्यं तथाचामं स्नानवस्त्रोपवीतके।
गन्धं पुष्पं धूपदीपौ अर्चनं चाक्षतं स्तुतिः।।१८।।
नैवेद्यं परमान्नादि ताम्बूलं गन्धवस्तुभिः।
नीराजनं स्तुतिश्चान्ते नमस्कारं प्रदक्षिणम्।।१९।।
एवं समाप्य तां पूजां ततः कुण्डेऽग्निमर्चयेत्।
समिद्भिश्चरुभिश्चाज्यैर्बीजैश्चाहुतिमाचरेत्।।२०।।

कुंभ में भगवत अर्चन होम प्रकार

पहले योगपीठ बनाकर सर्वत्र आवाहन करें। सोयी हुई प्रतिमा के चारों ओर स्थापित कुम्भों में पूर्वादि क्रम से आवाहन करें। विष्णवादि आठों मूर्तियों में विष्णवादि क्रम से आवाहन करें। आठों की पूजा यथाक्रम विष्णु सूक्त से करें। तब सनातन परमात्मा वासुदेव का आवाहन महाकुम्भ में द्वादशाक्षर विद्या से करें। यह विद्या 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' है। करक में हजार सूर्यों के समान ज्योर्तिमय सुदर्शन चक्र का आवाहन करें। उनके-उनके मन्त्रों से अर्घ्य आदि से उनकी पूजा करें। अर्घ्य, पाद्य, आचमनीय, स्नान, वस्त्र, जनेऊँ, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, अक्षत, स्तुति, परमान्न का नैवेद्य, पान, गन्ध वस्तु, नीराजन स्तुति, नमस्कार और प्रदक्षिणा से करें। इस प्रकार की पूजा के बाद कुण्ड में अग्नि का अर्चन करें। समिधाओं, चरु, गोघृत, बीजों की आहुति डालें।

भगवतः वासुदेवस्य ध्यानप्रकारः

अगस्त्यः

राम राम जगन्नाथ वासुदेव सनातन।
कथं ध्यायेद्वासुदेवं ब्रूहि मे कृपया विभो।।२१।।

भगवत वासुदेव का ध्यान प्रकार

हे जगन्नाथ! भार्गव राम से अगस्त्य ने कहा कि सनातन वासुदेव का ध्यान कैसा है? हे विभो कृपया आप मुझे बतलाइये।

श्रीरामः

वासुदेवमजं शान्तं कोट्यर्केन्द्वग्निसन्निभवम्।
अनेकहस्तचरणमनेकाक्षिशिरोमुखम् ।।२२।।
अतीन्द्रिममर्यादम् अत्यद्भुतवपुर्धरम्।
भासयन्तं दिशः सर्वाः देहनिर्यत्प्रभाचयैः।।२३।।

अनेकाभरणैर्युक्तमनेकायुधमण्डितम् ।
नानावर्णमयं देवं स्वयं सुरभिविग्रहम्।।२४।।
ऋषिभिश्च मरीच्याद्यैर्ब्रह्माद्यैरपि दैवतैः।
अचिन्त्यमहिमानं तमिन्दिराद्यैरभिष्टुतम्।।२५।।
को वा ध्यातुं क्षमो लोके को वा स्तोतुं भुवि क्षमः।
तथापि परमेशानं पुरुषं भक्तवत्सलम्।।२६।।
चतुर्भुजमुदाराङ्गं शङ्खचक्रगदाधरम्।
किरीटहारकटककाञ्चीकुण्डलमण्डितम्।।२७।।
श्रीवत्सकौस्तुभस्वच्छयज्ञसूत्राङ्गुलीयकम्।
दिव्यपीताम्बरधरं कलक्वणितनू पुरम्।।२८।।
अष्टभिश्चापि देवीभिः प्राञ्जलीभिश्च सेवितम्।
पक्षीन्द्रविष्वक्सेनाभ्यां परिवारैश्च सेवितम्।।२९।।
अतिप्रसन्नवदनं बालकं तिलकोज्वलम्।
अभयप्रदमासीनं शेषभोगासने शुभे।।३०।।
दिव्यगन्धविलिप्ताङ्गं नानामाल्योपशोभितम्।
स्मितेन विजितज्योत्स्नं नीलनीरजलोचनम्।।३१।।
कम्बुकण्ठं महासत्वं पीनोत्तुङ्गांसशोभितम्।
उत्तुंगपीनविपुलसमस्निग्धमहोरसम् ।।३२।।
पुष्टोदरं मग्ननाभिं पृथुश्रोणीभराञ्चितम्।
ऊरुद्वयकृतद्वन्द्वरंभासंरंभलक्षितम् ।।३३।।
चरणद्वन्द्वविजितविकसत्सरसीरुहम् ।
अङ्गुष्ठनखनिर्यद्भिर्भानुभिर्जितभास्करम् ।।३४।।
आजानुदीर्घैः पृथुलैः हस्तैरायुधधारिणम्।
ध्यात्वैवं वासुदेवं तं कुर्यादावाहनक्रियाम्।।३५।।

श्री भार्गव राम ने कहा वासुदेव अजन्मा शान्त करोड़ों सूर्य चन्द्र अग्नि के समान प्रकाशमान है। उनके अनेक हाथ, पैर, आँखें, शिर और मुख हैं। वे अतीन्द्रिय, अमर्याद, अति अद्भुत, वपु वाले हैं। सभी दिशाओं को अपने शरीर से निकले प्रकाश से प्रकाशित किये हुए हैं। उनके आभरण अनेक हैं। वे अनेक आयुधों से मण्डित हैं। नाना वर्णमय देव स्वयं सुरभि विग्रह हैं। मरीचि आदि

सभी ऋषि, ब्रह्मादि सभी देवताओं में उनकी महिमा अचिन्त्य है। लक्ष्मी आदि देवियों के वे अराध्य हैं। संसार में उनका ध्यान करने में कौन सक्षम है। पृथ्वी पर उनकी स्तुति कौन कर सकता है। तथापि भक्त वत्सल परम ईशान पुरुष का ध्यान इस प्रकार का है—

चतुर्भुजमुदाराङ्गं शङ्खचक्रगदाधरम्।
किरीटहारकटककाञ्चीकुण्डलमण्डितम् ॥
श्रीवत्सकौस्तुभस्वच्छयज्ञसूत्राङ्गुलीयकम् ।
दिव्यपीताम्बरधरं कलक्वणितनू पुरम्॥
अष्टभिश्चापि देवीभिः प्राञ्जलीभिश्च सेवितम्।
पक्षीन्द्रविष्वक्सेनाभ्यां परिवारैश्च सेवितम्॥
अतिप्रसन्नवदनं बालकं तिलकोज्वलम्।
अभयप्रदमासीनं शेषभोगासने शुभे॥
दिव्यगन्धविलिप्ताङ्गं नानामाल्योपशोभितम्।
स्मितेन विजितज्योत्स्नं नीलनीरजलोचनम्॥
कम्बुकण्ठं महासत्वं पीनोत्तुङ्गांसशोभितम्।
उत्तुंगपीनविपुलसमस्निग्धमहोरसम् ॥
पुष्टोदरं मग्ननाभिं पृथुश्रोणीभराञ्चितम्।
ऊरुद्वयकृतद्वन्द्वरंभासंरंभलक्षितम् ॥
चरणद्वन्द्वविजितविकसत्सरसीरुहम् ।
अङ्गुष्ठनखनिर्यद्भिर्भानुभिर्जितभास्करम् ॥
आजानुदीर्घैः पृथुलैः हस्तैरायुधधारिणम्।
ध्यात्वैवं वासुदेवं तं कुर्यादावाहनक्रियाम्॥

तत्तद्देवानां होमक्रमनिर्देशः

मथितं मणिजं यद्वा लौकिकं वा हुताशनम्।
'द्वादशाक्षर'मन्त्रेण प्रोक्षयित्वा ससर्पिषा॥३६॥

उन देवताओं के होम कर्म का निर्देश

अरणिमन्थन से मणिजात अथवा लौकिक अग्नि का प्रोक्षण द्वादशाक्षर मन्त्र से गोघृत से करें।

पर्यग्निकरणं कुर्यात् कुण्डानां दर्भमुष्टिभिः।
उद्दीप्य ज्वलनं सम्यक् 'परिवाजती'त्यृचा॥३७॥
संस्कुर्यात्पश्चिमे कुण्डे ज्वलन्तं जातवेदसम्।
प्रागादिषु च कुण्डेषु प्रत्यक् कुण्डात् समाहरेत्॥३८॥

अग्निमध्ये तु कुण्डेषु योगपीठं प्रकल्पयेत्।
शुनासीरे वासुदेवं याम्ये सङ्कर्षणं तथा।।३९।।
प्रद्युम्नं वारुणे कुण्डे अनिरुद्धमुदक्पदे।
एवमावाह्य देवेशं पूजयेत्सर्पिषा ततः।।४०।।

कुश मुष्टिका से कुण्डों का पर्यग्निकरण करें। 'परिवाजती' ऋचा से अग्नि को सम्यक् रूप से प्रज्वलित करें। पश्चिम कुण्ड में प्रज्वलित अग्नि का संस्कार करें। पूर्वादि कुण्डों में पश्चिम कुण्ड से अग्नि ले जायें। कुण्डों की अग्नि के मध्य में योगपीठ कल्पित करें। पूर्व कुण्ड में वासुदेव का, दक्षिण कुण्ड में संकर्षण का, पश्चिम कुण्ड में प्रद्युम्न का और उत्तर कुण्ड में अनिरुद्ध का आवाहन करें। इस प्रकार के आवाहन के बाद देवेश की पूजा गोघृत से करें।

होमक्रमे समिधादिविवेकः

चतस्त्रः समिधः प्रोक्ता प्रागादिषु यथाक्रमम्।
पलाशखदिराश्वत्थविल्वोदुम्बरभूरुहाः।।४१।।
अलाभे सर्वकुण्डेषु पालाश्येकैव शस्यते।
पायसं कृसरं चापि गुडान्नं च यथाक्रमम्।।४२।।
हरिद्रान्नं च पूर्वादिकुण्डेषु चरवः स्मृताः।
पायसान्नेन वा कुर्यात् शुद्धान्नेनाथवा भवेत्।।४३।।
तिलशालियवा वेणुर्होमे बीजान्यनुक्रमात्।
तिलैर्वा सर्वकुण्डेषु बीजालाभे समाचरेत्।।४४।।
वासुदेवादिभिर्मन्त्रैर्होमाः प्रागादिवह्निषु।
समिद्भिराज्यैश्चरुभिः बीजैः कार्याश्च मूर्तिपैः।।४५।।
अष्टोत्तरशतं होमः प्रत्येकं कलशोद्भव।
एवं जुह्वत्सु ऋत्विक्षु मूर्तिहोमं यथाक्रमम्।।४६।।

हवन क्रम में समिधा आदि का विवेक

पलाश, खैर, पीपल, बेल की समिधाओं को पूर्वादि कुण्डों में क्रम से डालें। खीर, खीचड़ी, गुड़ का खीर हल्दी के साथ पक्वान्न से कुण्डों में पूर्वादि क्रम में चरु के रूप में हवन करें। अथवा केवल खीर से या शुद्ध अन्न से हवन करें। वेणु हवन तिल, शालिचावल और यव से क्रमशः करें। अन्य बीज उपलब्ध न होने पर सभी कुण्डों में तिल से ही हवन करें। वासुदेवादि के मन्त्रों से हवन पूर्वादि कुण्डों में क्रमशः करें। समिधा, गोघृत, चरु और बीजों

से हवन करें। प्रत्येक कुण्ड में एक सौ आठ आहुतियों से हवन करें। इस प्रकार ऋत्विज मूर्ति हवन यथाक्रम से करें।

तत्त्वहोमविधिः

तत्त्वहोमं स्वयं कुर्यात् ब्राह्मकुण्डे गुरूत्तमः।
पुरस्ताद्देवदेवस्य बिम्बं भूतमयं स्मरेत्।।४७।।
अर्घ्याद्यैरुपचर्याथ तत्त्वसंहारमाचरेत्।
संहरेत्पृथिवीमप्सु तां वह्नौ तं च मारुते।।४८।।
तमाकाशे च मनसि तच्च तन्मात्रया सह।
तदीयैश्चापि तत्त्वैश्च तन्मनोऽहंकृतौ हरेत्।।४९।।
अहंकृतिं ततो बुद्धौ प्रकृतौ तां समाहरेत्।
तां च जीवे ततोऽभ्यर्च्य पुनरुत्पादयेद्गुरुः।।५०।।
प्राचीनकुण्डे जुहुयात् तत्त्वानि कपिलाघृतैः।
वर्मणा परिषिच्यादौ सृष्टिपन्थानमास्थितः।।५१।।
तत्त्वव्याहृतिभिः कुर्यात् पृथगष्टोत्तरं शतम्।
अष्टाविंशति वाष्टौ वा प्रतिमन्त्राहुतिर्भवेत्।।५२।।

तत्व होम विधि

गुरु श्रेष्ठ ब्रह्मकुण्ड में तत्व होम स्वयं करें। अपने-अपने देवदेव की प्रतिमा को पंचभूतात्मक मानें। अर्घ्य आदि उपचारों के लिये तत्वों का संहार करें। पृथ्वी को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में और वायु को आकाश में, आकाश को मन में, मन को तन्मात्रा में और सबों के साथ मन को अहंकार में, अहंकार को बुद्धि में विलीन करें। बुद्धि को प्रकृति में विलीन करें, प्रकृति को जीव में विलीन करें। इसके बाद गुरु उसका पूजन करें। फिर उसका उत्पादन करें। प्राचीन कुण्ड में तत्त्वों का हवन कपिला गाय के घी से करें। पहले कवच मन्त्र से परिसिंचित करें। तब सृष्टि पथ में आस्थित करें। तत्वों से एक सौ आठ हवन व्याहृतियों से करें। आठों कुण्डों में से प्रत्येक में अट्ठाईस या आठ हवन प्रत्येक मन्त्र से करें।

मकाराद्यक्षरतत्त्वानां प्रतिमाङ्गेषु न्यासक्रमः

जीवमन्त्रो मकारः स्यात् भकारः प्रकृतिर्भवेत्।
बुद्धितत्त्वं बकारः स्यात् फकारः स्यादहंकृतिः।।५३।।
मनस्तत्त्वं पकारः स्यात् प्रतिमाहृदयस्थिताः।
नकारश्शब्दतन्मात्रं श्रोत्रैकविषयं भवेत्।।५४।।

धकारः स्पर्शतन्मात्रं त्वचि नित्यं प्रतिष्ठितम्।
दकारो रूपतन्मात्रं नेत्रयोर्विषयं भवेत्।।५५।।
थकारो रसतन्मात्रं जिह्वायामेव वर्तते।
तकारो गन्धतन्मात्रं वर्तते नासिकाञ्चले।।५६।।
णकारः श्रोत्रतत्त्वं स्यात् श्रोत्रयोर्नित्यमावसेत्।
ढकारस्तु त्वगात्मा स्यात् त्वचि सर्वत्र वर्तते।।५७।।
डकारो नेत्र तत्त्वात्मा नित्यं नयनयोर्वसेत्।
जिह्वात्मा तु ठकारः स्यात् जिह्वारूपं जगत्रये।।५८।।
घ्राणात्मा तु टकारः स्यात् नासिकाग्रे निवेशितः।
ञकारो वाङ्मयो वर्णो वाचि नित्यं प्रतिष्ठितः।।५९।।
झकारः करतत्त्वं स्यात् करयोर्विधिनिर्मितः।
जकारः पादतत्त्वार्णः नित्यं पादतले स्थितः।।६०।।
छकारः पायुतत्त्वात्मा पायुमूलमुपाश्रितः।
चकारो मेहनात्मा स्यात् मेहने सन्निवेशितः।।६१।।
ङकारः पृथिवीतत्त्वम् पादाज्जानुप्रवर्तकम्।
अप्तत्त्वं तु घकारस्स्यात् जानोर्गुह्यावधिस्थितः।।६२।।
तेजस्तत्त्वं गकारः स्यात गुह्यादानाभि वर्तते।
खकारो वायुतत्त्वात्मा नाभेर्नासान्तमास्थितः।।६३।।
ककारोऽम्बरतत्त्वात्मा ततो ब्रह्मबिलावधि।
एवं तत्त्वाक्षरः प्रोक्तः प्रणवादि समुद्धरेत्।।६४।।
प्रणवस्तत्त्वमन्त्रश्च नतिश्च स्थाननाम च।
चतुर्थ्यन्तं समुद्धृत्य वह्निजायां गुरूत्तमः।।६५।।
हुत्वा सम्पातमाहृत्य तत्तदङ्गेषु सेचयेत्।

मकरादि अक्षर से तत्वों का न्यास प्रतिमा के अंगों में करने का क्रम

मकार जीव मन्त्र है और भकार प्रकृति है। बुद्धि तत्व बकार है। फकार अहंकार है। पकार मनस्तत्व प्रतिमा के हृदय में स्थित है। नकार शब्द तन्मात्रा कर्णों का विषय है। धकार स्पर्श तन्मात्रा त्वचा में नित्य प्रतिष्ठित है। दकार रूप तन्मात्रा नयनों का विषय है। थकार ररा तन्मात्रा जिह्वा का विषय है। तकार गन्ध तन्मात्रा का नासिका अंचल में वास है। णकार श्रोत्रतत्व का वास नित्य कानों में रहता है। ढकार त्वगात्मा सर्वत्र त्वचा में रहता है। डकार नेत्र तत्वात्मा का

वास सर्वदा नयनों में रहता है। जिह्वात्मा ठकार तीनों लोकों में जिह्वा रूप में रहता है। घ्राणात्मा टकार का वाम नासिकाग्र में रहता है। ञकार वाङ्मय वर्ण का वास सर्वदा वाणी में रहता है। झकार करतत्व का वास हाथों में रहता है। जकार पाद तत्व वर्ण का वास नित्य पैरों के तलवों में रहता है। छकार पायुतत्वात्मा का वास पायुमूल के बगल में रहता है। चकार लिंगात्मा का वास लिंग में रहता है। ङकार पृथ्वी तत्व पैर से जानु तक प्रवर्तन करता है। घकार जल तत्व घुटनों से गुह्य तक रहता है। गकार अग्नितत्व का वास गुह्य से नाभि तक रहता है। खकार वायु तत्वात्मा की स्थिति नाभि से नासान्त तक रहती है। ककार आकाश तत्वात्मा का निवास नासान्त से ब्रह्मरन्ध्र तक रहता है। इस प्रकार के तत्वाक्षरों को निरूपित किया गया है। इनके पहले ॐ लगाकर इसका उच्चारण करें। प्रणव तत्व मन्त्र का स्थान नाम निश्चित नहीं है। चतुर्थ्यन्त समुद्धृत करके अन्त में स्वाहा लगावें। जैसे ॐ ककाराय स्वाहा इत्यादि हवन के सम्पात घृत को प्रतिमा के अंगों में लगावें।

प्रतिमायां शक्तिनिवेशप्रकार:

एवं हुत्वा ततः प्राणवायुहोमं समाचरेत्।।६६।।
प्राणं हुत्वा सुषुम्नायामिलायां तदनन्तरम्।
अपानं पिङ्गलायान्तु समानं गन्धसंज्ञिके।।६७।।
उदानं हस्तिजिह्वायां व्यानवायुं निवेशयेत्।
पूषायामपि नागेन्द्रं यशस्विन्यां तु कच्छपम्।।६८।।
अलम्बुसायां कृकरं देवदत्तं कुहूपदे।
धनञ्जयं तु कैशिन्यां हुत्वा हुत्वा स्वविद्यया।।६९।।
सम्पातं सेचयेद्बिम्बे तत्र शक्तिं निवेशयेत्।
शङ्खं चक्रं गदापद्मं शाङ्‌र्गं श्रीवत्सकौस्तुभे।।७०।।
वनमालां खगेशं च हुत्वा सम्पातसेचनम्।
'असुनीते'ति मन्त्रेण अष्टोत्तरशताहुतीः।।७१।।
हुत्वा प्राणप्रतिष्ठार्णं शिरस्केनाज्यसेचनम्।
सम्पातसेचने काले तत्तच्छक्तिं निवेशयेत्।।७२।।

प्रतिमा में शक्ति निवेश प्रकार

ऐसा हवन करने के बाद प्राणवायु हवन करें। प्रण का हवन सुषुम्ना में करें। अपान का हवन पिंगला नाड़ी में करें। समान वायु का हवन इड़ा में करें। उदान का निवेश हस्ति जिह्वा में करें। व्यान वायु का निवेश पूषा में करें।

नागेन्द्र का निवेश यशस्विनी में करें। अलम्बुसा में कच्छप का निवेश करें। कृकर देवदत्त का निवेश कुहूपद में करें। धनंजय का निवेश केशिनी में करें। सबों का हवन उनकी विद्याओं से करें। प्रतिमा का सेचन सम्पात घी से करें। तब शक्ति का विनिवेश करें। शंख, चक्र, गदा, पद्म, शार्ङ्ग, श्रीवत्स, कौस्तुभ, वनमाला, गरुड़ का हवन करके उनमें संपात घृत लगावें। 'असुनेति' मन्त्र से एक सौ आठ आहुति डालें। प्राण प्रतिष्ठा वर्णों से हवन के बाद शिर का सेचन करें। सम्पात सेचन के समय उनके शक्तियों का निवेश उनमें करें।

चण्डादिपरिवाराणाम् अधिवासनादिविधिः

चण्डादीनां च पीठानां परिवारगणस्य च।
अन्येषामपि सर्वेषां धान्यपीठेऽधिवासनम्।।७३।।
कृत्वा तत्तद्विद्ययैव हुत्वा चाष्टोत्तरं शतम्।
सर्पिषाऽहृत्य सम्पातं तत्तद्बिम्बेषु सेचयेत्।।७४।।
एवं निरवशेषेण कृते होमे यथाविधि।
शान्तिहोमं ततः कुर्यात् सर्वदोषापनुत्तये।।७५।।
ओं भूर्भुवः सुवः स्वाहेत्यष्टोत्तरसहस्रकम्।
अष्टोत्तरशतं यद्वा सर्पिषा पूर्ववर्हिषि।।७६।।
हुत्वा सम्पातमादाय सर्वेष्वङ्गेषु सेचयेत्।

चण्डादि परिवारों की अधिवासनादि विधि

चण्डादि और पीठों के परिवारों और सभी अन्यों का अधिवासन धान्यपीठ पर करें। उनके मन्त्रों से हवन करने के बाद एक सौ आठ बार हवन करें। सम्पात गोघृत लेकर उनकी प्रतिमाओं में लगावें। इस प्रकार निरवशेष हवन यथाविधि करने के बाद सभी दोषों की शान्ति के लिये शान्ति हवन करें। 'ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा' से एक हजार आठ हवन करें। यदि गोघृत से हवन करें तो एक सौ आठ हवन करें। हवन के बाद सम्पात घृत सभी के अंगों के लगावें।

एकबेरबहुबेरप्रतिष्ठाविधौ विशेषः

ब्राह्मे पदे स्थापनीये ध्रुवबेरे मुनीश्वर।।७७।।
वेदिकादिघटाम्बोभिरब्लिङ्गैः प्रोक्षयेत्ततः।
आग्नेयादिघटाम्भोभि'र्विष्णुगायत्रियो'क्षणम्।।७८।।
बहुबेरे तु सदनं प्रविश्यैवोक्षणं भवेत्।
ततश्चतुर्विधान्नं च हरये विनिवेदयेत्।।७९।।
प्रणवेनोपचारांस्तान् सर्वानपि समाचरेत्।

एक मूर्ति अनेक मूर्ति प्रतिष्ठा की विधि विशेष

बाह्य पद में स्थापनीय अचल मूर्तियों को वेदिका, घटजल और अब्लिङ्ग का प्रोक्षण, आग्नेयादि घट जल के द्वारा 'विष्णुगायत्री' से करें। अनेक मूर्तियों का सदन में प्रवेश वीक्षण करें। तब चार प्रकार का अन्न शिव को निवेदित करें। प्रणव से सभी उपचारों को अर्पित करें।

बलिसमर्पणविधि:

बिम्बमुत्थाप्य तेजस्वी प्राङ्मुखं विनिवेश्य च।।८०।।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैः बलिदानं समाचरेत्।
माषोदनेन भूतेभ्यः सर्वेभ्योऽपि यथाविधि।।८१।।
गोमयालेपिते भूमितले सम्यगलङ्कृते।
आद्याश्च कर्मजाश्चैव भूताः प्रागादिषु स्थिताः।।८२।।
पर्वतेष्वप्यरण्येषु वृक्षाग्रेषु वसन्ति ये।
आलयेषु च तीर्थेषु ऋषीणामाश्रमेषु च।।८३।।
कूपेषु च तटाकेषु ये वसन्ति गृहादिषु।
उत्तमाः मध्यमाश्चापि राजसास्तामसास्तु वा।।८४।।
बल्यर्थिनः समायान्तु तेभ्यः पूजां करोम्यहम्।
इदमर्घ्यमिदं पाद्यमिदमाचमनीयकम्।।८५।।
स्नानमेतत् सगन्धोदं वस्त्रमेतत्सुनिर्मलम्।
इदं गन्धमिदं पुष्पम् इदं धूपं सदीपकम्।।८६।।
अनर्घमक्षतमिदं गृह्णन्तु बलिदेवताः।
माषौदनं तत् सघृतं दधिमिश्रं गुडान्वितम्।।८७।।
भक्ष्यैश्च विविधैर्युक्तं पायसेन च मिश्रितम्।
ताम्बूलपूगसहितं मधुद्रवसमन्वितम्।।८८।।
भोक्तुं त्रिपुरुषैर्योज्ञं मिश्रयेत्पयसा गवाम्।
विभज्य तत्त्रिधा धीमान् बलिदानं समाचरेत्।।८९।।

बलि समर्पण विधि

प्रतिमा को उठाकर तेजस्वी पूर्वमुख विनिवेश करें। गन्ध, पुष्पादि से पूजन के बाद बलिदान का समाचरण करें। उड़द भात की बलि सभी भूतों को विधिवत् प्रदान करें। गोबर से लिये भूतल को सम्यक् रूप से अलंकृत करके आद्य और कर्मज भूतों को पूर्वादि क्रम से बैठावें। पर्वत में, जंगल में, वृक्षों के

अग्र में जो भूत रहते हैं, जो घरों में, तीर्थों में और ऋषि आश्रमों में, कूपों में, सरोवर तटों में, घरों में जो उत्तम मध्यम या राजस, तामस बलि के अधिकारी हैं वे सब आयें। उनका पूजन मैं करता हूँ। इदम अर्घ्य, इदम पाद्ये, इदम आचमनीयकम्, सगन्धोदक स्नानम् एतत निर्मल वस्त्रम एतत इदं गन्ध इदं पुष्पं इदं धूपं दीपम् इदं अनर्घ अक्षतम् करें। बलि देवता ग्रहण करें। उड़द भात, घी, दही, गुड़, विविध भक्ष्य, पायस, पान, कसैली, मधु ग्रहण करें। भोक्ता तीन पुरुष योग्य पायस को तीन भाग करके बलि प्रदान करें। मन्त्र पाठ करें।

कुर्वन्ति विघ्नं ये भूताः धर्मकार्येषु ये भुवि।
ये हरन्ति च पुण्यानि तेभ्यस्तेभ्यः अयं बलिः।।९०।।
विनियुज्य च कार्येषु फलार्थं विन्दते च ये।
राजसा मध्यमगुणाः तेभ्यस्तेभ्यः अयं बलिः।।९१।।
यागादिषु प्रवृत्तेषु दृष्ट्वा तुष्टिमवाप्नुयुः।
ये भूताः उत्तमगुणाः तेभ्यस्तेभ्यः अयं बलिः।।९२।।

श्लोक ९०, ९१, ९२ भूतबलि के मन्त्र हैं।

प्रतिष्ठास्थानात् गन्तुं बलिदेवप्रार्थनाक्रम:

दत्त्वैव बलिमाचार्यः प्रार्थयेद्बलिदेवताः।
प्रतिष्ठा देवदेवस्य क्रियते परमात्मनः।।९३।।
इतः प्रभृति युष्माभिर्नैषा वस्तुं क्षमा मही।
तस्मादन्यत्र गच्छध्वं बलिदानेन तोषिताः।।९४।।
देशिकः प्रार्थयेदेवं विनीतो बलिदेवताः।
ते तुष्टाः बलिदानेन प्रार्थिताः यान्ति निश्चयम्।।९५।।

प्रतिष्ठा स्थापन के बाद जाने वाले बलि देवों कें प्रार्थना का क्रम

प्रतिष्ठा देवदेवस्य क्रियते परमात्मनः।
इतः प्रभृति युष्माभिर्नैषा वस्तुं क्षमा मही।
तस्मादन्यत्र गच्छध्वं बलिदानेन तोषिताः।।

देशिक की ऐसी प्रार्थना से बलि देवता बलिदान से सन्तुष्ट प्रार्थित होने पर निश्चय वहाँ से चले जाते हैं।

पिण्डिकाद्यधिवास: तदङ्गभूतहोमश्च

पिण्डिकां देवदेवस्य धान्यपीठेऽधिवासयेत्।
रत्नान्यपि च लोहानि धान्यान्यप्यधिवासयेत्।।९६।।

पृथक् पृथक् भाजनेषु वासोभिर्वेष्टयेन्नवैः।
विष्णुगायत्रियाज्येन होमश्चाष्टोत्तरं शतम्।।९७।।

पिण्डिका आदि के अधिवास उसके अंगभूत हवन

देवदेव की पिण्डी को धान्यपीठ पर अधिवासित करें। रत्नों और लौहों की पिण्डिकाओं का अधिवास भी धान्यपीठ पर करें। अलग-अलग पात्रों को नये वस्त्रों से वेष्टित करें। विष्णुगायत्री के द्वारा गोघृत से एक सौ आठ हवन करें।

प्रतिसरबन्धः पूर्णाहुतिक्रमः मङ्गलसूचकलक्षणानि च

हेमसूत्रं प्रतिसरं प्रतिष्ठार्थं गुरूत्तमः।
बन्धयेद्देवदेवस्य हस्ते पुण्याहपूर्वकम्।।९८।।
ततः पूर्णाहुतिं कुर्युः कुण्डे कुण्डे यथाक्रमम्।
पुण्यगन्धवहो धूमः ज्वालादक्षिणमण्डला।।९९।।
अग्निः कनकवर्णाभः यद्वा कमलसन्निभः।
आचार्यस्य मनस्तुष्टिरिमे मङ्गलसूचकाः।।१००।।

प्रतिसर बन्ध पूर्णाहुति क्रम मंगल सूचक लक्षण

प्रतिष्ठा के लिये गुरुश्रेष्ठ स्वर्णिम सूत्र प्रतिसर का बन्धन देवदेव के हाथ में पुण्याहवाचन पूर्वक करें। इसके बाद प्रत्येक कुण्ड में यथाक्रम पूर्णाहुति करें। पुष्प, गन्धवाही, धूम, ज्वाला दक्षिण मण्डला, अग्नि स्वर्णाभ या कमल के समान और आचार्य के सन्तुष्ट होने पर मंगल सूचक हैं।

रात्रियापनक्रमः

गीतवादित्रनिर्घोषैः ब्रह्मघोषैश्च मङ्गलैः।
नयेयुस्तां निशामृत्विक् यजमानगुरूत्तमाः।।१०१।।

।।इति भार्गवतन्त्रे नवमोऽध्यायः।।

रात्रियापन क्रम

गायन, वादन के निर्घोष मंगल ब्रह्मघोष, ऋत्विक श्रेष्ठ गुरु के साथ यजमान रात बितावें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में नवम अध्याय सम्पूर्ण।।

दशमोऽध्यायः

प्रतिष्ठाक्रमे प्रतिमापीठस्थापनादिनिरूपणाध्यायः

गर्भगृहे भगवदानयनम् आधारशिलास्थापनञ्च

श्रीरामः

प्रभातायां तु शर्वर्यां निर्मले भास्करोदये।
शुभे मुहूर्ते सम्प्राप्ते मञ्चादुत्थापयेद्धरिम्।।१।।
अर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैः अलङ्कुर्याद्विशेषतः।
गर्भमन्दिरमासाद्य तत्राधारशिलां क्षिपेत्।।२।।
आयामसमविस्तारां यद्वा वृत्तां मनोहराम्।
सुधया तां दृढीकृत्य रत्नन्यासं समाचरेत्।।३।।

प्रतिष्ठा क्रम में प्रतिमा पीठ स्थापनादि और आधार शिला स्थापन

श्रीराम ने कहा—प्रभात के शर्वरी में निर्मल सूर्योदय में, शुभ मुहूर्त में विष्णु को मंच से उठायें। गन्ध, पुष्प आदि से पूजा करें और विशेष रूप से अलंकृत करें। गर्भ मन्दिर में लाकर वहाँ आधार शिला रखें। शिला के गर्त का आयाम विस्तार एक समान हो। अथवा वृत्ताकार मनोहर हो। उसे सुधा से दृढ़ करके रत्नों का न्यास करें।

आधारपीठगर्ते बीजरत्नन्यासक्रमः

यवो ब्रीहिश्च निष्पावः प्रियङ्गुतिलमाषकाः।
नीवाराः शालयश्चाष्टौ गर्ते प्रागादि विन्यसेत्।।४।।
प्रथमावरणे पश्चात् द्वितीयावरणे तथा।
वज्रमौक्तिकवैडूर्यवालजस्फटिकान्यपि ।।५।।
पुष्परागं चन्द्रक्रान्तम् इन्द्रनीलं क्रमान्न्यसेत्।
तृतीयावरणे स्वर्णरजतायस्त्रपूणि च।।६।।
ताम्रसीसककांस्यानि कच्छपं स्वर्णनिर्मितम्।
क्रमेण निक्षिपेद्गर्ते मध्यगर्ते विनिक्षिपेत्।।७।।
शालिबीजं पारदं च नवरत्नानि काञ्चनम्।
एवं विन्यस्य मेधावी विष्णुगायत्रिविद्यया।।८।।
अपिधाय स्त्रीशिलया श्रीसूक्तेन यथादृढम्।
सुधया तां दृढीकृत्य पुण्याहप्रोक्षणं चरेत्।।९।।

आधार पीठ गर्त में बीज रत्न न्यास क्रम

यव, धान, निष्पाव, प्रियंगु, तिल, उड़द, नीवार, शालिचावल इन आठ अन्नों को गड्ढे में पूर्वादि क्रम से रखें। यह प्रथम आवरण हुआ। द्वितीय आवरण में हीरा, मोती, वैडूर्य, बालज, स्फटिक, पुष्पराग और चन्द्रकान्त इन्द्रनील का न्यास पूर्ववत् पूर्वादि क्रम से करें। तृतीय आवरण में सोना, चाँदी, अयस्त्रपूणि, ताँबा, सीसा, कांस्य, सोने का कछुआ रखें। क्रम से गड्ढे में इन्हें रखें। गड्ढे के बीच में शालिबीज, पारा, नवरत्न और सोना को विष्णुगायत्री मन्त्र बोलते हुए रखें। देवियों की शिला को श्रीसूक्त में दृढ़ करें। सुधा से दृढ़ करें। पुण्याहवाचन से प्रोक्षण करें।

पिण्डिकायां लक्ष्म्याः आवाहनमर्चनं च

आवाहयेत् पिण्डिकायां लक्ष्मीं कमलवासिनीम्।
अर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैः पिण्डिकाधिष्ठितां श्रियम्।।१०।।

पिण्डिका में लक्ष्मी का आवाहन पूजन

पिण्डिका में कमलवासिनी लक्ष्मी का आवाहन करें। पिण्डिका अधिष्ठित लक्ष्मी का पूजन गन्ध-पुष्पादि से करें।

बिम्बार्थं पीठार्थं रत्नन्यासार्थं च स्वीकार्याः शिलाः

बिम्बं पुंशिलया कुर्यात् पीठं स्त्रीशिलया भवेत्।
रत्नन्यासस्तु कर्तव्यो नपुंसकशिलोपरि।।११।।

मूर्ति के लिये, पीठ के लिये, रत्न न्यास के लिये उपयुक्त शिला

मूर्ति का निर्माण पुरुष शिला से और पीठ का निर्माण स्त्री शिला से करें। नपुंसक शिला पर रत्न न्यास करें।

गर्भगृहे पिण्डिकायुक्तबिम्बस्य निवेशः तत्स्थापनञ्च

नवेन वाससाच्छाद्य पिण्डिकां यागसद्मनि।
हरिमभ्यर्च्य विधिवत् अग्नीनपि विसर्जयेत्।।१२।।
द्वारतोरणकुम्भस्थान् पालिकाधिष्ठितानपि।
सोमकुंभस्थितं देवं विसृज्य तदनन्तरम्।।१३।।
महाकुंभोपकुंभांश्च धारयेयुश्च मूर्तिपाः।
आचार्यः पुरतो यायात् गृहीत्वा करकं शुभम्।।१४।।
अग्रतः सेचयेन्मार्गं गलन्त्या वारिधारया।
गर्भगेहं विमानस्य नीत्वा तत्र निवेशयेत्।।१५।।

आचार्यो ऋत्विजश्चान्ये देवमुत्थाप्य मङ्गलैः।
वेदैर्वाद्यैश्च विविधैर्गच्छेयुर्मन्दिरं प्रति।।१६।।
अन्तः प्रवेशयेद्देवं पिण्डिकायां निवेशयेत्।
शुभे मुहूर्ते सम्प्राप्ते ब्रह्मसूत्रं विलोकयन्।।१७।।
'आत्वा हार्षं प्रतिष्ठासि' 'ध्रुवाद्यौ'रिति विद्यया।
आचार्यः पुरतः स्थित्वा स्थापयेत्सर्वविद्यया।।१८।।

गर्भगृह में पिण्डिकायुक्त प्रतिमा का निवेश और उसका स्थापन

पिण्डिका और यज्ञ मण्डप को नये वस्त्र से ढक दें! विष्णु का अर्चन विधिवत् करें। अग्नि को भी विसर्जित कर दें। द्वार तोरण कुम्भ स्थान पालिका में अधिष्ठितों का सोमकुम्भ स्थित देव का विसर्जन करें। मूर्ति ढोने वाले कुंभ, उपकुंभ को लेकर चलें। उनके आगे-आगे आचार्य शुभ करक लेकर चलें। गिरते हुए जलधार से मार्ग के अग्रभाग को सेचन करता चले। मन्दिर के गर्भगृह द्वार पर प्रतिमा को ले आयें। आचार्य ऋत्विज और अन्य वेद पाठ और विविध वाद्य वाजन मंगल पाठ करते हुए देव को उठाकर मन्दिर में ले आवें। देव को अन्दर प्रविष्ट कराकर पिण्डिका में स्थापित करें। शुभ मुहूर्त में ब्रह्मसूत्र अवलोकन करें। 'आत्वा हार्षं प्रतिष्ठासि' 'ध्रुवाद्यौ' विद्या से आचार्य आगे होकर सभी विद्याओं से स्थापित करें।

पिण्डिकाप्रतिमयोः संयोजनम् अष्टबन्धकल्पनप्रकारश्च

ब्रह्मसूत्रं गुरुदृष्ट्वा समतां च विलोकयेत्।
अष्टबन्धेन बध्नीयात् लाङ्गलेन दृढं यथा।।१९।।
सार्धमेकं चूर्णभागं भागमेकं च गुग्गुलम्।
अर्धभागां तथा लाक्षां कुरुविन्दं तदर्धकम्।।२०।।
मधूच्छिष्टं तदर्धं तु तूलं सर्पिश्च गैरिकम्।
यथेष्टं योजयेद्धीमान् यथामृदु भवेत्तथा।।२१।।

पिण्डिका और प्रतिमा का प्रयोजन अष्टबन्ध कल्पन प्रकार

ब्रह्मसूत्र को देखकर गुरु दोनों में समता देखें। आठ बन्धन से बाँध कर लांगल से दृढ़ करें। डेढ़ भाग चूर्ण, एक भाग गुग्गुल, आधा भाग लाह, उसका आधा कुरुविन्द, उसका आधा मोम, यथेष्ट रूई, गोघृत, गेरु को मिलाकर मृदुल बनावें।

मूलबिम्बे परिवारदेवताबिम्बेषु च भगवतः आवाहनम्

पुण्याहं वाचयेत् पश्चात् प्रोक्षयेदपि पिण्डिकाम्।
बिम्बं च वासुदेवस्य पश्चादावाहनं चरेत्।।२२।।
ध्यायेत्परात्परं विष्णुं हृत्पद्मे कर्णिकोपरि।
आवाहयेत्ततो बिम्बे योगपीठपुरस्सरम्।।२३।।
आवाह्य मूलमन्त्रेण वर्धनीस्थेन वारिणा।
परिषिच्य षडर्णेन प्रोक्षयेत्कुंभवारिभिः।।२४।।
ऋत्विक्षु शान्तिमन्त्राणि पठत्सु ब्राह्मणेष्वपि।
घोषयत्सु ब्रह्मघोषं तौर्यनृत्तादिमङ्गलैः।।२५।।
द्वादशाक्षरमन्त्रेण ब्रह्मकूर्चोदकोक्षणम्।
उपकुंभाष्टकजलैस्तथा वै स्व स्व विद्यया।।२६।।
तत्तत्कुंभगतां शक्तिं तत्तन्मन्त्रेण योजयेत्।
कुंभतोयावशेषेण परिवारान् प्रकल्पयेत्।।२७।।
अष्टाक्षरस्य मन्त्रस्य न्यासं बिम्बे समर्पयेत्।
सान्निध्यं सर्वदा तत्र प्रार्थयेद्देशिकोत्तमः।।२८।।
एवमावाह्य देवेशं प्रोक्ष्य शक्तिं निवेश्य च।
परिवारान् यथास्थानम् स्थापयित्वा यथाविधि।।२९।।
आवाहनप्रोक्षणादि सर्वं कर्म समाप्य च।
अभ्यर्च्य देवदेवेशमुपचारैः पृथग्विधैः।।३०।।
महाहविर्निवेद्याथ स्थापितेषु यथाक्रमम्।
बलिं दद्यात् यथाशास्त्रमेकबेरे त्वयं विधिः।।३१।।

मूल प्रतिमा में परिवार देवता मूर्तियों में भगवत का आवाहन

पुण्याहवाचन के बाद पिण्डिका का प्रोक्षण करें। वासुदेव की प्रतिमा का भी प्रोक्षण करें। इसके बाद आवाहन करें। हृदयकमल की कर्णिका में परात्पर विष्णु का ध्यान करें। तब आवाहन प्रतिमा में योगपीठ में करें। मूल मन्त्र से आवाहन करें। वर्धनी के जल से परिसिंचन करें। षडक्षर मन्त्र से कुंभ जल से प्रोक्षण करें। ऋत्विक और ब्राह्मण शान्ति मन्त्रों का पाठ करें। ब्रह्मघोष करके तौर्य नृत्यादि मंगल आदि करावें। द्वादशाक्षर मन्त्र से ब्रह्मकूर्च जल से उक्षण करें। आठ उपकुंभों के जल से उनके मन्त्रों से प्रोक्षण करें। प्रत्येक कुंभस्थ शक्तियों का उनके मन्त्रों से योजन करें। शेष कुंभ जल से परिवारों को प्रकल्पित करें।

अष्टाक्षर मन्त्र से प्रतिमा में न्यास करें। वहाँ देशिक श्रेष्ठ सर्वदा सान्निध्य की प्रार्थना करें। इस प्रकार देवेश को आवाहित करके प्रोक्षण करें और शक्ति का निवेश करें। परिवारों का स्थापन यथास्थान यथाविधि करें। आवाहन प्रोक्षण आदि सभी कर्मों को करने के बाद देवदेवेश अभ्यर्चन यथाक्रम से करें। महाहवि का निवेदन यथाक्रम से स्थापितों को करें। एक प्रतिमा की बलि यथाशास्त्र करने की विधि यह है—

बहुबेरप्रतिष्ठाविधौ ध्रुवादिबिम्बानां स्थाननिर्देशः

बहुबेरप्रतिष्ठायां विशेषोऽस्त्यत्र कश्चन।
दिव्यमानुषयोः सन्धौ ध्रुवबिम्बनिवेशनम्।।३२।।
ब्राह्मे पदेऽर्चनापीठं कर्मार्चा मध्यमे पदे।
तत्रैव मखबिम्बं च सौम्ये स्नपनकौतुकम्।।३३।।
तीर्थबिम्बं च याम्ये तु शय्यार्थबलिकौतुके।
लौकिकं बिम्बमन्यच्च बाह्यभूमौ निवेशयेत्।।३४।।

अनेक प्रतिमा की प्रतिष्ठा विधि में अचल मूर्ति का स्थान निर्देश

अनेक मूर्ति प्रतिष्ठा में यहाँ विशेष कुछ भी नहीं है। दिव्य मनुष्यों के बीच में अचल मूर्ति का निवेश करें। ब्राह्म में अर्चनापीठ पद में होता है। कर्मार्चा मध्यम पीठ में होती है। वहीं पर यज्ञमूर्ति और उत्तर के स्नान कौतुक का स्थापन करें। तीर्थमूर्ति को दक्षिण में स्थापित करें। शय्या, बलिकौतुक, लौकिक मूर्ति और दूसरों को बाहर में निवेशित करें।

प्रतिष्ठाङ्गभूतकर्मसम्पादनस्थाननिर्देशः

सुमुहूर्ते शुभे लग्ने स्थापयेद्ध्रुवकौतुकम्।
तत्त्वसंहारजनने तत्त्वन्यासादि कर्म च।।३५।।
शान्त्यन्तमखिलं कर्म गर्भगेहे समाचरेत्।
अन्येषामङ्गबिम्बानां सर्वं तद्यागमन्दिरे।।३६।।

प्रतिष्ठाङ्गभूत कर्म में सम्पादन स्थान का निर्देश

शुभ मुहूर्त, शुभ लग्न में ध्रुवकौतुक को स्थापित करें। तत्व संहार, जनन तत्व, न्यास आदि कर्म शान्ति के सभी कर्मों को गर्भगृह में करें। दूसरे अंगबिम्बों के लिये सभी कर्म याग मन्दिर में करें।

प्रतिष्ठाक्रमे कुम्भन्यासविधिः

प्रतिष्ठासमये प्राप्ते कुम्भानुत्थाप्य देशिकः।
पश्चात्तदङ्गबिम्बैश्च प्रादक्षिण्येन मन्दिरम्।।३७।।

अन्तःप्रविश्य विन्यस्य कुम्भानपि यथाविधि।

प्रतिष्ठा क्रम में कुम्भ न्यास की विधि

प्रतिष्ठा के समय देशिक कुंभों को लेकर अंगबिम्बों की प्रदक्षिणा करके मन्दिर के अन्दर जाकर यथाविधि कुंभों को स्थापित करें।

मूलबिम्बे शक्तिनिवेशप्रकारः

आवाहयेन्मूलबेरे परमात्मानमव्ययम्।।३८।।
पञ्चोपनिषदैर्मन्त्रैः तत्प्रकारमितः शृणु।
सदाविष्णुं महाविष्णौ तं विष्णौ विनिवेशयेत्।।३९।।
हृत्पुण्डरीके तं विष्णुं तं च स्वाञ्जलिपङ्कजे।
ध्रुवबिम्बब्रह्मरन्ध्रात् बिम्बे तं विनिवेशयेत्।।४०।।
परिषिञ्चेत्ततो बिम्बं वर्धनीस्थेन वारिणा।
महाकुम्भप्रोक्षणं च 'द्वादशाक्षर'विद्यया।।४१।।
उपकुम्भाम्बुभिः पश्चात् प्रोक्षयेत्स्वस्वविद्यया।
शक्तीस्तत्तत्कुम्भगताः मूलबेरे निवेशयेत्।।४२।।
अपिधाय ब्रह्मरन्ध्रं प्रणवेन समाधिना।
मन्त्रन्यासं ततः कुर्यात् सर्गसृष्ट्यादिकर्मवित्।।४३।।

मूल मूर्ति में शक्ति निवेश प्रकार

मूल मूर्ति में अव्यय परमात्मा का आवाहन पंचोपनिषद मन्त्र से करें। उसकी विधि को सुनिये। सदा विष्णु महाविष्णु का विनिवेश विष्णु में करें। उस विष्णु को हृदय कमल में ले आवें। हृदय कमल से विष्णु को अपनी अंजलि के कमल में ले आयें। ध्रुवबिम्ब के ब्रह्मरन्ध्र से लेकर उसे मूर्ति में विनिवेशित करें। तब वर्धनी के जल से मूर्ति का परिसिंचन करें। द्वादशाक्षर मन्त्र से प्रोक्षण महाकुंभ के जल से करें। तब उपकुभों के जल से उसकी विद्या से प्रोक्षण करें। उस कुम्भ में गत शक्ति का निवेश मूलमूर्ति में करें। प्रणव से समाधि में ब्रह्मरन्ध्र को ढक कर मन्त्र न्यास करें। तब सर्ग सृष्ट्यादि कर्म करें।

कर्मबिम्बादिषु शक्त्यावाहनक्रमः

सर्वेषां कर्मबिम्बानां मूलादावाहनं मतम्।
कुम्भतोयावशेषेण प्रोक्षणं परिकल्पयेत्।।४४।।
ब्रह्मादिपरिवाराणामन्येषां प्राङ्गणे सताम्।
चण्डादीनां श्रियादीनां बलिपीठावसानिकम्।।४५।।

महाकुम्भं समाहृत्य देशिको ब्राह्मणैः सह।
स्वस्वमन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य कर्मजालं समापयेत्।।४६।।
अर्चयेद्देवदेवेशं नैवेद्यान्तं यथापुरम्।

कर्म मूर्तियों में शक्ति के आवाहन का क्रम

सभी कर्म मूर्तियों में आवाहन मूल मूर्ति से करें। अवशिष्ट कुंभ जल से प्रोक्षण करें। ब्रह्मादि परिवार और दूसरों का प्रोक्षण प्रांगण में करें। चण्डादि और लक्ष्मी आदि का आवाहन प्रोक्षण बलिपीठ के पास करें। आचार्य महाकुंभ लेकर ब्राह्मणों के साथ उनके मन्त्रों से प्रोक्षण करके कर्म जल समाप्त करें। देवदेवेश का अर्चन पूर्ववत् गन्ध से नैवेद्य तक के उपचारों से करें।

गुर्वादिभ्यो दक्षिणादानादिनिर्देशः

पूजयेद्यजमानोऽपि प्रतिष्ठासमये गुरुम्।।४७।।
सौवर्णकुसुमैर्वस्त्रैः केयूरैरङ्गुलीयकैः।
कुण्डलैः कटकैर्यज्ञसूत्रैश्च सुमनोहरैः।।४८।।
पट्टवस्त्रैर्दुकूलैश्च सस्वर्णैरुत्तरीयकैः।
उष्णीषैर्गन्धपुष्पैश्च भूषयेद्विविधैरपि।।४९।।
घटोध्नीर्गास्सवत्साश्च धरणीं सस्यशालिनीम्।
स्वर्णनिष्कसहस्रं च दद्यात्तस्मै स्वयं प्रभुः।।५०।।
अशक्तश्चेत्त्रिपादं वा दलं वा पादमेव वा।
यद्वा निष्कशतं दद्यात् गुरवे दक्षिणां प्रभुः।।५१।।
तदर्धम् ऋत्विजां दद्यात् तदर्धं परिचारिणाम्।
प्रतिष्ठायां तु देवस्य भोजयेद्ब्राह्मणान् बहून्।।५२।।
लक्षं वाप्ययुतं वापि सहस्रं वा यथाबलम्।
सर्वाशक्तः शतं विप्रान् भोजयेद्यज्ञसिद्धये।।५३।।
भोजयित्वा द्विजान् नित्यं प्रतिष्ठादिवसे प्रभुः।
दक्षिणां वितरेत्तेभ्यो ताम्बूलपरिमण्डिताम्।।५४।।
त्रयीविद्भ्यः शास्त्रविद्भ्यः स्तोतृभ्यश्च विशेषतः।
इतरेभ्यो द्विजेभ्यश्च देयैव द्विजदक्षिणा।।५५।।

गुरु आदि को दक्षिणादान का निर्देश

प्रतिष्ठा के समय यजमान भी गुरु की पूजा करें। सोने का फूल, वस्त्र,

केयूर, अंगूठी, कुण्डल, सुन्दर कटक और जनेऊ प्रदान करें। पट्टवस्त्र, दुपट्टा, स्वर्णजटित उत्तरीय, उष्णीशगन्ध पुष्प विविध भूषण घटोध्नी, सवत्सा गाय, सस्यशलिनी भूमि, एक हजार स्वर्णनिष्क गुरु को यजमान स्वयं प्रदान करें। यदि इतना देने में समर्थ न हो तो तीन चौथाई या आधा या चौथाई भाग देवें। गुरु को दक्षिणा एक सौ निष्क प्रदान करें। गुरु को आधे के समान ऋत्विजों को और उसका आधा परिचारिकों को देवें। देव की प्रतिष्ठा में बहुत ब्राह्मणों को भोजन करावें। एक लाख या दश हजार या एक हजार या यथाशक्ति या इसमें भी अशक्त होने पर यज्ञ सिद्धि के लिये एक सौ ब्राह्मणों को भोजन करावें। प्रतिष्ठा के समय ब्राह्मणों को नित्य भोजन करावें। उन्हें पान सहित दक्षिणा प्रदान करें। वेदत्रयी के ज्ञानियों, शास्त्र के जानकारों, स्तुति करने वालों और अन्य द्विजों को दक्षिणा प्रदान करें।

दक्षिणारहितयागस्य फलराहित्यकथनम्

दक्षिणारहितो यज्ञः प्रभवे न फलप्रदः।
तस्माद्द्विजेभ्यः सर्वेभ्यः वितरेद्दक्षिणां प्रभुः।।५६।।

दक्षिणारहित याग का निष्फलत्व कथन

दक्षिणा दिये बिना जो यज्ञ होता है, वह फलप्रद नहीं होता है। अतएव सभी द्विजों को यजमान दक्षिणा प्रदान करें।

प्रतिष्ठाकर्मणः समाप्तौ देशिकस्य गृहानयनम्

एवं संस्थाप्य देवेशं सर्वमङ्गलसंयुतम्।
ऋत्विग्भिः सह सन्तुष्टं भोजनेन धनेन च।।५७।।
गीतवादित्रधोषेण छत्रचामरबीजनैः।
स्वस्तिब्रूवाणैर्विप्रैश्च देशिकं निनयेद्गृहम्।।५८।।

सभी मंगलों से युक्त देवेश की स्थापना इस प्रकार करने के बाद ऋत्विजों को भोजन, धन से सन्तुष्ट करके, गायन-वादन घोष, छत्र, चामर, बीजन के साथ विप्रों से स्वस्तिवाचन कराते हुए देशिक को घर पर ले आयें।

प्रतिष्ठासम्पादकस्य सहायकानां च कृते फलकीर्तनम्

एवं यः स्थापयेद्देवं यजमानो महीतले।
तस्य वंशर्द्धिरतुला धनेन धनदोपमः।।५९।।
विद्यावान् बलवान् धीमान् भूयाच्चापि महीपतिः।
विनश्यन्ति च विघ्नानि पापाः यान्ति क्षयं ध्रुवम्।।६०।।

अतुला श्रीश्च तस्य स्यात् दीर्घायुश्च भविष्यति।
अमरैः स्तूयते नित्यं पुण्यकृद्भिश्च पूज्यते।।६१।।
उपकुर्वन्ति ये मर्त्याः तेषां पुण्यं न तर्क्यते।
बहुना किं देवलोके वसिन्त दिवि देववत्।।६२।।
पठतां च त्रयीं शास्त्रं वासो भूयात्त्रिविष्टपे।
वाद्यवादनशक्तानां गीतनृत्तादि कुर्वताम्।।६३।।
गन्धर्वलोके वसतिरन्नपानादिदायिनाम्।
न पुनर्जननं तेषां यानछत्रादिधारिणाम्।।६४।।
यानाधिकारिणो देवाः देवलोके न संशयः।
आचार्याणामृत्विजां च तथैव परिचारिणाम्।।६५।।
कर्मिणां न पुनर्जन्म स्थापितो यैर्जनार्दनः।
कामनारहितं कर्म कारितं यैस्तु मानवैः।।६६।।
तेषां त्रिविष्टपे वासः पुनरावृत्तिवर्जितः।

प्रतिष्ठा कर्ता के सहायकों के कृत कर्म के फल का कथन

इस प्रकार जो यजमान पृथ्वी पर देव की स्थापना करता है, उसके वंश की अतुल वृद्धि के साथ कुबेर के समान धन प्राप्त होता है। विद्यावान, बलवान, बुद्धिमान होकर वह भूपाल हो जाता है। उसके सभी विघ्नों का नाश हो जाता है और पापों का विनाश हो जाता है। उसे अतुल्य श्री की प्राप्ति के साथ आयुदीर्घ होती है। देवता नित्य बढ़ाई करते हैं। पुण्यात्मा लोग पूजा करते हैं। जो मनुष्य देव स्थापन कराते हैं, उनके पुण्यों की गणना नहीं हो सकती। अधिक क्या कहा जाय, वे देवलोक स्वर्ग में देवताओं के समान रहते हैं। जो तीनों वेदों और शास्त्रों का पाठ करता है, वह देवलोक स्वर्ग में रहता है। जो वाद्य वादन में अशक्त गीत गाकर नाचते हैं, वे गन्धर्वलोक में रहते हैं। अन्न पानादि के दानी का पुनर्जन्म नहीं होता। जीवितावस्था में वे यान, छत्रादि को धारण करने वाले होते हैं। वे देवलोक में यान के अधिकारी होते हैं। आचार्य ऋत्विक और परिचारिक कर्मों के कर्ता जो जनार्दन को स्थापित करते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता। जो मनुष्य कामना रहित कर्म करते हैं, उनका निवास स्वर्ग में होता है। उनका पुनरावर्तन नहीं होता।

यागदर्शनस्य माहात्म्यम्

केवलं दर्शनं विष्णोः सर्वकामफलप्रदम्।।६७।।
किं पुनः फलमिच्छद्भिः यागकाले विशेषतः।

याग दर्शन का माहात्म्य

विष्णु का केवल दर्शन ही सर्वकामफल प्रदायक होता है। यागकाल में विशेष फल के इच्छुकों के बारे में क्या कहा जाय।

प्रतिष्ठान्ते भगवतः स्नपनस्य महोत्सवस्य च निर्देशः

एवं संस्थाप्य मेधावी वासुदेवं सनातनम्।।६८।।
स्नापयित्वा प्रतिष्ठान्ते ध्वजपूर्वं महोत्सवम्।
कुर्यात्तत्प्रीतये भूयाच्छार्ङ्गिणः परमात्मनः।।६९।।

।। इति भार्गवतन्त्रे दशमोऽध्यायः।।

प्रतिष्ठा के बाद भगवत के स्नान महोत्सव का निर्देश

इस प्रकार सनातन वासुदेव के स्थापन के पश्चात् मेधावी ध्वज गाड़ कर महोत्सव मनावें। ऐसा करने से वह परमात्मा विष्णु का प्रियभाजन हो जाता है।

।। श्री भार्गवतन्त्र में दशवाँ अध्याय सम्पूर्ण।।

एकादशोऽध्यायः

महोत्सवाङ्गध्वजारोहणादिनिरूपणाध्यायः

महोत्सवविधिनिरूपणार्थं प्रार्थना

अगस्त्यः

कथं महोत्सवविधिः कर्तव्यः परमात्मनः।
कृपया भार्गव श्रीमन् ब्रूहि मे भक्तवत्सल।।१।।

महोत्सव के अंग ध्वज आरोहतादि का निरूपण

महोत्सव विधि निरूपता के लिये प्रार्थना

अगस्त्य ने कहा कि भक्त वत्सल भार्गव श्रीमान मुझे यह बतलाने की कृपा करें कि परमात्मा के महोत्सव की विधि किस प्रकार की होती है।

महोत्सवमाहात्म्यम् महोत्सवदिनावधिश्च

श्रीरामः

शृणु त्वं मुनिशार्दूल देवदेवमहोत्सवम्।
येनाराध्य हरिं शक्रो विमुक्तो वृत्रहत्यया।।२।।
तमद्य तव वक्ष्यामि शृणुष्व विनयान्वितः।
द्वादशाहेन कुर्वीत कल्याणं शार्ङ्गधन्वनः।।३।।
यद्वा नवभिरहोभिः सप्तभिर्वाथ पञ्चभिः।

महोत्सव माहात्म्य महोत्सव अवधि के दिन

हे मुनि शार्दूल अगस्त्य! आप देवदेव के उस महोत्सव के बारे में सुनिये। महोत्सव में विष्णु आराधना करके इन्द्र वृत्रासुर के हत्या के पाप से मुक्त हो गये थे। उसी महोत्सव को आज मैं आपसे कहता हूँ। विनीत भाव से सुनिये। यह महोत्सव बारह दिनों तक करने से शाङ्गधनुर्धर विष्णु कल्याण करते हैं। बारह दिनों तक करने में असमर्थ होने पर नव दिनों तक या सात दिनों तक अथवा पाँच दिनों तक इस महोत्सव को मनावें।

ध्वजपटे गरुडस्य स्वरूपं तदक्षिमोचनं च

आरम्भदिवसात् पूर्वं वैनतेयध्वजोत्सवः।।४।।
तदर्थमङ्कुरन्यासं कृत्वा शास्त्रविधानतः।
पटे तु विलिखेद्देवं वैनतेयं खगाधिपम्।।५।।

नवतालप्रमाणं तं तप्तकाञ्चनसन्निभम्।
द्विभुजं कञ्चुकयुतं पुष्पाञ्जलिधरं विभुम्।।६।।
किरीटकुण्डलधरं नागाभरणभूषितम्।
पृष्ठविन्यस्तसव्याङ्घ्रिमितरेणापि कुञ्चितम्।।७।।
पक्षविक्षेपसहितं गगनोत्पतनोन्मुखम्।
नीलनासाञ्चलं देवं नयनोन्मीलनं चरेत्।।८।।

ध्वज पट्ट पर गरुड़ का स्वरूप

महोत्सव आरम्भ दिन से पहले गरुड़ के ध्वज का उत्सव करें। इसके लिये शास्त्रीय विधान से अंकुर न्यास करें। वैनतेय पक्षिराज गरुड़ का चित्र ध्वज पट्ट पर बनावें। चित्र का प्रमाण नव ताल होता है। ११२ एक सौ बारह अंगुल का नवताल उत्तम होता है। १०८ अंगुल का नवताल मध्यम होता है। १०४ अंगुल का नवताल कनिष्ठ होता है। उनका वर्ण तप्त कांचन (सोना) के समान होता है। कंचुक युक्त दो भुजाओं में पुष्पांजलि लिये हुए रहते हैं। शिर पर किरीट, कानों में कुण्डल सहित नागाभरण से भूषित होते हैं। बायाँ पैर पीछे और दाहिना पैर मुड़ा हुआ होता है। पंखों के विक्षेप सहित उड़ने को तैयार दिखते हैं। नासा अंचल नीला चंचल नेत्रों का उन्मीलन करते रहते हैं।

गरुडस्य कुम्भादीनां च अधिवासनम्

शिल्पिनान्या: क्रिया: सर्वा: प्रतिष्ठोक्तविधानत:।
छायाधिवासनं कृत्वा स्नापयित्वा च दर्पणे।।९।।
वैनतेयस्य गायत्र्या पूजयित्वा यथाविधि।
शालिपीठे सुविस्तीर्णे शाययित्वा ततो गुरु:।।१०।।
तद्दक्षिणे धान्यराशौ सोपकुंभं सलक्षणम्।
वर्धन्या स्थापयेत्कुम्भं सर्वालङ्कारसंयुतम्।११।।
वैनतेयं महाकुम्भे वर्धन्यां तु सुदर्शनम्।
अष्टष्वन्येषु चेन्द्राद्या: पूजनीया यथाविधि।।१२।।

गरुड़ का कुंभादि में अधिवासन में हवन क्रम

शिल्पियों और अन्यों के सभी काम प्रतिष्ठा में कथित विधान से होना चाहिये। छायाधिवासन के बाद दर्पण में स्नान करावें। गरुड़गायत्री से यथाविधि पूजन करें। विस्तृत शालिचावल के पीठ पर गुरु सुलायें। उसके दाएँ भाग में धान्य की ढेरी पर लक्षणा युक्त उपकुम्भ स्थापित करें। सभी अलंकारों से युक्त

कुम्भ वर्धनी से स्थापित करें। महाकुम्भ में गरुड़ और वर्धनी में सुदर्शन चक्र तथा अन्य आठ कुंभों में इन्द्र आदि आठों लोकपालों की पूजा विधिवत् करें।

गरुडाधिवासनाङ्गहोमक्रम:

एकस्मिन्नेव कुर्वीत प्राक्कुण्डे वा महानसे।
मूर्तिहोमं बृहत्साम्ना गायत्र्या वा यथारुचि।।१३।।
तत्त्वसंहारजनने तत्त्वहोमादि पूर्ववत्।

गरुड़ के अधिवासन के अंग

एक ही पूर्व कुण्ड में या महानस में अधिवासन करें। मूर्ति होम बृहत्साम या गायत्री से रूचि के अनुसार करें। तत्वसंहार जनन में तत्व हवन आदि पूर्ववत् करें।

गरुडावाहनार्चनप्रकार:

पटं विस्तार्य तदनु मन्दिराभिमुखं गुरुः।।१४।।
प्रदर्श्य देवदेवाय तदन्वावाहनं चरेत्।
भगवन् पुण्डरीकाक्ष सर्वेश्वरजगन्मय।।१५।।
त्वया यथा तु कथितं तथा कर्तुं न शक्यते।
अस्वातन्त्र्यादसामर्थ्यात् श्रद्धादीनामभावत:।।१६।।
त्वदात्मनाद्य सर्वेषां न्यूनाधिक्योपशान्तये।
समालोकय नेत्राभ्यां शीतलाभ्यां पटस्थितम्।।१७।।
सर्वदोषापहारिभ्यां वैनतेयं प्रसादय।
दर्शयित्वैवमाचार्यो व्याहृत्यावाहनं चरेत्।।१८।।
महाबल महाबाहो वैनतेय वयोधिप।
सन्निधत्स्व पटे तुभ्यं नमः प्रणवमूर्तये।।१९।।
इति सम्प्रार्थ्य सान्निध्यं गायत्र्यैव तदीयया।
पूजयित्वार्ध्यपाद्याद्यै: निवेद्यान्नं चतुर्विधम्।।२०।।
कुम्भाय च यथाशास्त्रं जपेन्मन्त्रं च गारुडम्।
वेदघोषैस्तूर्यघोषैर्जागरेण नयेन्निशाम्।।२१।।

गरुड़ के आवाहन और पूजन प्रकार

मन्दिर के सामने गुरु वस्त्र फैलाकर देवदेव को दिखाकर आवाहन करें। इसके बाद गुरु प्रार्थना करें—

भगवन् पुण्डरीकाक्ष सर्वेश्वरजगन्मय।
त्वया यथा तु कथितं तथा कर्तुं न शक्यते।
अस्वातन्त्र्यादसामर्थ्यात् श्रद्धादीनामभावतः।।
त्वदात्मनाद्य सर्वेषां न्यूनाधिक्योपशान्तये।
समालोकय नेत्राभ्यां शीतलाभ्यां पटस्थितम्।।
सर्वदोषापहारिभ्यां वैनतेयं प्रसादय।
दर्शयित्वैवमाचार्यो व्याहृत्यावाहनं चरेत्।।
महाबल महाबाहो वैनतेय वयोधिप।
सन्निधत्स्व पटे तुभ्यं नमः प्रणवमूर्तये।।

इस प्रकार की प्रार्थना के बाद गरुड़ गायत्री से सन्निधापन करें। पाद्य, अर्घ्य से चार प्रकार नैवेद्य तक उपचारों से कुंभ की पूजा यथाशास्त्र करें। गारुड़ मन्त्र का जप करें। वेदघोष, वाद्यघोष के साथ जागरण करके रात बितावें।

उत्सवाङ्गध्वजारोहणविधिः

ततः प्रभाते विमले समाराध्य खगेश्वरम्।
अलङ्कृत्य यथायोगं यानमारोप्य मङ्गलैः।।२२।।
प्रादक्षिण्येन निनयेत् ध्वजयष्टेः पुरो भुवि।
प्रासादाभिमुखं देवं विस्तार्य पटसंस्थितम्।।२३।।
पुण्याहं वाचयेत् पश्चात् प्रोक्षयेत्कुम्भवारिभिः।
'गारुडेनै'व मन्त्रेण वर्धन्या परिषेचयेत्।।२४।।
स्वैः स्वैः मन्त्रैस्तथेन्द्रादिकुम्भप्रोक्षणमाचरेत्।
विन्यस्य 'गारुडं'मन्त्रं सान्निध्यप्रार्थनं चरेत्।।२५।।
उत्सवान्तं परमधाम्नः सन्निधत्स्व पटोदरे।
भगवन् पक्षिभूपाल पालयास्मान् विलोकय।।२६।।
इति प्रार्थ्य खगेशानं मुहूर्ते सर्वमङ्गले।
मनःप्रह्लादने लग्ने ध्वजारोहणमाचरेत्।।२७।।
उत्सवप्रतिमां तत्र यानमारोप्य चानयेत्।
अङ्गुष्ठघनमात्रेण पाशेन त्रिवृतेन च।।२८।।
तान्तवेन च बध्नीयान्मन्त्रेण 'पुरुषा'त्मना।
'सुपर्णोऽसी'ति मन्त्रेण ध्वजारोहणमुच्यते।।२९।।

आरोप्य चैवं विहगं पूजयित्वा यथाविधि।
पायसान्नं तथाऽपूपं फलानि विविधानि च।।३०।।
निवेद्य वैनतेयाय इन्द्रादीन् परितोऽर्चयेत्।
पूजयित्वा यथान्यायं बलिं दद्याद्विचक्षणः।।३१।।
मखकौतुकमासाद्य प्रणम्याभ्यर्च्य देशिकः।
अनुज्ञां च समासाद्य पुष्पाण्यादाय शार्ङ्गिणः।।३२।।
उदग्रवदनो भूत्वा समालोक्य खगेश्वरम्।
अस्मादिनात्समारभ्य यावत्तीर्थदिनान्तिकम्।।३३।।
सन्निधिं कुरु पक्षीन्द्र राज्ञो जनपदस्य च।
ग्रामस्य यजमानस्य वैष्णवानां महात्मनाम्।।३४।।
तुष्टये पुष्टये चैव सर्वशत्रुजयाय च।
अपमृत्युहरार्थाय वैनतेय प्रसीद ओम्।।३५।।
इति पुष्पाञ्जलिं सम्यक् विकिरेद्विहगोपरि।

उत्सव के अंग रूप में ध्वज आरोहण विधि

रात्रि जागरण के बाद प्रभात में गरुड़ की पूजा करें। यथायोग्य उन्हें अलंकृत करके मंगल यान में बैठायें। प्रदक्षिणा क्रम से ध्वजदण्ड के आगे भूमि पर देव मन्दिर द्वार के सामने पर संस्थित देव के झण्डे को फैलावें। पुण्याहवाचन करा कर कुम्भ जल से ध्वज का प्रोक्षण करें। 'गारुड़' मन्त्र पढ़कर वर्धनी जल से परिषेचन करें। इन्द्रादि के मन्त्रों से कुम्भ का प्रोक्षण करें। उन्हें रखकर गारुड़ मन्त्र से उनके सान्निध्य की प्रार्थना करें। उत्सव के बाद परमधाम में पटोदर में सन्निधापन करें। प्रार्थना करें—

'भगवन पक्षिभूपाल पालयास्मान् विलोक्य।'

ऐसी प्रार्थना के बाद सर्वमंगल मुहूर्त में, मन प्रसन्न लग्न में ध्वजारोहण करें। उत्सव प्रतिमा को यान में चढ़ाकर ले आयें। अंगूठे जितना मोटी रस्सी को तीन लपेटा देकर 'पुरुषसूक्त' मन्त्र से बाँधें। 'सुपर्णोऽसी' से मन्त्र ध्वज का आरोहण करें। ध्वजा फहराकर गरुड़ की पूजा विधिवत् करें। नैवेद्य में खीर, पूआ, विविध फल अर्पण करें। इन्द्रादि लोकपालों का पूजन सामने करें। यथान्याय पूजन के बाद विचक्षण बलि प्रदान करें। यज्ञ महोत्सव के बाद देशिक प्रणाम करके अर्चन करें। विष्णु से आज्ञा लेकर हाथों में फूलों को लेकर उत्तर तरफ मुख करके देशिक खगेश्वर को देखें और प्रार्थना करें—

अस्माद्दिनात्समारभ्य यावत्तीर्थदिनान्तिकम्।।
सन्निधिं कुरु पक्षीन्द्र राज्ञो जनपदस्य च।
ग्रामस्य यजमानस्य वैष्णवानां महात्मनाम्।।
तुष्टये पुष्टये चैव सर्वशत्रुजयाय च।
अपमृत्युहरार्थाय वैनतेय प्रसीद ओम्।।

ऐसी प्रार्थना के बाद गरुड़ पर पुष्पांजलि डालें।

ध्वजारोहणाङ्गब्राह्मणसम्माननम्

दद्याद्गोभूहिरण्यादि ब्राह्मणेभ्यस्तदा प्रभुः।।३६।।

ध्वजारोहण के अंग में ब्राह्मणों का सम्मान

ब्राह्मणों को गाय, भूमि, स्वर्णादि का दान देवें।

उत्सवप्रतिमापूजनक्रमः

उत्सवप्रतिमां पश्चान्निनयेन्मण्डपान्तरम्।
पूजयेच्च यथान्यायं प्रापयेद्गर्भमन्दिरम्।।३७।।

उत्सव प्रतिमा पूजन क्रम

इसके बाद उत्सव प्रतिमा को मण्डप के भीतर ले आयें। उनकी पूजा यथान्याय करके उन्हें गर्भ मन्दिर में ले आयें।

भेरीताडनदेवताह्वानप्रकारः

आह्वानार्थमशेषाणां लोकानां देशिकोत्तमः।
देवानामपि सर्वेषां भेरीताडनमाचरेत्।।३८।।
ध्वजपीठसमीपोर्वीं गोमयेन विशोधयेत्।
भूषयेद्रङ्गबल्लीभिः पीठं तत्र निवेशयेत्।।३९।।
बलिबिम्बं समादाय तत्र न्यस्य समर्चयेत्।
पुरतस्तस्य बिम्बस्य धान्यपीठं प्रकल्पयेत्।।४०।।
तत्र भेरीं च कोणं च विन्यस्य तदनन्तरम्।
स्नातं शुद्धाम्बरधरं सोर्ध्वपुण्ड्रं स्वलङ्कृतम्।।४१।।
यज्ञोपवीतिनं पार्श्वे दक्षिणे गणिकाजनम्।
स्थापयेदिन्द्रदिग्भागे नृत्तविद्याविशारदम्।।४२।।
गीतवादित्रकुशलान् उत्तरे स्थापयेद्बुधः।
पुण्याहवारिभिर्भेरीं तथा पारशवादिकान्।।४३।।

प्रोक्षयित्वा महाभेरीं पूजयेद्भारतीमयीम्।
नवेन वाससा भेरीं वेष्टयेच्छब्दरूपिणीम्।।४४।।
पुष्पादिभिरलङ्कुर्यात् गन्धैश्च विविधैरपि।
भेरीमध्येऽर्चयेद्देवीं त्रिगुणां भारतीमयीम्।।४५।।
दक्षिणोत्तरयोर्विष्णुं लक्ष्मीं च परिपूजयेत्।
कोणे समर्चयेद्देवं वायुं कलशसंभव।।४६।।
ततो मूर्तित्रयं ध्यायन् शब्दतन्मात्रविद्यया।
कोणेन ताडयेद्भेरीं देवतानाम कीर्तयन्।।४७।।
वैकुण्ठवासिनो ये च सत्यलोकनिवासिनः।
रुद्रलोकस्थिता ये च तथा स्वर्लोकवासिनः।।४८।।
पातालादिषु लोकेषु ये वसन्ति महीतले।
अन्येऽपि ये च लोकेषु सर्वत्राह्वानमाचरेत्।।४९।।
ऋषीणामग्निकल्पानां देवानां दितिजन्मनाम्।
सर्वेषां च समाह्वानं परिवारपदान्वितम्।।५०।।
आयुधैः सह देवीभिः वाहनैश्च महोत्सवे।
आह्वानं कारयेद्धीमान् सेवार्थं मधुविद्विषः।।५१।।

भेरी ताडन और देवता के आवाहन का प्रकार

शेष देवताओं को लोक में लाने के लिये देशिक ढोल बजवावें। सभी देवों के लिये ढोल बजवावें। ध्वज के समीप की भूमि को गोबर से लीप कर शोधित करें। भूमि को रंगवल्ली से सजावें। वहाँ पीठ का विनिवेश करें। बलिबिम्ब को लाकर वहाँ स्थापित करें और अर्चन करें। बलिबिम्ब के आगे धान्यपीठ बनावें। वहाँ पर ढोल और कोण रखवा कर स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करें। ऊर्ध्व पुण्ड्र से अपने को अलंकृत करें। नया जनेऊ धारण करें। अपने दाये भाग में गणिकाओं को रखें। पूर्व दिशा में बलि मूर्ति को स्थापित करें। नृत्य विद्याविशारद गायन, वादन में प्रवीण को उत्तर तरफ रखें। ढोल का प्रोक्षण करें और सरस्वती के रूप में उसका पूजन करें। शब्द रूप ढोल को नये वस्त्र से वेष्टित करें। पुष्पादि से अलंकृत करके विविध गन्धों से ढोल में त्रिगुणा भारतीमयी देवी का पूजन करें। विष्णु से ईशान कोण में लक्ष्मी का पूजन करें। वायव्य कोण में वायु देव का पूजन करें। इसके बाद तीनों मूर्तियों का ध्यान शब्द तन्मात्रा विद्या से करें। कोण से ढोल बजावें और देवता नाम का कीर्तन

करें। वैकुण्ठवासी, सत्यलोक निवासी, रुद्रलोक निवासी, स्वर्लोकवासी, पाताल आदि लोकों में रहने वाले, भूतल पर रहने वाले, अन्य लोकों में रहने वाले सबों का आवाहन करें। ऋषियों को, अग्निकल्पों को, देवों को, दिति पुत्र दैत्यों को परिवार सहित आवाहित करें। महोत्सव में आयुध वाहनों सहित देवियों का आवाहन सेवा के लिये मधु विद्या से करें।

प्रत्याह्वानक्रम:

प्रत्याह्वानं महाभेर्या: ताडनत्रयमाचरेत्।
तेषां नृत्तं स्वरं तालं त्रयं तत्र प्रकाशयेत्।।५२।।

प्रत्याह्वान क्रम

प्रत्याह्वान में महाभेरी को तीन बार बजावें। उनमें नृत्य, स्वर, तालत्रय को प्रकाशित करें।

उत्सवक्रमे देवताह्वानाङ्गबलिनिवेदनम्

आहूय देवता: सर्वा: बलिबिम्बपुरस्सरम्।
ग्राममध्यं समासाद्य ब्रह्माणं सन्निवेशयेत्।।५३।।
ग्रामस्य परितो वीथ्यां स्थण्डिलेषु यथाक्रमम्।
इन्द्रादिलोकपालांस्तान् बल्यर्थं सन्निवेशयेत्।।५४।।
एवमाहूय मेधावी देवदेवस्य शार्ङ्गिण:।
उत्सवाय यतेताथ देशकालनुसारत:।।५५।।

।। इति भार्गवतन्त्रे एकादशोऽध्याय:।।

उत्सव क्रम में देवता के आह्वान क्रम में बलि निवेदन

सभी देवों का आह्वान करके बलिबिम्ब को आगे करके ग्राम मध्य में आकर सबों को ब्रह्मा में निवेशित कर दें। ग्राम के बाहर वीथि में स्थण्डिलों में यथाक्रम इन्द्रादि लोकपालों को बलि के लिये निवेशित करें। देवदेव शार्ङ्गधारी विष्णु को उत्सव के लिये देशकाल के अनुसार मेधावी आवाहित करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में ग्यारहवाँ अध्याय सम्पूर्ण ।।

द्वादशोऽध्यायः

उत्सवविधिनिरूपणाध्यायः

उत्सवाङ्गभूताङ्कुरार्पणकाल:

उत्सवारम्भदिवसात् पूर्वमेवाङ्कुरार्पणम्।
तृतीयेऽहनि वा कुर्यात् पूर्वस्मिन् दिवसेऽपि वा।।१।।

उत्सव विधि निरूपण

उत्सवांगभूत अंकुरार्पण काल

उत्सव आरम्भ के दिन के तीन या एक दिन पहले अंकुरार्पण करें।

उत्सवक्रमे प्राकारादीनां शोधनं भूषणञ्च

प्राकारं मन्दिरं चापि वलजं वीथिका अपि।
प्रपाभिस्तोरणैश्चान्यैर्मालिकाभिः समन्ततः।।२।।
शोधयेद्गोमयांभोभिः रङ्गबल्यक्षतादिभिः।
अन्यैश्च विविधैर्दृश्यैः भूषयेच्च गृहाण्यपि।।३।।

उत्सव क्रम में प्राकारादि का शोधन और भूषण

मन्दिर का घेरा, वलज, गलियाँ, प्रपा, तोरण अन्य मालिका सबों का शोधन गोबर मिश्रित जल से करें। रंग वल्लियों का शोधन अक्षत से करें। अन्य विविध दृश्यों और घरों को शोधित करें।

यागमण्डपवेदिकुण्डकल्पनप्रकार:

सम्भार्याः यागसम्भाराः उत्सवार्थं विशेषतः।
अन्तराले दिशामिन्द्रे कल्पयेद्यागमण्डपम्।।४।।
सप्तभिर्बाहुदण्डैश्च समन्ताच्चतुरश्रकम्।
तस्य मध्ये भवेद्वेदिः हस्तमात्रसमुच्छ्रया।।५।।
हस्तद्वयेन विस्तीर्णा कुण्डानि परितस्ततः।
यद्वैककुण्डं प्राग्भागे चतुरश्रं मनोहरम्।।६।।
प्राच्यामाहवनीयं स्यात् दक्षिणस्यां तु दक्षिणम्।
गार्हपत्यं प्रतीचीने सभ्यमन्यत्र कल्पयेत्।।७।।
तोरणादिक्रियाः सर्वाः पूर्ववन्न विशिष्यते।

यागमण्डप वेदी कुण्ड कल्पन प्रकार

याग सामग्रियाँ उत्सव के लिये याग सम्भार याग मण्डप से पूर्व में रखें। सात हाथ लम्बा और सात हाथ चौड़ा चतुरस्त्र यज्ञ मण्डप बनावें। मण्डप के मध्य में एक हाथ लम्बी, एक हाथ चौड़ी और एक हाथ ऊँची वेदी बनावें। उसके बगल में दो हाथ लम्बा चौड़ा गड्ढा कुण्ड बनावें। यदि एक कुण्ड हो तो वेदी के पूरब तरफ चतुरस्त्र बनावें। पूर्व में आहवनीय दक्षिण से दक्षिण गार्हपत्य और पश्चिम में सभ्य कल्पित करें। तोरण आदि का निर्माण पूर्ववत् करें।

उत्सवार्थमाचार्यादिवरणादिकम्

आचार्याणामृत्विजां च तथैव परिचारिणाम्।।८।।
वरणं चतुरः पूर्वं देशिकान् वरयेत् प्रभुः।
शोभयेद्भूषणैर्वस्त्रैः गन्धमाल्यादिभिः पुरा।।९।।

उत्सव के लिये आचार्य आदि के वरणादि

आचार्य ऋत्विकों और परिचारकों के वरण के पहले चतुर देशिकों का वरण करें। उन्हें भूषण, वस्त्र, गन्ध, मालादि से सुशोभित करें।

उत्सवार्थ देवाधिवासप्रकारः

अधिवासं प्रकुर्वीत पूर्वस्मिन् दिवसे निशि।
स्नापयित्वाथ देवीभ्यां शयने शाययेद्धरिम्।।१०।।
तदर्थं कौतुकं बध्वा पश्चाच्छयनकल्पनम्।
कोणेषु स्थापयेद्दीपान् शय्याया देशिकोत्तमः।।११।।
समिद्भिरष्टभिर्होमो नृसूक्तेन चरुं पुनः।
सर्पिषाष्टौ पुनर्हुत्वा मूलेन मुनिपुङ्गवः।।१२।।
स्तुत्वाथ देवदेवेशं वेदैर्वाद्यैश्च मङ्गलैः।
जपैश्च मूलमन्त्रस्य जागरेण नयेन्निशाम्।।१३।।

उत्सव के लिये देवाधिवास प्रकार

उत्सव दिन के पहले एक दिन की रात्रि में अधिवासन करें। देवियों को नहला कर शय्या पर विष्णु को सुला दें। इसके लिये कौतुक बाँधें तब शयन कल्पन करें। शयन कक्ष में शय्या के चारों ओर के कोनों में देशिक दीपक स्थापित करें। आठ प्रकार की समिधाओं में नृसूक्त पाठ करते हुए हवन करें। तब चरु से हवन करें। इसके बाद मूल मन्त्र पढ़ते हुए गोघृत से आठ आहुति डालें। तब देवदेवेश की स्तुति वेद पाठ और वाद्य बाजन से करें। मूलमन्त्र का जप करते हुए रात्रि जागरण करें।

अधिवासानन्तरं मण्डपे देवस्य स्नपनमर्चनं च

ततः प्रभाते विमले दृष्टे भास्करमण्डले।
'उत्तिष्ठ' इति मन्त्रेण हरिमुत्थापयेद्गुरुः॥१४॥
'इदं विष्णु'रितिश्रुत्या शिविकायां निवेशयेत्।
वहेयुर्ब्राह्मणाः यानम् ध्यायन्तो विहगाधिपम्॥१५॥
नृत्तैश्च विविधैर्गेयैर्वाद्यैश्च विविधैरपि।
ब्रह्मघोषैस्तथा स्तोत्रैर्नीत्वा ग्रामप्रदक्षिणम्॥१६॥
मण्डपेऽलङ्कृते देवमवरोप्यासने शुभे।
उपचर्य यथायोगं सम्भारान् संभृतान् गुरुः॥१७॥
देवाय दर्शयेत् सर्वान् आनीतान् जनसंसदि।
अथ संस्नाप्य देवेशमभ्यर्च्य च निवेद्य च॥१८॥
कृत्वा च नित्यहोमान्तं निनयेत् गर्भमन्दिरम्।

अधिवासन के बाद मण्डप देव का स्नान और अर्चन

उसके बाद विमल प्रभात में भास्कर मण्डल दिखने पर 'उत्तिष्ठ' मन्त्र से गुरु श्री विष्णु को उठावें। 'इदं विष्णु' श्रुति से उन्हें पालकी में रखें। गरुड़ का ध्यान करते हुए ब्राह्मण पालकी को ढोयें। नृत्य, विविध गायन, वाद्य बाजन, ब्रह्मघोष, स्तोत्र पाठ करते हुए ग्राम की प्रदक्षिणा करावें। तब अलंकृत मण्डप में शुभ आसन पर देव को रखें। गुरु यथायोग उपचय करके सभी संभार से भृतों को देव को दिखावें। जन संसद के द्वारा लाये गये सम्भारों को भी दिखावें। तब देव को स्नान कराकर गन्धादि, नैवेद्य से अर्चन करें। तब नित्य होम के बाद देव को गर्भगृह में ले आयें।

उत्सवक्रमे प्रतिसरबन्धप्रकार:

सायं प्रविश्य सदनं यजमानेन देशिकः॥१९॥
प्रणम्य तमनुज्ञाप्य बद्ध्वा कल्याणकौतुकम्।
उत्सवस्नानबल्यर्चा प्रतिमास्वप्यनन्तरम्॥२०॥
बद्ध्वा प्रतिसरं पश्चात् तेषां हस्ते यथाविधि।
उत्थाप्य बलिबिम्बं तत् प्रादक्षिण्येन मन्दिरम्॥२१॥
यागमण्डपमानीय स्थापयेदासने हरिम्।

उत्सव क्रम में प्रतिसर बन्धन प्रकार

शाम में यजमान के साथ मन्दिर में प्रवेश करके देशिक यजमान से

प्रणाम कराकर अनुज्ञा से कल्याण कौतुक बन्धन करें। उत्सव स्नान बलि अर्चन प्रतिमा के स्वप्यन के बाद प्रतिमा के हाथ में यथाविधि प्रतिसर बन्धन करें। तब बलिबिम्ब को उठाकर मन्दिर की प्रदक्षिणा कराते हुए याग मण्डप में लाकर आसन पर स्थापित करें।

कुंभन्यासः तत्र तत्तद्देवानामर्चनक्रमश्च

वेदिकायां धान्यपीठे मध्ये कुंभं च दक्षिणे।।२२।।
करकं विन्यसेत्कुंभान् अष्टौ प्रागादिषु क्रमात्।
द्वारतोरणकुम्भानां प्रतिष्ठायामिवार्चनम्।।२३।।
मूलमूर्तिं यजेत्कुम्भे वर्धन्यामस्त्रदेवता।
प्रागादिदिक्षु कुम्भेषु वासुदेवादयः स्मृताः।।२४।।
आग्नेयादिषु कोणेषु पुरुषादीन् समर्चयेत्।
पुरुषश्च तथा सत्यः अच्युतोऽनन्त इत्यमी।।२५।।
अभ्यर्चयेच्च विधिवत् हवींषि च निवेदयेत्।
बलिबिम्बं तथाभ्यर्च्य निवेद्य च यथाविधि।।२६।।

कुंभ न्यास और उसके देवताओं का पूजन क्रम

वेदी के मध्य धान्यपीठ पर कुंभ स्थापित करें। उसके दक्षिण भाग में करक स्थापित करें। तब पूर्वादि क्रम से आठ कुंभों को स्थापित करें। द्वार तोरण कुंभों का पूजन प्रतिष्ठा के समान करें। मूलमूर्ति का पूजन कुंभ में करें। वर्धनी का अर्चन वर्धनी में करें। पूर्वादि दिशाओं के कुंभों में वासुदेव आदि आठ की पूजा करें। आग्नेय आदि कोणों में पुरुष आदि का अर्चन करें। पुरुषों में सत्य अच्युत अनन्त इत्यमी का विधिवत् अर्चन करके हवि निवेदित करें। बलिबिम्ब का अर्चन यथाविधि करके नैवेद्य प्रदान करें।

यागमण्डपे वेदपारायणादिक्रमः

प्रागाद्याशासु सर्वासु ऋग्यजुः सामपाठकान्।
अथर्वाङ्गिरसाभिज्ञान् पाठयित्वा यथाक्रमम्।।२७।।
तूर्यादिवाद्यघोषेण पूरिते च दिगन्तरे।

याग मण्डप में वेद पारायण आदि के क्रम

पूर्व आदि दिशाओं में स्थित ऋग्, यजु और साम पाठी अर्थव आंगिरस अभिज्ञान का पाठ यथाक्रम करें। तूर्य आदि वाद्य बाजन से दिगन्त गूंजित रहे।
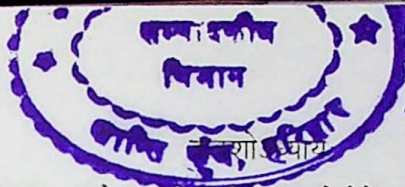
याগमण्डपे तत्तद्धोमकुण्डेषु तत्तद्देवोद्देश्यकहोमक्रमः

प्रागाद्याशासु कुण्डेषु वासुदेवादिकान् यजेत्।।२८।।
तीर्थावसानिकं तत्र सान्निध्यं प्रार्थयेदपि।
एवमभ्यर्चिते कुम्भे भगवत्यखिलेश्वरे।।२९।।
सर्पिराद्यैर्भवेद्धोमः तत्तन्मन्त्रैर्यथाक्रमम्।
सर्पिभिः कुसुमैर्धूपद्रव्यैश्च समिधा पुनः।।३०।।
पयसा चापि दध्ना च तिलव्रीहियवैरपि।
कुण्डाधिदैवतैर्मन्त्रैः पृथगष्टोत्तरं शतम्।।३१।।
अष्टाविंशतिरष्टौ वा होमः प्रागादिपूर्ववत्।
एवं हुत्वाथ विधिवत् नृसूक्तेन चरुं पुनः।।३२।।
प्रतिकुण्डं ब्रह्मकुण्डे पायसेन घृतेन वा।
ब्रह्मादिदेवानुद्दिश्य जुहुयात् कलशोद्भव।।३३।।
ब्रह्मणे चाथ रुद्राय प्रजानां पतये तथा।
इन्द्राय च महेन्द्राय भानवे जातवेधसे।।३४।।
धर्मराजाय मरुते कुबेराय च यातुने।
वरुणाय ऋषिभ्यश्च वेदेभ्यः पुष्पधन्वने।।३५।।
विश्वेभ्यश्चापि देवेभ्यः छन्दोभ्यः कालमूर्तये।
धरण्यै अद्रिराजाय नदीभ्यो वनमूर्तये।।३६।।
भूतेभ्यश्च पशुभ्यश्च ओषधीभ्यः श्रियै तथा।
अप्सरोभ्यश्च लोकेभ्यः समुद्रेभ्योऽम्बराय च।।३७।।
गन्धर्वेभ्यश्च यक्षेभ्यः पार्षदेभ्यश्च चक्रिणे।
चण्डादिद्वारपालेभ्यः सर्वेभ्यश्चापि विष्णवे।।३८।।
प्रणवाद्यग्निजायान्तं उक्त्वा होमं समाचरेत्।
ततस्तु मूलमन्त्रेण हुत्वेदं विष्णुरित्यृचा।।३९।।

याग मण्डप में होम कुण्डों के देवों के हवन का क्रम

पूर्वादि दिशाओं में स्थित कुण्डों में वासुदेवादि का पूजन करें। वहाँ पर तीर्थावसानिक के सान्निध्य के लिये प्रार्थना करें। इस प्रकार सभी कुंभों के अधीश्वरों के अर्चन के बाद उनके मन्त्रों से गोघृत आदि से यथाक्रम हवन करें। गोघृत, फूलों, धूप द्रव्यों, समिधाओं, दूध, दही, तिल, ब्रीहि, यव से कुण्ड के

अधिदेवों के मन्त्रों से प्रत्येक के लिये एक सौ आठ आहुतियों से हवन करें। पूर्वादि आठों दिशाओं के कुण्डों में पूर्ववत् अट्ठाईस-अट्ठाईस आहुतियों से हवन करें। इस प्रकार के विधिवत् हवन के बाद 'नृसूक्त' से चरु का हवन प्रत्येक कुण्ड में करें। ब्रह्म कुण्ड आदि में पायस या घी से हवन ब्रह्मादि देवताओं के उद्देश्य से करें। ब्रह्मा, रुद्र, प्रजापति, इन्द्र, महेन्द्र, सूर्य, अग्नि, धर्मराज, वायु, कुबेर, यातु, वरुण, ऋषि, वेद, कामदेव, विश्वेदेव, छन्द, कालमूर्ति, धरणी, गिरिराज, नदी, वनमूर्ति, भूत, पशु, औषधि, लक्ष्मी, अप्सरा, लोक, समुद्र, आकाश, गन्धर्व, यक्ष, पार्षद, चक्र, चण्डादि द्वारपाल, सभी वैष्णवों के लिये मन्त्र के पहले प्रणव और बाद में स्वाहा लगाकर हवन करें। इसके बाद मूल मन्त्र से और विष्णु ऋचा से हवन करें।

उत्सवक्रमे बलिदानप्रकारः

कृत्वा तु स्विष्टकृद्धोमं बलिदानं समाचरेत्।
माषान्नं घृतसंसिक्तमादाय परिचारकाः।।४०।।
धूपं दीपं तथा गन्धं पुष्पाणि सुरभीणि च।
अन्यानि पूजाद्रव्याणि वेदवाद्यपुरस्सरम्।।४१।।
यानमारोप्य बल्यर्चां तया साकं बलिं चरेत्।
प्रथमं यागशालायां प्रतिद्वारं बलिं क्षिपेत्।।४२।।
चण्डादिद्वारपालानां दद्यान्नित्योत्सवे यथा।
ग्राममध्यं समासाद्य ब्रह्मणे वितरेद्बलिम्।।४३।।
प्रागादीशानपर्यन्तम् इन्द्रादीनां बलिं क्षिपेत्।
बलिशिष्टं महापीठे निक्षिपेत्पीठमूर्धनि।।४४।।
तोयपूर्वोत्तरं दद्याद्बलिं कलशसंभव।
तत्र देवं समभ्यर्च्य निनयेद्यागमन्दिरम्।।४५।।

उत्सव क्रम में बलिदान प्रकार

स्वीष्टकृत हवन करके बलिदान का समाचरण करें। परिचारक घृतसिक्त उड़द भात, धूप, दीप, गन्ध, पुष्प सुवासित और अन्य पूजा द्रव्य मंगाकर आगे वेदपाठ, वाद्य बाजन कराते हुए यान में रखकर बलि देवता का अर्चन करें। पहले साक की बलि प्रदान करें। यागशाला के प्रत्येक द्वार पर बलि रखें। चण्ड आदि द्वारपालों को नित्योत्सव के समान बलि प्रदान करें। ग्राम के मध्य में लाकर ब्रह्मा को बलि प्रदान करें। तब पूर्व से ईशान तक इन्द्रादि आठों दिग्पालों

को बलि देवें। बलि के अवशिष्ट को महापीठ के शीर्ष भाग पर डालें। पूर्वोत्तर में जल का बलि देवें। वहाँ देव का अर्चन करके उन्हें याग मन्दिर में ले जायें।

उत्सवप्रसङ्गे वीथिकासु भगवत: परिक्रमणप्रकार:

मखकौतुकमाराध्य रथं वा शिविकादिकम्।
आरोप्य समलङ्कृत्य ब्राह्मणै: स्वस्तिवाचकै:।।४६।।
निष्क्रम्य मन्दिरात्तस्मात् सर्वावरणभूमिका:।
परिक्रमेद्वीथिकाश्च विद्वद्भिर्वेदपाठकै:।।४७।।
शास्त्रविद्भिश्च कविभि: तथा पौराणिकैरपि।
मौहूर्तिकैर्भिषग्भिश्च गद्यपद्यविमिश्रकम्।।४८।।
पठद्भिश्च स्तुतिपरै: नानाभाषाविशारदै:।
नृत्यद्भिश्चापि गायद्भि: गाणिक्येन च नृत्यता।४९।।
वेदान्तिभिश्च यतिभि: योगिभिर्भगवन्मयै:।
ब्रुवद्भिर्भगवच्छास्त्रं माहात्म्यं च पुन: पुन:।।५०।।
नानावाद्यरतै: पुंभि: स्त्रीभिश्चाक्षिमनोहरै:।
सर्वालङ्कारयुक्ताभिर्गमयेद्वीथिकां हरिम्।।५१।।
छत्रं च वालव्यजनं तालवृन्तं च शोभनम्।
पताकादीपिकास्स्तंभा: प्रदीपाश्च विशेषत:।।५२।।
गन्धोद्गारीणि धूपानि तोरणं च गवाक्षिकम्।
पताकाहस्तिनश्चाश्वा वाद्यानि विविधानि च।।५३।।
अन्यैश्च मङ्गलै: साकं परिक्रम्य प्रदक्षिणम्।

उत्सव प्रसङ्ग में वीथियों में भवगत परिक्रमण प्रकार

मखकौतुक के आराध्य को रथ या पालकी में बिठाकर अलंकृत करके ब्राह्मण और स्वस्तिवाचक मन्दिर से बाहर आवें। तब सभी आवरणों की भूमिकाओं की वीथियों में वेद पाठकों से वाचन कराते हुए परिक्रमा करें। शास्त्रज्ञानी कवि पौराणिक माहूर्तिक वैद्य गद्य, पद्य विमिश्रक नाना भाषा विशारद स्तुति पाठ करें। गणिकाएँ नृत्य करें, गाना गावें। वेदान्ती यति योगी भगवत शास्त्रों के भगवत स्तोत्रों और माहात्म्यों का पाठ बार-बार करें। नाना वाद्य बजाते पुरुष मनहर नयनी सभी अलंकारों से युक्त स्त्रियों के साथ विष्णु वीथियों में गमन करें। छत्र वालव्यजन तालवृन्त की शोभा करें। पताका, दीपक, स्तम्भ, प्रदीप,

सुगन्धित धूप, तोरण, गवाक्षी, पताका, हाथी-घोड़े, विविध वाद्य वादन और अन्य मंगल साक के साथ परिक्रमा प्रदक्षिणा करे।

वीथिपरिक्रमणानन्तरं मन्दिरे भगवत आराधनम्

मन्दिराभ्यन्तरे यानादवरोप्यासने शुभे।।५४।।
निवेश्य प्राङ्मुखं देवमुपचारैः पृथग्विधैः।
उपचर्य ततः स्नाप्य निवेद्य च महाहविः।।५५।।
नीराज्य परमेशानं निनयेन्मङ्गलावनिम्।
आरोप्य शयने देवम् अर्चयित्वा यथोचितम्।।५६।।
शय्योपचारमखिलम् नृत्तगीतादिभिः सह।
श्रिया धरण्या द्वाभ्यां वा स्वापयेत्पुरुषोत्तमम्।।५७।।

वीथि परिक्रमा के बाद मन्दिर में भगवत का आराधन

मन्दिर के अभ्यन्तर में देव को यान से उतार कर मन्दिर में शुभ आसन पर निवेशित करें। उनका मुख पूर्व की ओर रखें। देव का पूजन विविध उपचारों से पृथक विधियों से करें। तब स्नान कराकर महाहवि निवेदन करें। परमेशान की आरती करके मंगल भूमि में ले आयें। शयन के आरोपित करके यथोचित पूजन करें। सभी शय्या उपचारों, नृत्य, गीत के साथ लक्ष्मी, वसुधा दोनों को या पुरुषोत्तम का शयन करावें।

भगवतः दैनन्दिनोत्सवक्रमः

ततः प्रभाते तं देवम् उत्थाप्य शयनाद्गुरुः।
अर्चयित्वा यथाशास्त्रं कुम्भादीन् यागमन्दिरे।।५८।।
बलिबिम्बं समभ्यर्च्य हुत्वा वह्नौ यथापुरा।
बलिं च पूर्ववद्दत्वा यात्रां कुर्यात् यथा निशि।।५९।।
सायं प्रातः प्रतिदिनं पूजनं हवनं बलिः।
यात्रा च विधिवत्कार्या स्नपनं च यथाक्रमम्।।६०।।
दिवसे दिवसे कुर्यादुत्सवं शाङ्र्गधन्वनः।
देवीभ्यां वा श्रिया वापि विना वा केवलं हरेः।।६१।।

भगवत का दैनिक उत्सव क्रम

तब प्रभात बेला में गुरु देव को शयन से जगाकर कुम्भादि में यथाशास्त्र अर्चन करें। बलि मूर्ति का अर्चन करके अग्नि में पूर्ववत् हवन करें। पूर्ववत् बलि देकर रात के समान यात्रा करावें। प्रतिदिन शाम-सबेरे पूजन हवन

करके बलि प्रदान करें। विधिवत् यात्रा करावें। यथाक्रम स्नान करावें। प्रतिदिन विष्णु का उत्सव करें। देवियों के साथ या लक्ष्मी के साथ अथवा केवल विष्णु का उत्सव करें।

भगवतः मङ्गलोत्सवक्रमः

एवं महोत्सवे विष्णोर्वर्धमाने महामुने।
देवीभ्यां सह वा लक्ष्म्या कारयेन्मङ्गलोत्सवम्।।६२।।
पूजादिबलिदानान्तमनुष्ठाय यथाविधि।
अलङ्कृत्य च देवीभ्यां यानमारोप्य मण्डपम्।।६३।।
अन्यं नीत्वावरोप्याथ हेमसिंहासने शुभे।
निवेश्य प्राङ्मुखं देवं स्नापयेन्मङ्गलोदकैः।।६४।।
धान्यपीठस्य पुरतः मुसलं चाप्युलूखलम्।
शुद्धोदकेन संक्षाल्य मूलमन्त्रं समुच्चरन्।।६५।।
स्थापयित्वा नवैर्वस्त्रैः परिवेष्ट्य च पल्लवैः।
कुसुमैश्चन्दनैर्द्रव्यैः अलङ्कृत्य मनोहरम्।।६६।।
हरिद्रां तत्र निक्षिप्य श्रियं त्रैलोक्यमातरम्।
ध्यायन्नभ्यर्चयेत् गन्धपुष्पधूपादिभिः क्रमात्।।६७।।
ततो मङ्गलवादिन्यो देवदास्यः स्वलङ्कृताः।
आवहन्युर्निशां सर्वां यथासूक्ष्मं यथाविधम्।।६८।।
सौवर्णादिमयं कुंभं सूत्रवस्त्रादिवेष्टितम्।
धान्यराशौ समावेश्य निशाचूर्णेन पूरयेत्।।६९।।
सौवर्णलक्ष्मीप्रतिमां रत्नानि च निवेशयेत्।
कूर्चं च पल्लवं चापि शरावेण पिधापयेत्।।७०।।
तत्र श्रियं समावाह्य साङ्गं पूजां समाचरेत्।
मूलमन्त्रेण विधिवत्तैश्चूर्णैरभिषेचयेत्।।७१।।
श्रीसूक्तविद्ययाभ्यर्च्य यथाविधि यथापुरम्।
महाहविर्निवेद्यान्ते देशिकेन्द्रश्च ऋत्विजः।।७२।।
प्रदक्षिणीकृत्य हरिं विकिरेत् कुसुमाञ्जलिम्।
स्तोत्रयेद्विविधैः स्तोत्रैः मनःप्रह्लादनैरपि।।७३।।

भगवत मंगलोत्सव क्रम

महामुनि अगस्त्य इस प्रकार विष्णु के वर्धमान महोत्सव में देवियों के साथ या लक्ष्मी के साथ मंगलोत्सव करें। पूजा से लेकर बलिदान तक का अनुष्ठान यथाविधि करें। देवियों को अलंकृत करके यान में बैठाकर अन्य मण्डप में लाकर सोने के शुभ सिंहासन पर बैठावें। देव को पूर्व मुख बैठाकर मंगल जल से स्नान करावें। धान्यपीठ के आगे मुसल और ऊखल को शुद्धोदक से प्रक्षालित करके मूल मन्त्र का उच्चारण करें। स्थापित करके नया वस्त्र लपेटें। पल्लवों, फूलों, चन्दन द्रव्य से अलंकृत करके मनोहर बनावें। तीनों लोकों की माता लक्ष्मी पर हल्दी निक्षिप्त करें। ध्यान करके अर्चन, गन्ध, पुष्प आदि के क्रम से करें। तब मंगल वादन के साथ देवदासी को अलंकृत करके रात में सबों का आवाहन यथासूक्ष्म यथाविधि करें। सोने आदि के कुंभों को सूत्र वस्त्रादि से वेष्टित करें। धान्य राशि पर स्थापित करके हल्दी चूर्ण से भरे सोने की लक्ष्मी प्रतिमा रत्नादि का निवेश करें। कूर्च पल्लव भी देकर ढक्कन से ढक दें। उसमें लक्ष्मी का आवाहन करके अंगों सहित पूजा करें। मूलमन्त्र पढ़कर उस चूर्ण से विधिवत् अभिषेक श्रीसूक्तविद्या से पूर्ववत् करें। महानैवेद्य अर्पण के बाद देशिकेन्द्र और ऋत्विज प्रदक्षिणा करें। विष्णु पर पुष्पांजलि अर्पित करें। मन को आह्लादित करने वाले विविध स्तोत्रों से स्तुति करें।

मङ्गलोत्सवक्रमे जलद्रोण्यां भगवतः स्नपनप्रकारः

कस्मिंश्चित् दिवसे पश्चात् कारिते मङ्गलोत्सवे।
स्नापयेत्सह देवीभ्यां जलद्रोण्यां जगद्गुरुम्।।७४।।
अपराह्णे तु सम्प्राप्ते शिबिकायां जगद्गुरुम्।
श्रीभूमिभ्यां समारोप्य नदीतीरं नयेद्गुरुः।।७५।।
मण्डपे वा प्रपायां वा सर्वालङ्कारसंयुते।
भेरीमृदङ्गादिरवैः पूरिते च दिगन्तरे।।७६।।
ऋग्यजुस्सामवेदानां घोषेण परिमण्डिते।
नृत्यन्तीनां तु दासीनां गीतिस्वननिनादिते।।७७।।
शास्त्रश्रवणसक्तानां परस्परजिगीषुणाम्।
अन्योन्याक्रोशविन्यस्तपारुष्यनिनदान्विते।।७८।।
दृश्यैश्च दीपिकास्तम्भैर्दर्पणैश्च विराजिते।
कदलीक्रमुकस्तम्भैः सफलैः परिमण्डिते।।७९।।

लम्बमानैः पुष्पसरैः मुक्तादामभिरन्विते।
अतिस्वच्छेन वस्त्रेण सविताने मनोहरे।।८०।।
तत्र मध्ये धान्यपीठं परिकल्प्य मनोहरम्।
सौवर्णीं वा राजतीं वा जलद्रोणीं निवेशयेत्।।८१।।
कुङ्कुमक्षोदकर्पूरकस्तूरीरेणुमिश्रितैः ।
चन्दनक्षोदभरितैरम्बुभिः परिपूरयेत्।।८२।।
पुण्याहवाचनं कृत्वा ब्राह्मणैर्वेदपारगैः।
प्रोक्षयेत्तां जलद्रोणीमाधारादि विचिन्तयेत्।।८३।।
गङ्गाद्यास्सरितस्तत्र मन्त्रैरावाहयेज्जले।
पूजयेच्च निवेद्यान्त तास्सर्वास्तीर्थदेवताः।।८४।।
'अघमर्षणसूक्तं' तत् जपेयुः सामवारुणम्।
उत्थाप्य देवं देवीभ्यां जलद्रोण्यां निवेशयेत्।।८५।।
तत्र देवं समभ्यर्च्य सौवर्णान्यक्षतान्यपि।
परितो विकिरेद्दिक्षु चास्त्रमन्त्राभिमन्त्रितान्।।८६।।
तत उत्थाप्य देवेशं देवीभ्यां सिंहविष्टरे।
विन्यस्याभ्यर्च्य विधिवन्निवेद्य च महाहविः।।८७।।
यानमारोप्य विधिवत् प्रापयेन्मङ्गलावनिम्।

मंगलोत्सव क्रम में जलद्रोणी से भगवत के स्नान का प्रकार

मंगलोत्सव के बाद किसी भी दिन जगद्गुरु को देवियों के साथ जलद्रोणी (कठौता या नाद) में स्नान करावें। दोपहर दिन के बाद लक्ष्मी और वसुधा के साथ जगद्गुरु को पालकी में बैठाकर नदी के किनारे मण्डप या प्रपा (प्याऊ) में सभी अलंकारों से युक्त, ढोल, मृदंग के घोष से पूरित दिगन्तर, ऋग्यजुसाम वेदों के घोष से परिमण्डित, नृत्य करती दासियों, गीतस्वर से निनादित, शास्त्र श्रवण में आसक्तों, परस्पर जिज्ञासुओं के परस्पर वाग्युद्ध से निनादित, दीपिका स्तम्भ दर्पण से युक्त, केले के फलयुत स्तम्भों से परिमण्डित, पुष्प सरोवरों में झुके, मोती दाम से समन्वित, अतिस्वच्छ वस्त्र से आच्छादित मनोहर के मध्य में मनोहर धान्यपीठ बनवाकर सोने या चाँदी के कठौते में सबों को निवेशित करें। कुंकुम के घोल में कपूर, कस्तूरी चूर्ण, चन्दन लेप, मिश्रित जल से उसे पूरित करें। वेदपारग ब्राह्मण पुण्याहवाचन करके उसका प्रोक्षण करें। उस जल कठौते में आधार आदि का चिन्तन करें। गंगा आदि नदियों का उस

जल में मन्त्र से आवाहन करें। गन्ध, पुष्प से लेकर नैवेद्य तक के सभी उपचारों से उस तीर्थ देवताओं का पूजन करें। सामवारुण अघमर्षणसूक्त का पाठ करें। देव देवियों को उठाकर जलपूर्ण कठौते या नाद में विनिवेशित करें। वहाँ देव का अर्चन करके सोना, अक्षत आदि को अस्त्र मन्त्र से अभिमन्त्रित करके सभी दिशाओं में छीटें। तब देवेश और देवियों को उठाकर सिंहासन पर रखकर विधिवत् अर्चन करके महाहवि को निवेदित करें। यान में चढ़ाकर मंगल भूमि में ले आयें।

भगवतः मृगयोत्सवविधिः

अन्यस्मिन् दिवसे कुर्यान्मृगयां शार्ङ्गधन्वनः।।८८।।
रात्रौ प्रशस्ता देवस्य मृगया मुनिपुङ्गव।
बल्यन्तमखिलं कृत्वा तुरगे वारणेऽपि वा।।८९।।
आरोप्य देवं भूषाद्यैरलङ्कृत्य मनोहरम्।
शार्ङ्गं च सायकं तूणीं यथास्थानं निवेशयेत्।।९०।।
उष्णीषं कवचं चापि कल्पयेत्कनकाम्बरम्।
कमनीयतमं सर्वं वाहनं च परिच्छदम्।।९१।।
सायुधैः परिवारैश्च मङ्गलैरखिलैः सह।
अरण्यभागमखिलं नीत्वा तत्र प्रपाभुवि।।९२।।
अभ्यर्चयेद्यथायोगं नैवेद्यान्तं मधुद्विषम्।
ततः प्रदक्षिणीकृत्य यथापूर्वं निवेशयेत्।।९३।।

भगवत के मृगयोत्सव की विधि

इसके दूसरे दिन विष्णु शिवार की कल्पना करें। मृगया के लिये प्रशस्त रात में बलि प्रदान तक की सभी क्रियाओं के बाद घोड़े या हाथी पर देव देव को निवेशित करके भूषण आदि से मनहर अलंकृत करें। शार्ङ्गधनुष और बाणों को यथास्थान रखें। मुकुट, कवच, सोने का सुन्दर वस्त्र, वाहन परिच्छद, सायुध परिवार और अखिल मंगल सबों को वनभाग में लाकर जल पीने वाले पशु स्थान में यथायोग नैवेद्य तक की पूजा करें। प्रदक्षिणा करके पूर्ववत् रखें।

तीर्थयात्रार्थम् अनुज्ञाप्रार्थनं प्रतिसरबन्धनं च

अर्धरात्रे तु सम्प्राप्ते गत्वा गर्भगृहं गुरुः।
प्रणम्य यजमानेन प्रार्थयेत्पुरुषोत्तमम्।।९४।।
तीर्थयात्रा त्वया कार्या श्वः प्रभाते सुरोत्तम।
तत्र प्रतिसरारंभं त्वमनुज्ञातुमर्हसि।।९५।।

प्रार्थ्यैवं तीर्थबिम्बस्य बध्नीयात्कौतुकं करे।
शाययित्वार्चयित्वा च प्रातरुत्थाप्य तं पुनः।।९६।।
अभ्यर्च्य विधिवत्सर्वं कर्म बल्यन्तमाचरेत्।

तीर्थयात्रा के लिये अनुज्ञा प्रार्थना प्रतिसार बन्धन

आधी रात में गुरु गर्भगृह में यजमान से प्रणाम कराकर पुरुषोत्तम से प्रार्थना करें—

तीर्थयात्रा त्वया कार्या श्वः प्रभाते सुरोत्तम्।
तत्र प्रतिसरारंभं त्वमनुज्ञातुमर्हसि।।

इस प्रकार प्रार्थना करके तीर्थबिम्ब के हाथ में कौतुक बाँधें। शयन करा कर अर्चन करके प्रातः उन्हें जगाकर पुनः अर्चन करके बलि तक सभी कर्म को विधिवत् करें।

तीर्थयात्राक्रमे भगवतः अभिषेकक्रमः

तीर्थबिम्बं समादाय निवेश्य मुखमण्डपे।।९७।।
स्थापयित्वाग्रतस्तस्य धान्यपीठं प्रकल्पयेत्।
स्थापितान् यागशालायां कुंभानादाय देशिकः।।९८।।
परिषिच्य च वर्धन्या तैः कुंभैरभिषेचयेत्।
प्रोक्षणं मूलमन्त्रेण नृसूक्तेनाभिषेचनम्।।९९।।
एकबेरे मूलबेरं तैः कुम्भैरभिषेचयेत्।
पूर्वादिमध्यकुम्भान्तमभिषेकक्रमः स्मृतः।।१००।।
वस्त्रादिदीपपर्यन्तम् अभ्यर्च्य च निवेद्य च।

तीर्थयात्रा क्रम में भगवत का अभिषेक क्रम

तीर्थबिम्ब को लाकर मुख मण्डप में रखें। स्थापना करके उनके आगे धान्यपीठ बनावें। यागशाला में स्थापित कुंभों को लाकर देशिक वर्धनी कुंभ जल से अभिषेक करें। अन्य कुंभों के जल से भी अभिषेचन करें। मूलमन्त्र से प्रोक्षण करें और नृसूक्त से अभिषेचन करें। एक मूर्ति होने पर उन कुंभों के जल से मूलबिम्ब का अभिषेचन करें। पूर्वादि से मध्य कुंभ तक अभिषेक क्रम होता है। वस्त्र से लेकर नैवेद्य तक अर्चन करें।

तीर्थं प्रति भगवतः आनयनम् तत्र स्नपनक्रमश्च

सर्वमङ्गलसंयुक्तम् आरोप्य मखकौतुकम्।।१०१।।
हस्त्यादि वा रथं यानं तीर्थबिम्बपुरस्सरम्।
नदीतीरं समुद्रं वा तटाकं वाथवा सरः।।१०२।।

जल में मन्त्र से आवाहन करें। गन्ध, पुष्प से लेकर नैवेद्य तक के सभी उपचारों से उस तीर्थ देवताओं का पूजन करें। सामवारुण अधमर्षणसूक्त का पाठ करें। देव देवियों को उठाकर जलपूर्ण कठौते या नाद में विनिवेशित करें। वहाँ देव का अर्चन करके सोना, अक्षत आदि को अस्त्र मन्त्र से अभिमन्त्रित करके सभी दिशाओं में छीटें। तव देवेश और देवियों को उठाकर सिंहासन पर रखकर विधिवत् अर्चन करके महाहवि को निवेदित करें। यान में चढ़ाकर मंगल भूमि में ले आयें।

भगवत: मृगयोत्सवविधि:

अन्यस्मिन् दिवसे कुर्यान्मृगयां शार्ङ्गधन्वन:।।८८।।
रात्रौ प्रशस्ता देवस्य मृगया मुनिपुङ्गव।
बल्यन्तमखिलं कृत्वा तुरगे वारणेऽपि वा।।८९।।
आरोप्य देवं भूषाद्यैरलङ्कृत्य मनोहरम्।
शार्ङ्गं च सायकं तूणीं यथास्थानं निवेशयेत्।।९०।।
उष्णीषं कवचं चापि कल्पयेत्कनकाम्बरम्।
कमनीयतमं सर्वं वाहनं च परिच्छदम्।।९१।।
सायुधै: परिवारैश्च मङ्गलैरखिलै: सह।
अरण्यभागमखिलं नीत्वा तत्र प्रपाभुवि।।९२।।
अभ्यर्चयेद्यथायोगं नैवेद्यान्तं मधुद्विषम्।
तत: प्रदक्षिणीकृत्य यथापूर्वं निवेशयेत्।।९३।।

भगवत के मृगयोत्सव की विधि

इसके दूसरे दिन विष्णु शिवार की कल्पना करें। मृगया के लिये प्रशस्त रात में बलि प्रदान तक की सभी क्रियाओं के बाद घोड़े या हाथी पर देव देव को निवेशित करके भूषण आदि से मनहर अलंकृत करें। शार्ङ्गधनुष और बाणों को यथास्थान रखें। मुकुट, कवच, सोने का सुन्दर वस्त्र, वाहन परिच्छद, सायुध परिवार और अखिल मंगल सबों को वनभाग में लाकर जल पीने वाले पशु स्थान में यथायोग नैवेद्य तक की पूजा करें। प्रदक्षिणा करके पूर्ववत् रखें।

तीर्थयात्रार्थम् अनुज्ञाप्रार्थनं प्रतिसरबन्धनं च

अर्धरात्रे तु सम्प्राप्ते गत्वा गर्भगृहं गुरु:।
प्रणम्य यजमानेन प्रार्थयेत्पुरुषोत्तमम्।।९४।।
तीर्थयात्रा त्वया कार्या श्व: प्रभाते सुरोत्तम्।
तत्र प्रतिसरारंभं त्वमनुज्ञातुमर्हसि।।९५।।

प्रार्थ्यैवं तीर्थबिम्बस्य बध्नीयात्कौतुकं करे।
शाययित्वार्चयित्वा च प्रातरुत्थाप्य तं पुन:।।९६।।
अभ्यर्च्य विधिवत्सर्वं कर्म बल्यन्तमाचरेत्।

तीर्थयात्रा के लिये अनुज्ञा प्रार्थना प्रतिसार बन्धन

आधी रात में गुरु गर्भगृह में यजमान से प्रणाम कराकर पुरुषोत्तम से प्रार्थना करें—

तीर्थयात्रा त्वया कार्या श्व: प्रभाते सुरोत्तम्।
तत्र प्रतिसरारंभं त्वमनुज्ञातुमर्हसि।।

इस प्रकार प्रार्थना करके तीर्थबिम्ब के हाथ में कौतुक बाँधें। शयन करा कर अर्चन करके प्रात: उन्हें जगाकर पुन: अर्चन करके बलि तक सभी कर्म को विधिवत् करें।

तीर्थयात्राक्रमे भगवत: अभिषेकक्रम:

तीर्थबिम्बं समादाय निवेश्य मुखमण्डपे।।९७।।
स्थापयित्वाग्रतस्तस्य धान्यपीठं प्रकल्पयेत्।
स्थापितान् यागशालायां कुंभानादाय देशिक:।।९८।।
परिषिच्य च वर्धन्या तै: कुंभैरभिषेचयेत्।
प्रोक्षणं मूलमन्त्रेण नृसूक्तेनाभिषेचनम्।।९९।।
एकबेरे मूलबेरं तै: कुम्भैरभिषेचयेत्।
पूर्वादिमध्यकुम्भान्तमभिषेकक्रम: स्मृत:।।१००।।
वस्त्रादिदीपपर्यन्तम् अभ्यर्च्य च निवेद्य च।

तीर्थयात्रा क्रम में भगवत का अभिषेक क्रम

तीर्थबिम्ब को लाकर मुख मण्डप में रखें। स्थापना करके उनके आगे धान्यपीठ बनावें। यागशाला में स्थापित कुंभों को लाकर देशिक वर्धनी कुंभ जल से अभिषेक करें। अन्य कुंभों के जल से भी अभिषेचन करें। मूलमन्त्र से प्रोक्षण करें और नृसूक्त से अभिषेचन करें। एक मूर्ति होने पर उन कुंभों के जल से मूलबिम्ब का अभिषेचन करें। पूर्वादि से मध्य कुंभ तक अभिषेक क्रम होता है। वस्त्र से लेकर नैवेद्य तक अर्चन करें।

तीर्थं प्रति भगवत: आनयनम् तत्र स्नपनक्रमश्च

सर्वमङ्गलसंयुक्तम् आरोप्य मखकौतुकम्।।१०१।।
हस्त्यादि वा रथं यानं तीर्थबिम्बपुरस्सरम्।
नदीतीरं समुद्रं वा तटाकं वाथवा सर:।।१०२।।

जल में मन्त्र से आवाहन करें। गन्ध, पुष्प से लेकर नैवेद्य तक के सभी उपचारों से उस तीर्थ देवताओं का पूजन करें। सामवारुण अघमर्षणसूक्त का पाठ करें। देव देवियों को उठाकर जलपूर्ण कठौते या नाद में विनिवेशित करें। वहाँ देव का अर्चन करके सोना, अक्षत आदि को अस्त्र मन्त्र से अभिमन्त्रित करके सभी दिशाओं में छीटें। तब देवेश और देवियों को उठाकर सिंहासन पर रखकर विधिवत् अर्चन करके महाहवि को निवेदित करें। यान में चढ़ाकर मंगल भूमि में ले आयें।

भगवतः मृगयोत्सवविधिः

अन्यस्मिन् दिवसे कुर्यान्मृगयां शार्ङ्गधन्वनः।।८८।।
रात्रौ प्रशस्ता देवस्य मृगया मुनिपुङ्गव।
बल्यन्तमखिलं कृत्वा तुरगे वारणेऽपि वा।।८९।।
आरोप्य देवं भूषाद्यैरलङ्कृत्य मनोहरम्।
शार्ङ्गं च सायकं तूणीं यथास्थानं निवेशयेत्।।९०।।
उष्णीषं कवचं चापि कल्पयेत्कनकाम्बरम्।
कमनीयतमं सर्वं वाहनं च परिच्छदम्।।९१।।
सायुधैः परिवारैश्च मङ्गलैरखिलैः सह।
अरण्यभागमखिलं नीत्वा तत्र प्रपाभुवि।।९२।।
अभ्यर्चयेद्यथायोगं नैवेद्यान्तं मधुद्विषम्।
ततः प्रदक्षिणीकृत्य यथापूर्वं निवेशयेत्।।९३।।

भगवत के मृगयोत्सव की विधि

इसके दूसरे दिन विष्णु शिवार की कल्पना करें। मृगया के लिये प्रशस्त रात में बलि प्रदान तक की सभी क्रियाओं के बाद घोड़े या हाथी पर देव देव को निवेशित करके भूषण आदि से मनहर अलंकृत करें। शार्ङ्गधनुष और बाणों को यथास्थान रखें। मुकुट, कवच, सोने का सुन्दर वस्त्र, वाहन परिच्छद, सायुध परिवार और अखिल मंगल सबों को वनभाग में लाकर जल पीने वाले पशु स्थान में यथायोग नैवेद्य तक की पूजा करें। प्रदक्षिणा करके पूर्ववत् रखें।

तीर्थयात्रार्थम् अनुज्ञाप्रार्थनं प्रतिसरबन्धनं च

अर्धरात्रे तु सम्प्राप्ते गत्वा गर्भगृहं गुरुः।
प्रणम्य यजमानेन प्रार्थयेत्पुरुषोत्तमम्।।९४।।
तीर्थयात्रा त्वया कार्या श्वः प्रभाते सुरोत्तम्।
तत्र प्रतिसरारंभं त्वमनुज्ञातुमर्हसि।।९५।।

प्रार्थ्यैवं तीर्थबिम्बस्य बघ्नीयात्कौतुकं करे।
शाययित्वार्चयित्वा च प्रातरुत्थाप्य तं पुन:।।९६।।
अभ्यर्च्य विधिवत्सर्वं कर्म बल्यन्तमाचरेत्।

तीर्थयात्रा के लिये अनुज्ञा प्रार्थना प्रतिसार बन्धन

आधी रात में गुरु गर्भगृह में यजमान से प्रणाम कराकर पुरुषोत्तम से प्रार्थना करें—

तीर्थयात्रा त्वया कार्या श्व: प्रभाते सुरोत्तम्।
तत्र प्रतिसरारंभं त्वमनुज्ञातुमर्हसि।।

इस प्रकार प्रार्थना करके तीर्थबिम्ब के हाथ में कौतुक बाँधें। शयन करा कर अर्चन करके प्रात: उन्हें जगाकर पुन: अर्चन करके बलि तक सभी कर्म को विधिवत् करें।

तीर्थयात्राक्रमे भगवत: अभिषेकक्रम:

तीर्थबिम्बं समादाय निवेश्य मुखमण्डपे।।९७।।
स्थापयित्वाग्रतस्तस्य धान्यपीठं प्रकल्पयेत्।
स्थापितान् यागशालायां कुंभानादाय देशिक:।।९८।।
परिषिच्य च वर्धन्या तै: कुंभैरभिषेचयेत्।
प्रोक्षणं मूलमन्त्रेण नृसूक्तेनाभिषेचनम्।।९९।।
एकबेरे मूलबेरं तै: कुम्भैरभिषेचयेत्।
पूर्वादिमध्यकुम्भान्तमभिषेकक्रम: स्मृत:।।१००।।
वस्त्रादिदीपपर्यन्तम् अभ्यर्च्य च निवेद्य च।

तीर्थयात्रा क्रम में भगवत का अभिषेक क्रम

तीर्थबिम्ब को लाकर मुख मण्डप में रखें। स्थापना करके उनके आगे धान्यपीठ बनावें। यागशाला में स्थापित कुंभों को लाकर देशिक वर्धनी कुंभ जल से अभिषेक करें। अन्य कुंभों के जल से भी अभिषेचन करें। मूलमन्त्र से प्रोक्षण करें और नृसूक्त से अभिषेचन करें। एक मूर्ति होने पर उन कुंभों के जल से मूलबिम्ब का अभिषेचन करें। पूर्वादि से मध्य कुंभ तक अभिषेक क्रम होता है। वस्त्र से लेकर नैवेद्य तक अर्चन करें।

तीर्थ प्रति भगवत: आनयनम् तत्र स्नपनक्रमश्च

सर्वमङ्गलसंयुक्तम् आरोप्य मखकौतुकम्।।१०१।।
हस्त्यादि वा रथं यानं तीर्थबिम्बपुरस्सरम्।
नदीतीरं समुद्रं वा तटाकं वाथवा सर:।।१०२।।

गमयित्वोत्सवाङ्गेन कल्पिते तत्र मण्डपे।
अवरोप्यासने यानान्निविष्टं तीर्थकौतुकम्।।१०३।।
स्नापयेन्नवभिः कुंभैरर्चितैश्च यथाविधि।
तीर्थेषु सरिदादीनां गङ्गाद्यावाहनं चरेत्।।१०४।।

तीर्थयात्रा के लिये भगवत को लाने और स्नान क्रम

सभी मंगलों से युक्त भावकौतुक कल्पित करें। तीर्थ मूर्ति के आगे हाथी या रथ यान खड़ा करें। उन्हें नदी, तीर या समुद्र के किनारे तालाब या सरोवर तट पर उत्सव के लिये कल्पित मण्डप में ले आयें। यान में निविष्ट तीर्थकौतुक को आसन पर रखें। यथाविधि अर्चित नवों कुंभों के जल से स्नान करावें। तीर्थ में सरिता आदि में गंगा आदि नदियों का आवाहन करें।

तीर्थयात्राक्रमे तीर्थबिम्बाद्यलाभे विकल्पा:

तीर्थबिम्बमलाभे तु चक्रं वा त्रिर्निमज्जयेत्।
चक्रेण तीर्थे कर्तव्ये सति नद्यादि वारिभिः।।१०५।।
कूर्चाग्रपतितैर्धीमान् प्रोक्ष्य कल्याणकौतुकम्।
सरित्सु चक्रमादाय चक्रमन्त्रेण मज्जयेत्।।१०६।।
अलाभे चापि चक्रस्य कूर्चेनैव समाचरेत्।

तीर्थयात्रा क्रम में तीर्थ बिम्बादि के नहाने पर विकल्प

तीर्थ मूर्ति के न होने पर चक्र को तीन बार निमज्जित करें। नदी आदि के जल को चक्र से तीर्थ बनावें। कूर्चाग्र से पतित जल से कल्याण कौतुक का प्रोक्षण करें। चक्र को नदी में लाकर चक्र मन्त्र से मज्जित करें। चक्र के भी न होने पर कूर्च से समाचरण करें।

तीर्थस्नानफलकीर्तनम्

स्नान्ति ये देवदेवेन ते नरा मुक्तकल्मषाः।।१०७।।
यान्ति ध्रुवं सुदुष्प्रापं शाश्वतं कमलापतेः।

तीर्थ स्नान फल का कीर्तन

जो देव देवेश को तीर्थ स्नान कराता है, वह मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है। अन्त में दुष्प्राप्य कमलापति के शाश्वत लोक वैकुण्ठ में जाता है।

तीर्थस्नपनानन्तरं भगवतः अर्चनमानयनञ्च

ततो मण्डपमानीय समभ्यर्च्य यथाविधि।।१०८।।
प्रादक्षिण्येन गमनं प्रापणं मङ्गलावनेः।

तीर्थ स्नान के बाद भगवत का अर्चन और ले आना

तब मण्डप में लाकर यथाविधि अर्चन करें। प्रदक्षिणा क्रम से गमन और मंगल भूमि में प्रापण करावें।

उत्सवक्रमे ब्राह्मणभोजनविधानम्

सहस्त्रं वा शतं वापि लक्षं वापि यथावसु।।१०९।।
भोजनं ब्राह्मणानां तु प्रत्यहं च महोत्सवे।

उत्सवक्रम में ब्राह्मण भोजन विधान

महोत्सव में प्रतिदिन एक हजार या एक सौ या एक लाख ब्राह्मणों को भोजन करावें।

उत्सवान्तस्नपनं हविर्निवेदनं तत्तद्धोमप्रकारः अग्निविसर्जनं च

तद्रात्रौ स्नपनं कुर्यात् उत्सवान्तोचितं क्रमात्।।११०।।
हविर्निवेदनान्तं तु समाराध्य यथाविधि।
यागमण्डपमासाद्य होमं कृत्वा यथापुरम्।।१११।।
शान्तिहोमं ततः कुर्यात् संपाताज्यं न चाहरेत्।
प्रायश्चित्ताय जुहुयात् पञ्चोपनिषदा शतम्।।११२।।
अग्नीन् विसर्जयेत् पश्चात् पालिकातोरणास्थितान्।

उत्सव के अन्त में स्नान हवि निवेदन उससे हवन प्रकार अग्नि विसर्जन

उत्सव अन्त के लिये उचित स्नान करावें। हवि निवेदन तक यथाविधि समाराधन करें। यागमण्डप में आकर पूर्ववत् हवन करें। तब शान्ति हवन करें। संपात घृत जमा करें। प्रायश्चित्त के लिये एक सौ हवन पंचोपनिषद से करें। अग्नि का विसर्जन करें।

गरुडाराधनम् तदुद्वासनम् ध्वजावरोहणञ्च

देवमारोप्य यानादौ ध्वजस्तंभं समानयेत्।।११३।।
वैनतेयं समभ्यर्च्य निवेद्य च महाहविः।
संहारक्रममाश्रित्य पटात्ताक्ष्‍र्यं तमुद्वसेत्।।११४।।
सन्निधाने तु बिम्बस्य ध्वजं तमवरोहयेत्।

पालिका तोरण स्थित देवों को यानादि में चढ़ा दें। ध्वज स्तम्भ का सम्मान करें। गरुड़ का अर्चन करें। महाहवि निवेदित करें। संहार क्रम के आश्रय से झण्डे के गरुड़ का उद्‌वासन करें। बिम्ब ध्वज के बगल में उसे फहरा दें।

उत्सवप्रसंगे आवाहितानां देवानामुद्वासनविधिः

आवाहितांस्ततो देवान् स्थाने स्थाने स्थितानपि।।११५।।
केवलेनैव तूर्येण बलिं दत्त्वा गुरूत्तमः।
उद्वास्य नामभिः स्वैः स्वैः मूकैः परिकरैः सह।।११६।।

उत्सव प्रसंग में आवाहित के उद्वासन की विधि

तब आवाहित देवताओं और जगह-जगह स्थितों को भी उत्तम गुरु तूर्य से बलि प्रदान करें। उनके अपने-अपने नामों से मूक परिकरों के साथ उद्वासित करें।

आलये तत्तत्स्थाने उत्सवादिबिम्बानां निवेशः आराधकस्य गमनं च

प्रविश्य धाम देवस्य गर्भगेहे निवेशयेत्।
उत्सवस्नानबल्यर्चातीर्थबिम्बानि पूर्ववत्।।११७।।
अष्टाक्षरं ततो मन्त्रं सहस्रं वा शतावरम्।
जप्त्वा प्रणम्य देवेशमनुज्ञाप्य समाव्रजेत्।।११८।।

।। इति श्री भार्गवतन्त्रे द्वादशोऽध्यायः।।

आलय में उनके स्थानों में उत्सवादि बिम्बों का निवेश आराधक का गमन

देव के गर्भगृह में जाकर उत्सव स्नान, बलि, अर्चा, तीर्थबिम्बों को पूर्ववत् स्थापित करें। अष्टाक्षर मन्त्र का जप एक सौ बार या हजार बार करें। जप के बाद प्रणाम करके देव से आज्ञा लेकर समाव्रजन करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में बारहवाँ अध्याय सम्पूर्ण।।

त्रयोदशोऽध्यायः

मण्डलकल्पनपूर्वकपुष्पयागविधिनिरूपणाध्यायः

मण्डलकल्पनात् पूर्वं भगवतः आराधनम्

श्रीरामः

प्रभातायां त्रियामायाम् आदित्येऽभ्युदिते गुरुः।
निर्वर्त्य नियमान् स्वीयान् भक्तैर्भागवतैः सह।।१।।
आलयाभ्यन्तरं गत्वा संपूज्य च यथाविधि।
समाप्य बलिदानान्तम् आचार्यो मण्डपान्तरे।।२।।

मण्डल कल्पनपूर्वक पुष्पयाग विधि का निरूपण

मण्डल कल्पन के पहले भगवत का आराधन

श्री भार्गव राम ने कहा कि प्रभात के तीसरे प्रहर में गुरु अपने सभी नियमों को भागवत भक्तों के साथ पालन करके सूर्योदय होने पर मन्दिर के अन्दर जाकर यथाविधि पूजा करें। आचार्य मण्डप में बलिदान तक सभी कर्मों को समाप्त करें।

मण्डलवेदिकाकल्पनप्रकारः

चक्राब्जं वर्त्तयेद्धीमान् वक्ष्यमाणेन वर्त्मना।
आयामसम विस्तारैर्वेदिकाम् परिकल्पयेत्।।३।।
पञ्चभिर्वा चतुर्भिर्वा हस्तैर्दृश्यां मनोहराम्।
गोमयाम्भोभिःरालिप्य कुर्याद्दर्पणसन्निभाम्।।४।।

मण्डल वेदी निर्माण का प्रकार

बुद्धिमान वक्ष्यमान विधि से चक्राब्ज बनावें। बराबर लम्बाई चौड़ाई की वेदी बनावें। जिसकी लम्बाई चौड़ाई पाँच हाथ या चार हाथ हो। देखने में मनोहर हो। गोबर जल से लीप पोतकर दर्पण के समान स्वच्छ बनावें।

मण्डलकल्पनार्थं सूत्रपातविधिः

प्राञ्चि तिर्यञ्चि सूत्राणि दश सप्त च पातयेत्।
षट् पञ्च द्वे च कोष्ठानि सन्ति मध्येऽथ षट्त्रिषु।।५।।

मण्डल निर्माण के लिये सूत्रपात विधि

पूर्व से पश्चिम दश और दक्षिण से उत्तर सात सूत्रपात करें। इससे छः, पाँच, दो कोष्ठ छः, तीन के मध्य में बनते हैं।

कर्णिकादिपञ्चक्षेत्रविभागक्रम:

मध्ये शङ्कुं स्थापयित्वा भ्रामयित्वाथ पञ्चधा।
भुवं विभज्य सूत्रेण मध्यमं कर्णिकापदम्।।६।।
द्वितीयं केसरदलं नाभीनां परिकल्पने।
तृतीयं च तुरीयं च द्वे चारक्षेत्रमुच्यते।।७।।
पञ्चमं नेमिभूरेषां बहि: कोष्ठानि मार्जयेत्।

कर्णिका आदि पाँच क्षेत्र विभाग क्रम

मध्य में शंकु स्थापित करके सूत्र को पाँच बार घुमाकर भूतल क्षेत्र को विभाजित करें। इसके मध्य में कर्णिका क्षेत्र होता है। नाभि से दूसरे क्षेत्र में केसर कल्पित होते हैं। तीसरे और चौथे क्षेत्र को चार क्षेत्र कहते हैं। पाँचवा क्षेत्र नेमि होता है। इसके बाहर के कोष्ठों को मिटा दें।

मण्डलद्वारक्षेत्रकल्पनप्रकार:

त्रिधा तद्विभजेत्क्षेत्रं सूत्रभ्रमणवर्त्मना।।८।।
कर्णिकाक्षेत्रमानने सूत्रपातं चतुर्दिश।
तथाकृते चतुर्दिक्षु द्वारक्षेत्रं भविष्यति।।९।।

मण्डलद्वार क्षेत्र कल्पन प्रकार

सूत्र को घुमाकर उस क्षेत्र का विभाजन तीन भाग में करें। कर्णिका क्षेत्र के मान से चारों ओर सूत्रपात करें। ऐसा करने से द्वारक्षेत्र निर्मित होता है।

मण्डले द्वादशाब्जनिर्माणस्थाननिर्देश:

प्रत्यावरणभूभागे द्वादशाब्जानि कल्पयेत्।
कोणे कोणे भवेदेकं द्वे द्वे वलजपार्श्वयो:।।१०।।

मण्डप में द्वादशदल निर्माण स्थान का निर्देश

प्रत्येक आवरण के भूभाग में बारह कमल कल्पित करें। प्रत्येक कोने में एक-एक और बलज पार्श्वों में दो-दो कमल बनावें।

मण्डलकोणेषु पाञ्चजन्यकल्पननिर्देश:

चतुर्ष्वपि च कोणेषु बहिरावरणत्रयात्।
पाञ्चजन्यं सुरुचिरं कल्पयेच्छास्त्रवित्तम:।।११।।

मण्डल के कानों में पांचजन्य कल्पन का निर्देश

तीनों आवरणों के चारों कोनों में शास्त्रज्ञ सुन्दर पांचजन्य बनावें।

कर्णिकाक्षेत्रे द्वादशबिन्दुकल्पननिर्देशः

कल्पयेत्कर्णिकाक्षेत्रे बिन्दुद्वादशकं बुधः।

कर्णिका क्षेत्र में बारह बिन्दु कल्पन के निर्देश

विद्वान कर्णिका क्षेत्र में बारह बिन्दु कल्पित करें।

मण्डले अब्जस्य केसरादिपदनिर्माणप्रकारः

सूत्रभ्रमणमार्गेण द्वितीयं विभजेत्त्रिधा।।१२।।
प्रथमं केसरपदं द्वितीयं दलभूर्भवेत्।
तृतीयं नाभिवलयं केसरान् नवतिस्सषट्।।१३।।
द्वादशाम्बुजरेखाश्च दलभूमौ प्रकल्पयेत्।
दिग्विदिग्भागकलिताश्चतस्रो विंशतिस्तथा।।१४।।

मण्डल के कमलों में केसर आदि निर्माण प्रकार

सूत्र भ्रमण करके द्वितीय क्षेत्र का तीन भाग करें। इसका प्रथम भाग केसर पद और द्वितीय दल भूभाग होता है। तृतीय नाभिवलय होता है। इसमें छियानबे केसर होते हैं। द्वादश कमल रेखादल भूमि में कल्पित करें। दिग्विदिग्भाग-कलित चार और बीस होते हैं।

मण्डले अरकल्पनप्रकारः

एकीकृत्य द्वयं क्षेत्रमररेखाः प्रकल्पयेत्।
अरद्वयं विदिक्षु स्यात् एकैकं दिक्षु कल्पयेत्।।१५।।
अम्भोजदलतुल्यानि नीलोत्पलनिभानि च।
मण्डलं शोभयेत्पञ्चविधैर्वर्णैर्यथाक्रमम्।।१६।।

मण्डल में अर कल्पन प्रकार

दोनों क्षेत्रों को एक में मिलाकर क्षेत्र रेखा प्रकल्पित करें। विदिक्षुओं में अरद्वय और दिशाओं में एक-एक अर बनावें। नीलकमल के समान कमल के दलों को बनावें। पाँच प्रकार के रंगों से मण्डल को यथाक्रम बनावें।

मण्डले वर्णकल्पनार्थमुपादानद्रव्याणि

शालिपिष्टैर्गन्धचूर्णैः श्वेतवर्णो हरिद्रया।
पीतवर्णस्तु याज्ञीयैरङ्गारैर्नीलमुच्यते।।१७।।
याज्ञीयैश्च दलैश्चूर्णैः श्यामलो वर्ण ईरितः।
कुङ्कुमैरेव रक्तं स्यादेवं पञ्चविधः स्मृतः।।१८।।

मण्डल में द्रव्य प्रकल्पन के लिये उपादन द्रव्य

मण्डल वर्ण कल्पन के लिये शालिपिष्ट, गन्धचूर्ण का उजला रंग,

हल्दी चूर्ण का पीला वर्ण और यज्ञ के अंगारों से नीला रंग बनावें। यज्ञ के दलों के चूर्ण का वर्ण नीला मान्य है। कुंकुम से लाल रंग होता है। यही पाँच रंग मान्य हैं।

अब्जकर्णिकादीनां वर्णकल्पनविवेक:

कर्णिकां पीतवर्णेन बिन्दून् शुक्लेन कल्पयेत्।
पाटलैः कर्णिकारेखाः कृष्णैः केसरभूतलम्।।१९।।
द्विधा कृत्वा पूर्वभागं श्वेतैर्भागमथोत्तरम्।
पीतैरग्रेऽर्जुनैर्बिन्दून् रक्तैश्च दलकोटिषु।।२०।।
आद्यन्तयोस्तु पत्राणां सितैरक्तैश्च शोभनम्।
दलान्तवलयं रक्तैः भूषयेदथवार्जुनैः।।२१।।
श्यामेन भूषयेन्नाभिमसितेनारभूतलम्।
अराणि रक्तवर्णेन तदन्तवलयं सितैः।।२२।।
असितैर्नेमिवसतिं सितैर्नेम्यन्तभूतलम्।
प्रथमावरणं कृष्णैर्द्वितीयावरणं सितैः।।२३।।
तृतीयावरणं रक्तैः पद्मानि च यथापुरम्।
रक्तपीतासितसितैर्द्वाराणीन्द्रादिदिक्क्रमात्।।२४।।
शङ्खानर्जुनवर्णेन मध्यरेखारुणामता।

कमल कर्णिका आदि के वर्ण कल्पन विवेक

कर्णिका पीले रंग की, बिंदु उजले रंग का बनावें। कर्णिका रेखा गुलाबी, केसर भूतल काला होता है। पूर्वभाग को दो भाग करके पहले भाग को उजला और दूसरे भाग को अर्जुन बिन्दु पीले और दलों को लाल बनावें। आद्यन्त पत्रों को उजला और लाल शोभन बनावें। दलों के अंतिम वलयों को लाल बनावें अथवा अर्जुन के फूल के रंग का बनावें। नाभि को काला और नार भूतल को उजला बनावें। अरों को लाल रंग का और उनके अन्तिम वलयों को उजले रंग का बनावें। नेमि को काला और नेमि के अन्तिम भूतल को उजला बनावें। प्रथम आवरण काला और दूसरे आवरण को उजला बनावें। तीसरे आवरण को लाल और पद्मों को पूर्ववत् रखें। पूर्वादि दिशाओं के द्वारों को लाल, पीला, काला और उजला बनावें। अर्जुन वर्ण का शंख और मध्य रेखा को लाल बनावें।

चक्रमण्डलस्य वर्णकल्पनप्रकार:

श्वेतैः रक्तैश्च पीतैश्च श्यामैः कृष्णैश्च पञ्चभिः।।२५।।
वर्णैर्वा कालकुसुमैः रञ्जयेच्चक्रमण्डलम्।

चक्रमण्डल के वर्ण कल्पन प्रकार

चक्र मण्डल को उजला, लाल, पीला, श्याम, काला पाँच रंगों का बनावें अथवा काल कुसम से बनावें।

मण्डले भगवतः आराधनम् अनुज्ञायाचनञ्च

मण्डलं चित्रयित्वैवं प्रोक्ष्य पुण्याहवारिणा।।२६।।
भद्रपीठं न्यसेदस्मिन् तस्मिन् देवं निवेशयेत्।
अर्घ्यपाद्यादिभिर्देवमर्चयित्वा प्रणम्य तम्।।२७।।
भगवन् पुण्डरीकाक्ष सर्वलोकेश्वर प्रभो।
प्रीतयेऽनुष्ठितस्तेऽद्य ध्वजपूर्वो महोत्सवः।।२८।।
मया च यजमानेन ऋत्विग्भिः साधकैरपि।
तत्र न्यूनातिरेकाभ्यां दुष्कृतं यदि जायते।।२९।।
तद्दोषशान्तये पुष्पैर्यष्टुमिच्छामि सम्प्रति।
अनुजानीहि मां देव पूरयस्व क्रियामपि।।३०।।
इति विज्ञाप्य देवेशं प्रारभेत्कुसुमार्चनम्।

मण्डल में भगवत के आराधन हेतु अनुज्ञा याचन

इस प्रकार मण्डल को चित्रित करके पुण्याह जल से प्रोक्षण करें। इसका न्यास भद्रपीठ पर करें और उसमें देव को निवेशित करें। अर्घ्य, पाद्य आदि से देव का अर्चन करके प्रणाम करें और प्रार्थना करें—

मया च यजमानेन ऋत्विग्भिः साधकैरपि।
तत्र न्यूनातिरेकाभ्यां दुष्कृतं यदि जायते।।
तद्दोषशान्तये पुष्पैर्यष्टुमिच्छामि सम्प्रति।
अनुजानीहि मां देव पूरयस्व क्रियामपि।।

देव से ऐसा कहकर पुष्पार्चन प्रारम्भ करें।

मण्डले तत्तदेवानाम् आराधनस्थानविधिनिर्देशः

'द्वादशाक्षर'वर्णेशान् बिन्दुषु द्वादशस्वपि।।३१।।
कर्णिकायां वासुदेवमावाह्याभ्यर्चनं ततः।
अर्घ्यं पाद्यं तथाचामं स्नानं वस्त्रोपवीतकम्।।३२।।
गन्धं पुष्पं भूषणं च उपचारा नव स्मृताः।
प्रत्यक्षरं च कुसुमैरर्चयेत्कलशोद्भव।।३३।।

अङ्गानि हृदयादीनि कुसुमैरञ्जलिस्थितैः।
फलं भवतु मे पुष्पैर्नम इत्यन्तमुच्चरन्।।३४।।
भूषणानि तथोद्दिश्य श्रीवत्सप्रभृतीनि च।
सुदश्रनाद्यायुधानि पुष्पैरभ्यर्चनं चरेत्।।३५।।
केसरेषु श्रियाद्यष्टौ तथा पुष्पैस्समर्चनम्।
ततो द्वादशशक्तीश्च यजेत दलभूमिषु।।३६।।
दलान्तवलये शक्तीर्व्याप्त्याद्यास्तास्समर्चयेत्।
नाभिभागेऽर्चयेद्विष्णुमावाह्य कुसुमैर्बुधः।।३७।।
विष्ण्वादीन् द्वादशारेषु कुसुमैः परिपूजयेत्।
अरान्तवलये देवान् मत्स्यादीन् नेमिभूतले।।३८।
शङ्खादीन्यायुधान्यष्टौ प्रथमावरणे बहिः।
केशवादीन् द्वादशाब्जे द्वितीयावरणाम्बुजे।।३९।।
वासुदेवादयोऽभ्यर्च्यास्तृतीयावरणे तथा।
आदित्या द्वादशाराध्या पद्मेषु द्वादशस्वपि।।४०।।
पूर्वद्वारे खगेशानं दक्षिणे तु सुदर्शनम्।
गदामपांपतिद्वारे सोमे शङ्खं समर्चयेत्।।४१।।

मण्डल में उनके देवों का आराधन स्थान और विधि निर्देश

द्वादशाक्षर मन्त्र से बिन्दुओं में बारह विष्णु की पूजा करें। कर्णिका में वासुदेव का आवाहन करके पूजा करें। अर्घ्य, पाद्य, आचमनीय, स्नान, जनेऊ, गन्ध, पुष्प आदि नव उपचारों से पूजा करें। मन्त्र के प्रत्येक अक्षर से देव को पुष्प अर्पण करें। हृदयादि अंगों की पूजा पुष्पांजलि से करें। इस समय यह कहें—'फलं भवतु मे पुष्पै नमः।' देव के भूषणों, श्रीवत्सादि, सुदर्शन आदि आयुधों का अर्चन पुष्पों से करें। केसरो में लक्ष्मी आदि आठों का अर्चन फूलों से करें। तब दल भूमियों में द्वादश शक्तियों की पूजा करें। दलान्त वलयों में व्याप्ता आदि शक्तियों का अर्चन करें। नाभि भाग में विष्णु का आवाहन करके पुष्पों से अर्चन करें। बारहों अरों में विष्णु आदि बारहों की पूजा करें। अरों के अन्त के वलयों में मत्स्यादि का अर्चन करें। नेमि भूतल पर शंखादि आठों आयुधों की पूजा प्रथम आवरण के बाहर करें। द्वितीय आवरण के बारह दलों में केशव आदि बारह की पूजा करें। तृतीय आवरण में वासुदेव आदि का अर्चन करें। बारह पद्मों में बारह आदित्यों की पूजा करें। पूर्वद्वार में गरुड़, दक्षिण में सुदर्शन, पश्चिम में गदा और उत्तर में शंख की पूजा करें।

मण्डले भगवतः पुष्पार्चनविधिः

ततः 'पुरुषसूक्तेन' तथा 'नारायणेन' च।
'पञ्चोपनिषदै'र्मन्त्रैर्देवस्य चरणाम्बुजे।।४२।।
पुष्पार्चनं प्रकुर्वीत धूपदीपौ प्रदर्शयेत्।
वेदैश्चापि तथा साङ्गैः स्तोत्रयेज्जगदीश्वरम्।।४३।।
अन्नं निवेदयेत्तस्मै पायसादिचतुर्विधम्।

मण्डल में भगवत के पुष्पार्चन की विधि

तब 'पुरुषसूक्त' से 'नारायणसूक्त' से और 'पंचोपनिषद' मन्त्रों से देव के चरण कमलों में अर्चन करें। धूप, दीप दिखावें। वेदों से भी सांगस्तोत्रों से जगदीश्वर की स्तुति करें। पायस आदि चार प्रकार के अन्नों को निवेदित करें।

मण्डलार्चनक्रमे होमविधिः

आग्नेये हवनं कुण्डे स्थण्डिले वा महानसे।।४४।।
समिदाज्यचरुप्रायैः शतमष्टोत्तरं भवेत्।
'मूलेन' जुहुयादग्नौ पूर्णाहुत्यवसानकम्।।४५।।

मण्डलार्चन क्रम में हवन की विधि

आग्नेय कोण में कुण्ड में या स्थाण्डल में या महानस में समिधा, गोघृत और चरु से एक सौ आठ हवन करें। मूल मन्त्र से पूर्णाहुति करें।

मण्डलस्थदेवोद्वासनादिक्रमः

प्रदक्षिणं प्रणामं च कृत्वा स्तुत्वा श्रियः पतिम्।
मण्डलस्थान् समुद्वास्य प्रथमावरणं नयेत्।।४६।।
सेवार्थम् आगतान्देवान् स्थानं गन्तुं नियोजयेत्।
अन्यांश्च मानवान् सर्वान् परिक्रम्य प्रदक्षिणम्।।४७।।
नित्यैरभ्यन्तरैस्सार्धं सततं नित्यसेवकैः।
मन्दिराभ्यन्तरं देवं निनयेद्देशिकोत्तमः।।४८।।

मण्डलस्थ देवों के उद्वास आदि का क्रम

प्रदक्षिण प्रणाम करके लक्ष्मीपति की स्तुति करें। मण्डल स्थान से उद्वासित करके प्रथम आवरण में आयें। आगत देवों को सेवा के लिये गमन के हेतु नियोजित करें। अन्य सभी मानवों की परिक्रमा प्रदक्षिणा के बाद देव की सेवा के लिये मन्दिर में ले आयें। ये नित्य सेवक है।

महोत्सवान्ते गुरोः सम्माननम्

एवं महोत्सवं कृत्वा सम्पूज्य गुरुमृत्विजः।
अलङ्कृत्य विशेषेण मनः प्राह्लादनैर्धनैः।।४९।।
तं गुरुं यानमारोप्य सर्वमङ्गलसंयुतम्।
ग्रामं प्रदक्षिणीकृत्य तद्गृहं प्रापयेत्प्रभुः।।५०।।

महोत्सव के अन्त में गुरु का सम्मान

ऐसा महोत्सव करके गुरु और ऋत्विजों की पूजा यजमान करें। विशेष अलंकारों से अलंकृत करें। मन को प्रसन्न करने योग्य धन प्रदान करें। उस गुरु को सर्वमंगल युक्त यान में चढ़ाकर ग्राम की प्रदक्षिणा करा कर उसके घर पर पहुँचा दें।

महोत्सवफलश्रुतिः

एवं महोत्सवं कुर्वन् इह सर्वत्र मोदते।
परत्र च विशेषेण किं वा भूयादितः परम्।।५१।।
अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयायुतानि च।
अप्तोर्यामार्बुदं कृत्वा यत् फलं जायते नृणाम्।।५२।।
अनेन सर्वं देवस्य मखेन भवति ध्रुवम्।
केवलं देवदेवं तं सेवतां च महोत्सवे।।५३।।
फलमिष्टं करतले भवत्येव न संशयः।
किं पुनस्तत्र युक्तानां कैङ्कर्यनिरतात्मनाम्।।५४।।

।। इति भार्गवतन्त्रे त्रयोदशोऽध्यायः।।

महोत्सव फलश्रुति

ऐसा महोत्सव करने वाला इहलोक में सर्वत्र सानन्द रहता है। परलोक में विशेष रूप में श्रेष्ठ होता है। एक हजार अश्वमेध और दश हजार वाजपेय और एक अरब अप्तोय करने का जो फल है, वे सभी देव के इस यज्ञ से मिलते हैं। महोत्सव में केवल देवदेव की सेवा से इच्छित फल मिलता है, तब कैङ्कर्य में निरत आत्माओं के बारे में क्या कहा जा सकता है।

।। श्री भार्गवतन्त्र में तेरहवाँ अध्याय सम्पूर्ण ।।

चतुर्दशोऽध्यायः

विवाहोत्सवनिरूपणाध्यायः

पाणिग्रहणोत्सवप्रयोजनं विधिं च वर्णयितुं अगस्त्यस्य प्रार्थना

अगस्त्यः

कथं नु देवदेवीयं पाणिग्रहणमङ्गलम्।
तत्कारयित्वा किं भूयात् तन्मह्यं ब्रूहि भार्गव।।१।।

विवाहोत्सव का निरूपण

पाणिग्रहण उत्सव प्रयोजन विधि वर्णन हेतु अगस्त्य की प्रार्थना

अगस्त्य ने कहा कि देव देवी का पाणिग्रहण मंगल कैसे होता है? उसके करने से क्या फल मिलता है? हे भार्गव! आप मुझे इसे बतलाने की कृपा करें।

उद्वाहोत्सवस्य फलकीर्तनम्

श्रीरामः

देवेन सह देवीनां शयने परिकल्पिते।
नोद्वाहकर्म कुर्वीत तत्कुर्यादन्यथा यदि।।२।।
सर्वकल्याणसम्पत्तिरायुर्वृद्धिश्च जायते।
अभिप्रेतार्थसिद्धिः स्याद्देवीकल्याणकारिणाम्।।३।।
नश्यन्ति सर्वदुःखानि पापैश्चापि न लिप्यते।
धनं धान्यं च लभते पाणिग्रहणकर्मकृत्।।४।।

उद्वाहोत्सव के फल का वर्णन

श्री भार्गव राम ने कहा कि देवेश के साथ देवी के शयन की परिकल्पना में विवाह कर्म करना चाहिये। यदि नहीं करता है तब सभी कल्याण, सम्पत्ति, आयु, अभिप्रेत, धनवृद्धि, सिद्धि का नाश कल्याणकारिणी देवी कर देती हैं। पाणिग्रहण कर्म करने से सभी दुःखों का नाश होता है। पाप नहीं लगते। धन-धान्य की प्राप्ति होती है।

विवाहोत्सवक्रमे अङ्कुरार्पणदिनम्

उद्वाहदिवसात्पूर्वम् अङ्कुरार्पणमाचरेत्।

विवाह उत्सव क्रम में अंकुरार्पण का दिन

विवाह दिवस के पहले अंकुरार्पण करें।

देवस्य देव्याश्च कल्याणमण्डपे आनयनम्

कल्याणेऽहनि कर्तव्यं पृथक्कौतुकमङ्गलम्।।५।।
देवं देवीं च भूषाद्यैरम्बरैः कुसुमादिभिः।
प्रसाधयित्वा शिबिकामारोप्य गृहधाम च।।६।।
प्रदक्षिणीकृत्य देवौ नयेत्कल्याणमण्डपम्।

देव और देवी का कल्याण मण्डप में लाना

कल्याण दिवस में अलग कौतुक मंगल करें। देव देवी को आभूषण आदि वस्त्रों, फूलों से अलंकृत करके पालकी में चढ़ाकर गृहधाम की परिक्रमा कराकर कल्याण मण्डप में ले आयें।

अङ्कुरार्पणविधिनिरूपणम्

विष्वक्सेनं समाराध्य कर्मविघ्नोपशान्तये।।७।।
अङ्कुराण्यर्पयेत् सद्यो यद्वोद्वाहे प्रसन्नधीः।
ब्रह्मादिदेवानाराध्य पालिकास्वपि पञ्चसु।।८।।
बीजपात्रं समादाय नमस्यामि दिशां पतीन्।
इति प्रार्थ्य समासीनो 'या जाता' इति विद्यया।।९।।
इति बीजानि संजप्त्वा बीजावापं समाचरेत्।
मध्ये तु ब्रह्मजज्ञानं यत इन्द्रः पुरन्दरे।।१०।।
योऽस्य कोष्ठ्यं यमदिशि 'इमं मे वरुणे'भवेत्।
सोमो धेनुं तथा सोमे बीजावापस्सकृद्भवेत्।।११।।
तूष्णीं द्विरन्यै ऋत्विग्भिस्तूष्णीं न्यसनमुच्यते।
'मूर्धानमि'ति मन्त्रेण मृद्भिराच्छाद्य देशिकः।।१२।।
'इमं मे वरुणे'त्येव सेचयेच्छुद्धवारिभिः।

अंकुरार्पण विधि का निरूपण

कर्म में विघ्नों की शान्ति के लिये विष्वकसेन का समाराधन करें। प्रसन्नता से तुरन्त अंकुरार्पण करें। ब्रह्मादि देवों की पूजा करें। पाँचों पालिकाओं की पूजा करें। बीजपात्र लेकर बोले—'नमस्यामि दिशां पतीन्'। ऐसी प्रार्थना के बाद समासीनो 'या जाता' विद्या से बीजों पर जप करें। तब बीजों का वपन करें। मध्य में ब्रह्मजज्ञान, पूर्व में इन्द्र, योऽस्य कोष्ठं से यम दिशा में, यत इन्द्र से पूर्व में, 'इमं मे वरुणे' से पश्चिम में, 'सोमो धेनु' से उत्तर में बीज वपन करें।

तूष्णी द्विरन्यै ऋत्विक तूष्णी को न्यस्त करें। मूर्धानमिति मन्त्र से देशिक बीजों को मिट्टी से ढक दें। 'इमं मे वरुणे' से जल से सिञ्चित करें।

देवस्य देव्याश्च हस्ते कौतुकबन्धप्रकार:

पुण्याहपूर्वं कृत्वैवं कुर्यात्कौतुकबन्धनम्।।१३।।
सप्तवारं प्रतिसर'मस्त्रमन्त्रे'ण मन्त्रितम्।
'त्र्यम्बकेन' ऋचालिप्य चन्दनक्षोदवारिणा।।१४।।
'विश्वेत्ताते'ति मन्त्रेण हस्ते देवस्य दक्षिणे।
बन्धयेत् स्व-स्वमन्त्रेण देवीनामितरे करे।।१५।।

देव और देवी के हाथों में कौतुक बन्धन प्रकार

पुण्याहपूर्वक यह कृत्य करने के बाद कौतुक बन्धन करें। प्रतिसर का अभिमन्त्रण 'अस्त्र मन्त्र' को सात बार जप करें। त्र्यम्बक मन्त्र से चन्दन लेप मिश्रित जल से लेप लगावें। विश्वेत्ताते मन्त्र से देव के दाएँ हाथ में बाँधें। उनके मन्त्रों से देवियों के बाएँ हाथों में बाँधें।

रक्षाविधि:

स्पृष्ट्वा दक्षिणहस्तेन 'यो ब्रह्मे'त्यभिमन्त्रयेत्।
'बृहत्सामे'ति मन्त्रेण रक्षा स्याद्धूपभस्मना।।१६।।
त्रिकृत्वः प्रणमेद्देवं 'पुण्डरीकाक्ष'विद्यया।

रक्षा बिधि

दाएँ हाथ से स्पर्श करके 'यो ब्रह्मेति' मन्त्र से अभिमन्त्रित करें। 'बृहत्साम' मन्त्र से रक्षा में तीन बार धूप भस्म लगावें। 'पुण्डरीकाक्ष' विद्या से देव को प्रणाम करें।

शुभिकाबन्धनविधि: पुष्पमालिकाबन्धनविधिश्च:

उल्लिख्याग्निं प्रतिष्ठाप्य 'शुभिके शिर'इत्यृचा।।१७।।
शुभिकां बन्धयेन्मूर्ध्नि दम्पतीनां यथाक्रमम्।
'यामाहरदि'ति ऋचा बन्धयेत्पुष्पमालिकाम्।।१८।।
पादप्रक्षालनं विष्णोः तथा त्रीनि पेद्दति च।
'मयि मह' इति मन्त्रेण आत्मानमभिमर्शयेत्।।१९।।

शुभिका बन्धन विधि और पुष्पमाला बन्धन विधि

'शुभिके शिर' ऋचा बोलकर अग्नि स्थापित करें। दम्पत्तियों के मूर्धा में

देवस्य देव्याश्च कल्याणमण्डपे आनयनम्

कल्याणेऽहनि कर्तव्यं पृथक्कौतुकमङ्गलम्।।५।।
देवं देवीं च भूषाद्यैरम्बरैः कुसुमादिभिः।
प्रसाधयित्वा शिबिकामारोप्य गृहधाम च।।६।।
प्रदक्षिणीकृत्य देवौ नयेत्कल्याणमण्डपम्।

देव और देवी का कल्याण मण्डप में लाना

कल्याण दिवस में अलग कौतुक मंगल करें। देव देवी को आभूषण आदि वस्त्रों, फूलों से अलंकृत करके पालकी में चढ़ाकर गृहधाम की परिक्रमा कराकर कल्याण मण्डप में ले आयें।

अङ्कुरार्पणविधिनिरूपणम्

विष्वक्सेनं समाराध्य कर्मविघ्नोपशान्तये।।७।।
अङ्कुराण्यर्पयेत् सद्यो यद्वोद्वाहे प्रसन्नधीः।
ब्रह्मादिदेवानाराध्य पालिकास्वपि पञ्चसु।।८।।
बीजपात्रं समादाय नमस्यामि दिशां पतीन्।
इति प्रार्थ्य समासीनो 'या जाता' इति विद्यया।।९।।
इति बीजानि संजप्त्वा बीजावापं समाचरेत्।
मध्ये तु ब्रह्मजज्ञानं यत इन्द्रः पुरन्दरे।।१०।।
योऽस्य कोष्ठ्यं यमदिशि 'इमं मे वरुणे'भवेत्।
सोमो धेनुं तथा सोमे बीजावापस्सकृद्भवेत्।।११।।
तूष्णीं द्विरन्यै ऋत्विग्भिस्तूष्णीं न्यसनमुच्यते।
'मूर्धानमि'ति मन्त्रेण मृद्भिराच्छाद्य देशिकः।।१२।।
'इमं मे वरुणे'त्येव सेचयेच्छुद्धवारिभिः।

अंकुरार्पण विधि का निरूपण

कर्म में विघ्नों की शान्ति के लिये विष्वकसेन का समाराधन करें। प्रसन्नता से तुरन्त अंकुरार्पण करें। ब्रह्मादि देवों की पूजा करें। पाँचों पालिकाओं की पूजा करें। बीजपात्र लेकर बोले—'नमस्यामि दिशां पतीन्'। ऐसी प्रार्थना के बाद समासीनो 'या जाता' विद्या से बीजों पर जप करें। तब बीजों का वपन करें। मध्य में ब्रह्मजज्ञान, पूर्व में इन्द्र, योऽस्य कोष्ठं से यम दिशा में, यत इन्द्र से पूर्व में, 'इमं मे वरुणे' से पश्चिम में, 'सोमो धेनु' से उत्तर में बीज वपन करें।

तूष्णी द्विरन्यै ऋत्विक तूष्णी को न्यस्त करें। मूर्धानमिति मन्त्र से देशिक बीजों को मिट्टी से ढक दें। 'इमं मे वरुणे' से जल से सिञ्चित करें।

देवस्य देव्याश्च हस्ते कौतुकबन्धप्रकार:

पुण्याहपूर्वं कृत्वैवं कुर्यात्कौतुकबन्धनम्।।१३।।
सप्तवारं प्रतिसर'मस्त्रमन्त्रे'ण मन्त्रितम्।
'त्र्यम्बकेन' ऋचालिप्य चन्दनक्षोदवारिणा।।१४।।
'विश्वेत्ताते'ति मन्त्रेण हस्ते देवस्य दक्षिणे।
बन्धयेत् स्व-स्वमन्त्रेण देवीनामितरे करे।।१५।।

देव और देवी के हाथों में कौतुक बन्धन प्रकार

पुण्याहपूर्वक यह कृत्य करने के बाद कौतुक बन्धन करें। प्रतिसर का अभिमन्त्रण 'अस्त्र मन्त्र' को सात बार जप करें। त्र्यम्बक मन्त्र से चन्दन लेप मिश्रित जल से लेप लगावें। विश्वेत्ताते मन्त्र से देव के दाएँ हाथ में बाँधें। उनके मन्त्रों से देवियों के बाएँ हाथों में बाँधें।

रक्षाविधि:

स्पृष्ट्वा दक्षिणहस्तेन 'यो ब्रह्मे'त्यभिमन्त्रयेत्।
'बृहत्सामे'ति मन्त्रेण रक्षा स्याद्धूपभस्मना।।१६।।
त्रिकृत्व: प्रणमेद्देवं 'पुण्डरीकाक्ष'विद्यया।

रक्षा बिधि

दाएँ हाथ से स्पर्श करके 'यो ब्रह्मेति' मन्त्र से अभिमन्त्रित करें। 'बृहत्साम' मन्त्र से रक्षा में तीन बार धूप भस्म लगावें। 'पुण्डरीकाक्ष' विद्या से देव को प्रणाम करें।

शुभिकाबन्धनविधि: पुष्पमालिकाबन्धनविधिश्च:

उल्लिख्याग्निं प्रतिष्ठाप्य 'शुभिके शिर'इत्यृचा।।१७।।
शुभिकां बन्धयेन्मूर्ध्नि दम्पतीनां यथाक्रमम्।
'यामाहरदि'ति ऋचा बन्धयेत्पुष्पमालिकाम्।।१८।।
पादप्रक्षालनं विष्णो: तथा त्रीनि पेदति च।
'मयि मह' इति मन्त्रेण आत्मानमभिमर्शयेत्।।१९।।

शुभिका बन्धन विधि और पुष्पमाला बन्धन विधि

'शुभिके शिर' ऋचा बोलकर अग्नि स्थापित करें। दम्पत्तियों के मूर्धा में

यथाक्रम शुभिका बाँधें। 'यामाहरदि' ऋचा में पुष्प माला बाँधें। 'तथा त्रीनि पद' से विष्णु का पाद प्रक्षालन करें। 'मयिमह' मन्त्र से अपने को अभिमर्शित करें।

पाणिग्रहणविधिनिरूपणक्रमे प्रोक्षणप्रकार:

ततस्तु मृण्मये पात्रे साक्षते पुष्पसंयुते।
अर्हणायाम्बुनापूर्य गृह्णीयात्करयोर्द्वयोः।।२०।।
'अर्हणीया आप' इति प्रार्थ्य देवं ततः परम्।
'आमागन्नि'ति मन्त्रेण जपेत्पात्राम्बुदेशिकः।।२१।।
हस्ते तु देवदेवस्य 'विरोजो दोह' इत्यृचा।
निनीय नीतमुदकं 'समुद्रं' वेति चोच्चरन्।।२२।।
प्रोक्षयेत्कूर्चमादाय गां च दद्यात्तदा हरेः।
'युवं वस्त्रेति' मन्त्रेण वस्त्रेणाच्छादयेद्धरिम्।।२३।।

पाणिग्रहण विधि निरूपण क्रम में प्रोक्षण प्रकार

तब मिट्टी के पात्र में अक्षत, फूल रखकर अर्हणी से जल भरें। दोनों हाथों में लेकर 'अर्हणीया आप' मन्त्र से देव की प्रार्थना करें। इसके बाद 'आमागन्निति' मन्त्र से देशिक पात्र के जल को मन्त्रित करें। 'विरोजो दोह' ऋचा से देवेदव के हाथ में वह जल देकर 'समुद्रं' वेति का पाठ करें। कूर्च लेकर प्रोक्षण करें। विष्णु को गाय देवें। 'युवं वस्त्रेति' मन्त्र से हरि को आच्छादित करें।

यज्ञोपवीतकल्पनं पादयोः अक्षतार्पणञ्च

यज्ञोपवीतमन्त्रेण यज्ञसूत्रं प्रकल्पयेत्।
'इरावतीति'मन्त्रेण पादयोरक्षतार्पणम्।।२४।।

यज्ञोपवीत कल्पन पैरों में अक्षत अर्पण

यज्ञोपवीत मन्त्र से यज्ञसूत्र प्रकल्पित करें। 'इरावतीति' मन्त्र से पैरों में अक्षत अर्पित करें।

मधुपर्कनिवेदनापोशनक्रमः

मधुपर्कं स्वर्णपात्रे गृहीत्वा तं त्रिरुच्चरन्।
'त्रय्यै' 'आमागन्निति' च द्वाभ्यां तमभिमन्त्रयेत्।।२५।।
'अमृतोपस्तरणम'सीत्यापोशनमथ स्मृतम्।
'यन्मधुने'ति च जपन् मधुपर्कं निवेदयेत्।।२६।।
'अमृताधान'मन्त्रण पुनरापोशनं मतम्।

मधुपर्क निवेदन आपोशन क्रम

सोने के पात्र में मधुपर्क लेकर एक बार 'त्र्यै' का उच्चारण करें और दो बार 'आमागन्निति' बोलकर उसे अभिमन्त्रित करें। 'अमृतोपस्तरणमसी' से आपोशन करें। 'यन्मधुने' जप कर मधुपर्क निवेदित करें। 'अमृताधान' मन्त्र से पुनः आपोशन करें

गोविसर्जनप्रकारः

गां प्रदर्श्याथ हरेय 'गौर्गौर'सीति विद्यया।।२७।।
प्रणवो चं चिकितुषे इति गामभिमन्त्रयेत्।
'ओमुत्सृजत'इत्युक्त्वा गां विसृज्य ततो गुरुः।।२८।।

गोविसर्जन प्रकार

'गौर्गौरसि' विद्या से विष्णु को गाय दिखावें। 'प्रणवो चं चिकितुषे' से गाय को मन्त्रित करें। 'ओमुत्सृजत' बोलकर गुरु को गाय प्रदान कर दें।

अन्ननिवेदनक्रमः

'भूतं सेति' वदन् धीमान् अन्नं तस्मै निवेदयेत्।
'ओं कल्पयत' इत्युच्चः ब्रूयाद्देशिकसत्तमः।।२९।।

अन्न निवेदन क्रम

'भूतं सेति' मन्त्र बोलकर विद्वान अन्न का निवेदन करें। 'ओं कल्पयत' का उच्चारण देशिक उच्च स्वर से करें।

भगवते देव्याः दानप्रकारः

ततो नूतनवस्त्रेण परिधाय 'युवास्विति'।
दिव्यैराभरणैर्माल्यैरलङ्कृत्य श्रियं भुवम्।।३०।।
प्राणानायम्य संकल्प्य दाता भूषणभूषिताम्।
स्वगोत्रनामकथितां देवीमुदकपूर्वकम्।।३१।।
सुवर्णोर्वीयुतां दद्यात् विष्णवे च स्वयंभुवे।
कन्यां कनकसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम्।।३२।।
दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया।
इत्युक्त्वा दक्षिणं हस्तं गीतवादित्रनिस्वनैः।।३३।।
'देवस्य त्वेति' मन्त्रेण तां गुरुः परमात्मनः।
अर्पयेद्दक्षिणे हस्ते सहिरण्योदकं करम्।।३४।।
प्रणवेनाथ युञ्जीत देवेन कमलां भुवम्।
ततः पाणिगृहीतायाः देव्या देवस्य मूर्धनि।।३५।।

'ध्रुवं तेति' प्रकीर्यन्ते कुसुमान्यक्षतान्यपि।
'अभ्रातृध्नीमिति' ऋचं जप्त्वा पश्चात् स्वयंभुवे।।३६।।
'अघोरचक्षुषा' देवीं दर्शयेत्कलशोद्भव।
कर्तव्यान्यपि कर्माणि पालनीयास्तथा प्रजा:।।३७।।
आवाभ्यामिति संकल्पस्तयोस्तं च विचिन्तयेत्।
दर्भं संगृह्य तदनु जपन्निदमहं त्विति।।३८।।
भ्रुवोर्मध्येन संस्पृश्य प्राच्यां दिशि विसर्जयेत्।
ततो'जीवां रुदन्तीति' जप्त्वा वेदविदो द्विजान्।।३९।।
'व्युक्षक्रूरमि'ति श्रुत्या स्नानीयाय नियोजयेत्।
'अर्यम्न' इति मन्त्रेण दर्भेण वलयं श्रिय:।।४०।।
'निधाय खेन स' इति युगच्छिद्रं निवेशयेत्।
'शं ते हिरण्यम्' इत्युक्त्वा स्वर्णं छिद्रे पिधाय च।।४१।।
द्विजाहृतजलैर्देवीम् अब्लिङ्गाभिश्च पञ्चभि:।
स्नापयित्वा'ग्निमूर्धेति' प्लोतवस्त्रेण मार्जयेत्।।४२।।
'परित्वा' 'गीर्वणा' द्वाभ्यां वस्त्राभ्यां छादनं श्रिय:।
'द्वादशाक्षरमन्त्रेण' नम: प्रणवविद्यया।।४३।।
सुवर्णं बन्धयेत्कण्ठे सर्वमङ्गलसंयुतम्।
'आशासान सौमनसम्' इति योक्त्रेण बन्धयेत्।।४४।।

भगवत को देवी के दान का प्रकार

तब लक्ष्मी और वसुधा को नूतन वस्त्र पहना कर दिव्य आभरण मालाओं से अलंकृत करें। प्राणायाम करके भूषण भूषित दाता संकल्प करें। अपना गोत्र, नाम कह कर हाथों में जल लेकर सुवर्ण भूमि युक्त देवी को स्वयंभुव विष्णु को दान दें और कहें—

कन्यां कनकसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम्।
दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया।।

यह कह कर गायन, वादन घोष के साथ 'देवस्य त्वेति' मन्त्र से गुरु विष्णु के दाएँ हाथ में सोने के साथ जल देवें। तब ॐ का उच्चारण करते हुए कमला और वसुधा को देव के साथ योजित करें। तब पाणि गृहीता देवी देव के मूर्धा पर 'ध्रुवं तेति' कहते हुए पुष्पाक्षत छोड़ें। 'अभ्रातृध्नी' ऋचा जप के बाद 'अघोर चक्षुषा' बोलकर देव देव को देवियों को दिखावें। प्रजापालन के

कर्त्तव्य बतलावें। आवाभ्यामिति संकल्प से उनका चिन्तन करें। कुश लेकर 'जपन्निदमहं त्विति' कहकर भृकुटि मध्य से स्पर्श करा कर पूर्व दिशा में फेंक दें। तब वेदों के जानकार द्विज 'जीवां रुदन्तीति' का जप करें। 'व्यूक्षक्रूरम' श्रुति का जप करके स्नानीय नियोजित करें। अर्यम्न मन्त्र से लक्ष्मी को कुश का वलय प्रदान करें। 'निधाय खेन स' से युग छिद्र का निवेश करें। 'शं ते हिरण्यम्' कहकर स्वर्ण से छिद्र को ढक दें। द्विजों के लाये जल से देवी और पाँचों अब्लिङ्गों को नहलायें। अग्नि मूर्धा से प्लोत वस्त्र से मार्जन करें। 'परित्वा' गीर्वणा दो वस्त्रों को लक्ष्मी को ओढ़ा दें। द्वादशाक्षर मन्त्र से नमन करके प्रणव विद्या से सर्वमंगल संयुत सुवर्ण कण्ठ में बाँधें। आशासान सौमनसम् योक्त्र से बाँधें।

उद्वाहहोमप्रकारः

उद्वाहहोमं कुर्वीत उत्तराशामुखो गुरुः।
परिस्तीर्य यथान्यायं पुरस्तात् तन्त्रमाचरेत्।।४५।।
समिद्भिश्चरुणा चाज्यैर्होम उद्वाहकर्मणि।
समिद्भिराज्यैर्जुहुयात् 'देव्याः सूक्तेन' षोडश।।४६।।
चरुणा 'विष्णुगायत्र्या' चतुर्विंशाहुतिर्भवेत्।
'श्रीसूक्तस्तु' श्रियो देव्याः 'भूसूक्त'स्तु भुवो भवेत्।।४७।।
अन्यासां यदि देवीनां तासां मूलेन षोडश।

उद्वाह हवन प्रकार

उत्तर मुख बैठ कर गुरु उद्वाह होम करें। आगे यथान्याय परिस्तरण करके क्रिया करें। समिधा चरु और गोघृत के हवन से उद्वाह कर्म करें। 'देवी सूक्त' से समिधाओं और गोघृत से सोलह हवन करें। 'विष्णुगायत्री' से चरु की चौबीस आहुति डालें। लक्ष्मी देवी के लिये 'श्रीसूक्त' से और वसुधा देवी के लिये 'भूसूक्त' से हवन करें। अन्य देवियों के लिये मूल मन्त्र से सोलह हवन करें।

लाजाहोमप्रकारः प्रायश्चित्ताहुत्यादिप्रकारश्च

ततः 'पुरुषसूक्तेन' लाजहोमं समाचरेत्।।४८।।
अनलं त्रिःपरिक्रम्य लाजशेषं सकृद्गुरुः।
जुहुयात्प्रणवेणाग्नौ 'पञ्च वारुणिकैः' पुनः।।४९।।
प्रायश्चित्ताहुतिं हुत्वा द्वादशाक्षरविद्यया।
पूर्णाहुतिविधानं स्यात् ब्राह्मणानपि भोजयेत्।।५०।।

तोषयित्वाथदेवेशं देवीं चाभ्यर्च्य देशिकः।
पुण्याहं वाचयेत्पश्चात् मधुपर्कं निवेदयेत्।।५१।।
नीराजयेत्तदाशीश्च पिण्डिकाक्षेपणं तथा।

लाजा होम प्रकार, प्रायश्चित्त आहुति का प्रकार

इसके बाद 'पुरुषसूक्त' से धान के लावा से हवन करें। अग्नि की तीन परिक्रमा करके गुरु बचे हुए लावों से 'ॐकाराय स्वाहा' से हवन के बाद 'पंचवारुणी' से हवन करें। द्वादशाक्षर मन्त्र से प्रायश्चित्त आहुति डालें। इसके बाद पूर्णाहुति करके ब्राह्मणों को भोजन करावें। देवेश और देवी को तुष्ट करके देशिक अर्चन करें। पुण्याहवाचन करके मधुपर्क निवेदित करें। नीराजन करके आशीर्वाद देकर पिण्डिका का क्षेपण करें।

विवाहोत्सवक्रमे दैनन्दिनकृत्यम्

प्रत्यहं भोजयेद्विप्रान् स्नापयेच्च यथाविधि।।५२।।
उत्सवं चान्वहं कुर्यात् प्रातः सायं यथाविधि।
अग्नौ च जुहुयान्नित्यं सन्ध्ययोरुभयोरपि।।५३।।
पालिकादेवतास्सर्वाः पूजयेदन्वहं गुरुः।

विवाहोत्सव क्रम में दैनिक कृत्य

प्रतिदिन ब्राह्मणों को भोजन करावें। यथाविधि स्नान करावें। प्रतिदिन शाम-सबेरे यथाविधि उत्सव करें। दोनों सन्ध्याओं में नित्य अग्नि में हवन करें। पालिका के सभी देवताओं का पूजन प्रतिदिन गुरु करें।

विवाहोत्सवक्रमे चतुर्थदिनकृत्यम्

चतुर्थेऽहनि सम्प्राप्ते तुर्ययामे यथाविधि।।५४।।
उद्वाहशेषहोमं तत् कारयेत्कमलापतेः।
सर्पिषा 'दम्पतीमन्त्रैः' कुर्यादष्टोत्तरं शतम्।।५५।।
प्रायश्चित्ताहुतिं कुर्यात् 'पञ्चोपनिषदा' पुनः।
पूर्णाहुतिं ततः कुर्यात् 'मूलमन्त्रेण' देशिकः।।५६।।
सैलादिपूगं ताम्बूलं प्रणवेन निवेदयेत्।
ताम्बूलं दक्षिणां चापि ब्राह्मणेभ्यः प्रदापयेत्।।५७।।

विवाहोत्सव क्रम में चतुर्थ दिवस का कृत्य

चौथे दिन के चौथे प्रहर में उद्वाह शेष हवन कमलापति के लिये करें। 'दम्पतीमन्त्र' से गोघृत से एक सौ आठ आहुतियों से हवन करें। 'पंचोपनिषद'

से पुनः प्रायश्चित्त आहुति डालें। तब देशिक मूल मन्त्र से पूर्णाहुति करें। सैलादि, कसैली, पान प्रणव से निवेदित करें। ब्राह्मणों को भी पान दक्षिणा प्रदान करें।

विवाहोत्सवक्रमे पञ्चमदिनकृत्यम्

पञ्चमे दिवसे प्राप्ते तैलाभ्यंगं तयोर्भवेत्।
महाहविर्निवेद्याथ कारयेदुत्सवं महत्।।५८।।

विवाहोत्सव क्रम में पाँचवां दिन का कृत्य

पाँचवें दिन तैलाभ्यंग करें। महाहवि निवेदन करके महान उत्सव करें।

इतरासां देवीनां विवाहविधिः

उद्वाहानन्तरं देवं देवीसहितमर्चयेत्।
देवीनामितरासां च विवाहविधिरीदृशः।।५९।।

।। इति भार्गवतन्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः।।

अन्य देवीयों के विवाह की विधि

उद्वाहन के बाद देवी सहित देव का अर्चन करें। अन्य देवियों की विवाह विधि इसी प्रकार होती है।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय चौदह सम्पूर्ण ।।

पञ्चदशोऽध्यायः

विविधप्रतिष्ठाविधिनिरूपणाध्यायः

विध्यादिदेवानां विमानादीनां च प्रतिष्ठाक्रमविषयकः प्रश्नः

अगस्त्यः

विधिरुद्रार्कसुत्रामकुबेराद्यमृताशिनाम्।
तार्क्ष्यविघ्नेशसर्पेन्द्रचण्डाद्यमलसूरिणाम्।।१।।
विमानमण्डपादीनां बलिपीठादिकस्य च।
घण्टाक्षमालायानानां देवीनां च विशेषतः।।२।।
प्रभापद्मासनादीनां पादुकायाश्च भार्गव।
वापीकूपतटाकानां प्रतिष्ठा कीदृशी प्रभो।।३।।

विविध प्रतिष्ठा का निरूपण

विधि आदि देवों, विमानादि के प्रतिष्ठा क्रम विषयक प्रश्न

अगस्त्य ने कहा कि रुद्र, सूर्य, कुबेर आदि देवों, गरुड़, गणेश, नागेन्द्र, चण्ड आदि अमल सूरियों, विमान मण्डप, बलिपीठ आदि घण्टा, माला विशेषतः नाना देवियों, प्रभा, ब्रह्मादि, पादुका, वापी, कूप, तड़ाग की प्रतिष्ठा विधि क्या है? किस प्रकार प्रतिष्ठा होती है?

विविधप्रतिष्ठाक्रमे सामान्यविषयाः

श्रीरामः

शृणु वक्ष्ये मुनिश्रेष्ठ प्रतिष्ठा विविधा अपि।
अङ्कुरार्पणमारभ्य क्रियाः पूर्वं यथा तथा।।४।।

विविध प्रतिष्ठा क्रम में सामान्य विषय

भार्गव राम ने कहा कि मुनि श्रेष्ठ सुनिये मैं विविध प्रतिष्ठा अंकुरार्पण से लेकर अन्त तक के पहले की क्रिया जैसी होती है, उन्हें कहता हूँ।

स्वतन्त्रपरतन्त्रप्रतिष्ठयोः कुम्भसंख्यादिविचारः

स्वातन्त्र्ये नवकुंभाः स्युरेककुंभः परत्र चेत्।
वर्धन्यैव महाकुंभस्थापनं सर्वकर्मसु।।५।।
आवाहनं महाकुंभे प्रतिष्ठा यस्य कारयेत्।
उपकुंभाष्टके कुर्यादिन्द्रादीनां समर्चनम्।।६।।

एकस्मिन्नेव कुण्डे स्याद्धवनं नान्यथा भवेत्।
तत्तन्नाम चतुर्थ्यैव मन्त्रोद्धारं समाचरेत्।।७।।

स्वतन्त्र, परतन्त्र प्रतिष्ठा में कुंभ संख्या आदि का विचार

स्वतन्त्र प्रतिष्ठा में नव कुंभ और परतन्त्र प्रतिष्ठा में एक कुंभ की स्थापना होती है। सभी कर्मों में एक वर्धनी और एक महाकुंभ की स्थापना होती है। जिसकी प्रतिष्ठा होती है, उसका आवाहन महाकुंभ में करें। आठ उपकुंभों में इन्द्रादि लोकपालों का पूजन होता है।

वाहनादिप्रतिष्ठाक्रमे विशेष:

प्रणवादिनमोन्तं स्यादर्चनं वाहनादिषु।
स्वाहान्तं हवने मन्त्र: प्रतिष्ठोत्सवकर्मसु।।८।।
स्नपनं नवभि: कुंभैर्नान्यथा परिकल्पयेत्।
मृत्तिवस्तुकचित्राणां स्नपनं दर्पणे भवेत्।।९।।
देवीनां तु श्रियादीनां विशेष: किञ्चिदुच्यते।
प्राग्भागे कमले कुण्डे श्रियमावाह्य पूजयेत्।।१०।।
द्वारे चण्डीं प्रचण्डीञ्च विष्वक्सेनपदे पुन:।
सुमुखीं स्थापयेद्धीमान् कुंभेषु नवसु क्रमात्।।११।।
महाकुंभेऽर्चयेद्देवीं प्रतिष्ठाप्य स्वनामत:।
सुदर्शनं च करके प्रागाद्यष्टसु च क्रमात्।।१२।।
वागीश्वरी क्रिया कीर्तिर्लक्ष्मी: सृष्टिस्तथैव च।
प्रह्वी सत्या तथा ब्राह्मी यष्टव्या: कलशेष्विमा:।।१३।।
अन्यत्सर्वं यथापूर्वं विशेषो नास्ति कश्चन।
आयुधन्यासयजनं विष्णोरेकस्य कीर्तितम्।।१४।।

वाहन आदि प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

वाहनादि में प्रणव में नम: तक अर्चन होता है। प्रतिष्ठा उत्सव क्रम में मन्त्र के अन्त में स्वाहा योजित होता है। नवों कुंभों में स्नान होता है। अन्य जल से स्नान नहीं होता। मिट्टी की मूर्ति और चित्र का स्नान दर्पण में होता है। लक्ष्मी आदि देवियों में विशेष कथन है। पूर्व भाग के कमल कुण्ड में लक्ष्मी का आवाहन पूजन करें। द्वार में चण्ड, प्रचण्ड का और पद में विष्वकसेन का आवाहन पूजन होता है। नवों कुम्भों में क्रमश: सुमुखी का स्थापन होता है।

महाकुंभ में देवी का अर्चन करें। उनके नाम से प्रतिष्ठापन करें। पूर्वादि आठों दिशाओं में सुदर्शन का स्थापन करक में होता है। वागीश्वरी, क्रिया, कीर्ति, लक्ष्मी, सृष्टि, प्रह्वी, सत्या और ब्राह्मी का आवाहन अर्चन कलशों में होता है। अन्य सब कुछ पूर्ववत् होता है। विशेष कुछ नहीं होता। केवल विष्णु का आयुध न्यास और यजन होता है।

विमानमण्डपादीनां प्रतिष्ठाक्रमे विशेष:

विमानमण्डपादीनां विशेषमवधारय।
नृसूक्तरूपणिं देवं ध्यात्वा नारायणं हरिम्।।१५।।
छायास्नपनमादर्शे सकूर्चे परिकल्पयेत्।
शयनं च महावेद्यां कूर्चद्वारा समाचरेत्।।१६।।
'अग्निर्मे वाचि' मन्त्रेण कूर्चं स्पृष्ट्वाभिमन्त्रयेत्।
महाकुंभे च कुण्डे च विष्णुगायत्रिया गुरुः।।१७।।
आवाह्य पूजयेद्धोमं तथा कलशसंभव।
समिद्भिराज्यैश्चरुभिस्तिलैर्हुत्वा यथाक्रमम्।।१८।।
महाव्याहृतिभिर्हुत्वा संपाताज्येन सेचयेत्।
अन्यत्सर्वं यथापूर्वमेवं वै मण्डपस्य च।।१९।।

विमान मण्डप आदि के प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

विमान मण्डप आदि की प्रतिष्ठा में विशेष अवधारण होता है। नृसूक्त रूप में व्याप्त नारायण हरि का ध्यान करें। दर्पण के बिम्ब में कूर्च से स्नान करायें। महावेदी पर शयन कूर्च से करायें। कूर्च का स्पर्श करके 'अग्निर्मे वाचि' मन्त्र से मन्त्रित करें। महाकुंभ और कुण्डों में गुरु विष्णुगायत्री से आवाहन करके पूजन और हवन करें। समिधाओं, गोघृत, चरु और तिल से यथाक्रम हवन करें। महाव्याहृतियों से हवन करके सम्पात से सेचन करें। मण्डप का पूर्ववत् अन्य सब कुछ होते हैं।

बलिपीठप्रतिष्ठाक्रमे विशेष:

बलिपीठानि सर्वाणि साक्षात्तोयेऽधिवासयेत्।
स्नापयेच्च यथान्याय्यं स्थापयेद्धान्यराशिषु।।२०।।
ध्यानमावाहनं चापि होमश्चापि विमानवत्।
ओं भूतेभ्य नम इति महापीठमनुर्भवेत्।।२१।।
अन्येषामेवमेवोह्यं पीठानां परिकल्पने।

बलिपीठ प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

सभी बलिपीठों का अधिवासन अक्षत और जल से करें। यथान्याय स्नान करावें और धान्य राशि में स्थापित करें। ध्यान, आवाहन और हवन भी विमान के समान करें। महापीठ का मन्त्र 'ॐ भूतेभ्य नमः' है। अन्य पीठों में भी इसी प्रकार का परिकल्पन करें।

ध्वजप्रतिष्ठायां विशेषः

ध्वजस्तंभप्रतिष्ठायां देवता तु खगेश्वरः।।२२।।
न दृष्टिमोक्षणं तत्र तथा प्रासादपीठयोः।
न्यासहोमे तु सम्प्राप्ते विमानवदिहाचरेत्।।२३।।

ध्वज प्रतिष्ठा में विशेष

ध्वज स्तम्भ प्रतिष्ठा के देवता गरुड़ हैं। इनमें और प्रासादपीठ में दृष्टिमोक्षण नहीं होते। न्यास हवन में विमान के समान कर्म करें।

वेद्याः प्रतिष्ठाक्रमे विशेषः

वेद्यां शयनमप्येवं स्नानं चाम्ब्वधिवासनम्।
बलिपीठविधानोक्तमन्यत् सर्वं यथापुरम्।।२४।।

वेदियों के प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

वेदी और शयन में अधिवासन स्नान जल से होता है। अन्य सभी कुछ बलिपीठ विधानोक्त होता है और सब कुछ पूर्ववत् होते हैं।

पादुकायाः घण्टायाश्च प्रतिष्ठाक्रमे विशेषः

पादुकायाश्च घण्टायाः बलिपीठक्रिया भवेत्।
पादुकादेवता शेषः घण्टायाः कमलालया।।२५।।

पादुका और घंटो के प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

पादुका और घण्टा में बलिपीठ के समान क्रिया होती है। पादुका के देवता शेषनाग और घण्टा की कमलालया लक्ष्मी देवी होती हैं।

महानसप्रतिष्ठायां विशेषः

महानसप्रतिष्ठायां लक्ष्मीं तत्र निवेशयेत्।
चुल्या मध्ये तु धातारं विधातारं तु पृष्ठतः।।२६।।

महानस प्रतिष्ठा में विशेष

महानस प्रतिष्ठा में वहाँ लक्ष्मी का विनिवेशन होता है। चूल्ही में धातार और पीछे पीठ में विधातार देवता होते हैं।

द्वारदेवताप्रतिष्ठायां विशेषः

धर्माधर्मद्वयं स्थाप्यं सव्ये सव्येतरे तथा।
चण्डप्रचण्डौ तद्द्वारे शिष्टं कर्म विमानवत्।।२७।।

द्वार देवता प्रतिष्ठा में विशेष

द्वार के बाएँ धर्म और दाहिने अधर्म की स्थापना होती है। द्वार में चण्ड, प्रचण्ड का और शेष कर्म विमान के समान होता है।

वापीकूपादीनां प्रतिष्ठायां विशेषः

वापीकूपतटाकानां वरुणो देवता भवेत्।
अङ्कुराण्यर्पयित्वादौ कुम्भस्थापनमाचरेत्।।२८।।
कौतुकं बन्धयेत्कुम्भे कूर्चेन शयनं भवेत्।
तत्त्वाभिमन्त्रणं होमो विमानविधिना भवेत्।।२९।।
जलाधिवासनं नैव तथा नयनमोक्षणम्।
सर्वमन्यद्विधातव्यं प्रतिष्ठासमये गुरुः।।३०।।
गङ्गाद्याः सरितस्तत्र मन्त्रैरावाहयेज्जले।
महाकुंभजलं तत्र वरुणर्चानियोजयेत्।।३१।।

वापी, कूपादि की प्रतिष्ठा में विशेष

वापी, कूपों, तालाबों के देवता वरुण हैं। अंकुरार्पण इत्यादि के प्रारम्भ में कुम्भ स्थापन करें। कुम्भ में कौतुक बाँधें और कूर्च से शयन करावें। विमान विधि से तत्वाभिमन्त्रण और हवन होते हैं। इनके जलाधिवास और नयनोन्मीलन नहीं होते। प्रतिष्ठा के समय गुरु अन्य सभी विधानों को करें। वहाँ जल में गंगा आदि नदियों का आवाहन करें। महाकुंभ जल से वरुण का अर्चन करें।

अक्षमालाप्रतिष्ठाक्रमे विशेषः

अक्षमालाप्रतिष्ठायां गोमूत्रे त्वधिवासयेत्।
पञ्चगव्येन संक्षाल्य पद्मपत्रे निवेशयेत्।।३२।।
पुण्याहवारिभिः प्रोक्ष्य कुङ्कुमेनानुलेपयेत्।
शालिपीठे विनिक्षिप्य 'अग्निर्मे'त्यभिमन्त्र्य च।।३३।।
विष्णुशक्तिर्भवेद्देवी मनुरष्टाक्षरो भवेत्।
प्रोक्षणादिक्रियां सर्वां यथाविधि समाचरेत्।।३४।।

अक्षमाला प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

अक्षमाला की प्रतिष्ठा में माला को गोमूत्र में अधिवासित करे। पंचगव्य

से धोकर कमल के पत्ते पर स्थापित करें। पुण्याह जल से प्रोक्षण करें। कुंकुम का अनुलेपन करें। शालिपीठ पर रखकर 'अग्निर्मे' मन्त्र से मन्त्रित करें। इसकी देवी विष्णु शक्ति होती है और मन्त्र अष्टाक्षर होता है। प्रोक्षण आदि सभी क्रियाओं को यथाविधि करें।

धूपादीनां प्रतिष्ठाक्रमे विशेषः

धूपस्य देवता वह्निर्दीपस्य च दिवाकरः।
छत्रचामरवाद्यानां पुण्याहप्रोक्षणं भवेत्।।३५।।

धूप आदि प्रतिष्ठा क्रम में विशेष

धूप के देवता अग्नि और दीप के देवता दिवाकर हैं। छत्र, चामर और वाद्यों का पुण्याह प्रोक्षण होता है।

चण्डादिदेवानां हेतीनां च प्रतिष्ठाक्रमे विशेषः

चण्डादिदेवतानां च हेतीनां च जगद्गुरोः।
इन्द्रादीनामिव भवेत् विशेषो नास्ति कश्चन।।३६।।

चण्डादि देवों और आयुधों की प्रतिष्ठा में विशेष

चण्डादि देवों और आयुधों के देवता जगद्गुरु विष्णु हैं, इन्द्रादि भी होते हैं। विशेष कुछ नहीं है।

भक्तबिम्बप्रतिष्ठाविधिः

भक्तबिम्बप्रतिष्ठायां कुर्यात्प्रतिसराङ्कुरे।
विवाहोक्तेन विधिना कुम्भमेकं समर्चयेत्।।३७।।
एकस्मिन्नेव कुर्वीत कुण्डे होमादि पूर्ववत्।
न होमो न बलिस्तीर्थं न ध्वजारोहणक्रिया।।३८।।
मृगया च जलद्रोणी न भक्तोत्सवकर्मणि।

भक्त बिम्ब प्रतिष्ठा विधि

भक्तमूर्ति प्रतिष्ठा में प्रतिसर और अंकुर की क्रिया करें। विवाहोक्त विधि से एक कुंभ को स्थापित करें और अर्चन करें। एक ही कुण्ड में पूर्ववत् हवनादि करें। इसमें न हवन न बलि तीर्थ और न ध्वजारोहण की क्रिया होती है। न मृगया, न जलद्रोणी और न भक्तोत्सव कर्म होते हैं।

रथादियानप्रतिष्ठायां विशेषः

रथादियानजातस्य देवता विहगाधिपः।।३९।।

कुम्भमेकं समभ्यर्च्य कुण्डे वा स्थण्डिलेऽपि वा।
मूर्तिहोममनुष्ठाय प्रोक्षयेत्कुंभवारिणा।।४०।।

रथादि यान प्रतिष्ठा में विशेष

रथा आदि यान जाति के देवता वरुण हैं। एक कुंभ स्थापित करके पूजन करें। कुण्ड या स्थण्डिल में मूर्ति होम अनुष्ठान के लिये कुंभ जल से प्रोक्षण करें।

गृहार्चाप्रतिष्ठाक्रमः तत्फलञ्च

गृहार्चास्थापने सर्वं प्रतिष्ठाकर्म पूर्ववत्।
गृहवंशर्द्धिकृद्देवः सदनस्थापितो हरिः।।४१।।

गृहार्चा प्रतिष्ठा क्रम और उसका फल

गृहार्चा स्थापन में पूर्ववत् सभी प्रतिष्ठा कर्म करें। गृहवंश वृद्धि करने वाले हरि का स्थापन करें।

मन्दिरे देवस्थापनफलम्

मन्दिरे स्थापितो देवः पालयेद्भुवनत्रयम्।

।। इति भार्गवतन्त्रे पञ्चदशोऽध्यायः।।

मन्दिर में देव स्थापन क्रम

मन्दिर में स्थापित देव तीनों लोकों का पालन करते हैं।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय पन्द्रह सम्पूर्ण।।

षोडशोऽध्यायः

समाराधनविधिनिरूपणाध्यायः

आराधकस्यालयप्रवेशक्रमः

श्रीरामः

स्नात्वा पूर्वाह्निकं कृत्वा गुरुर्देवालयाद्बहिः।
प्रक्षाल्य पादौ पाणी च त्रिराचम्यालयं विशेत्।।१।।

समाराधन विधि का निरूपण

आराधक का मन्दिर में प्रवेश का क्रम

श्री परशुराम ने कहा कि देवालाय के बाहर गुरु स्नानादि करके पूर्व आह्निक क्रिया के बाद हाथों, पैरों को धोकर तीन आचमन करके मन्दिर में प्रवेश करें।

कवाटोद्घाटनं भगवत्प्रबोधनञ्च

प्रथमावरणं गत्वा नत्वोद्दिश्य श्रियः पतिम्।
कृते तालत्रये पश्चात् कवाटोद्घाटनं चरेत्।।२।।
तदा प्रबोधयेद्देवं वासुदेवं सनातनम्।
प्रबुद्ध जगदीशान प्रबुद्ध कमलापते।।३।।
प्रबुद्ध पुण्डरीकाक्ष प्रबुद्ध रमया सह।
प्रबुद्धानन्तकल्याणवारिधे करुणाम्बुधे।।४।।
प्रबुद्ध चन्द्रवदन कमलाङ्घ्रिसरोरुह।
स्तुवन्ति वेदाश्चत्वारः नमन्ति द्रुहिणादयः।।५।।
अस्ताचलं गतश्चन्द्रः उदयं याति भास्करः।
उन्मीलयाक्षियुगलं नृत्यत्यप्सरसां गणः।।६।।
तुम्बुरुर्नारदश्चोभौ वीणया मञ्जु गायतः।
तिष्ठन्ति ऋषयः सर्वे सेवार्थं गोपुराद्बहिः।।७।।
बालातपा विसर्पन्ति प्रबुद्धान्यम्बुजान्यपि।
षट्पदा मकरन्दाय भ्रमन्ति कमलोदरे।।८।।
चक्रवाकद्विजगणैर्गार्हस्थ्यमनुभूयते ।
उत्तिष्ठ इति मन्त्रैस्त्वामुपासन्ते द्विजोत्तमाः।।९।।

उत्तिष्ठोतिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ पुरुषोत्तम।

कपाटोद्‌घाटन और भगवत प्रबोधन

प्रथम आवरण में जाकर लक्ष्मीपति को प्रणाम करें। तीन ताली बजाकर किवाड़ खोले। सनातन देव वासुदेव को प्रबोधित करें। प्रबोधन स्तोत्र—

प्रबुद्ध जगदीशान प्रबुद्ध कमलापते।।
प्रबुद्ध पुण्डरीकाक्ष प्रबुद्ध रमया सह।
प्रबुद्धानन्तकल्याणवारिधे करुणाम्बुधे।।
प्रबुद्ध चन्द्रवदन कमलाङ्घ्रिसरोरुह।
स्तुवन्ति वेदाश्चत्वारः नमन्ति द्रुहिणादयः।।
अस्ताचलं गतश्चन्द्रः उदयं याति भास्करः।
उन्मीलयाक्षियुगलं नृत्यत्यप्सरसां गणः।।
तुम्बुरुर्नारदश्चोभौ वीणया मञ्जु गायतः।
तिष्ठन्ति ऋषयः सर्वे सेवार्थं गोपुराद्बहिः।।
बालातपा विसर्पन्ति प्रबुद्धान्यम्बुजान्यपि।
षट्पदा मकरन्दाय भ्रमन्ति कमलोदरे।।
चक्रवाकद्विजगणैर्गार्हस्थ्यमनुभूयते ।
उत्तिष्ठ इति मन्त्रस्त्वामुपासन्ते द्विजोत्तमाः।।
उत्तिष्ठोतिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ पुरुषोत्तम।

निर्माल्यविनियोगः पात्रप्रक्षालनं च

एवं प्रबोध्य देवेशं दीपेषु ज्वलितेष्वपि।।१०।।
माल्यगन्धादिदेवस्य विष्वक्सेनाय दापयेत्।
पूजायोग्यानि पात्राणि क्षालयेच्च यथातथम्।।११।।

निर्माल्य हटाना और पात्रों की सफाई

इस प्रकार देव को प्रबोधित करने के बाद दीपक को जलते हुए रहने पर भी देव की माला, गन्ध आदि विष्वक्सेन के लिये रखें। पूजा योग्य पात्रों को पूरी तरह से साफ करें।

भूतशुद्धिप्रकारः

सपवित्रकरो भूत्वा सोर्ध्वपुण्ड्रः स्वलङ्कृतः।
नादिते सकले वाद्ये ब्रह्मघोषे च घोषिते।।१२।।
शब्दब्रह्ममयीं ध्यात्वा घण्टां हस्तेन चालयेत्।
'अस्त्रमन्त्रेण' बध्नियाद्देशिकः ककुभो दश।।१३।।

'मूलमन्त्रेण' कुर्वीत प्राणायामत्रयं ततः।
रेचकं पुरकं चैव कुभकं रेचकं तथा।।१४।।
एवं चतुर्विधैर्युक्तः प्राणायाम उदाहृतः।
सप्तभिर्द्विगुणैर्वापि पुनस्तद्वच्चतुर्गुणैः।।१५।।
आद्यैश्च 'मूलमन्त्र'स्य संख्योक्ता शास्त्रवित्तमैः।
गन्धेन सहितां पृथ्वीं संहरेदप्सु योगवित्।।१६।।
ता रसेन समं वह्नौ तं वायौ रूपमात्रया।
तमाकाशे स्पर्शयुतं तच्च शब्देन मानसे।।१७।।
संहरेत्तदहंकारे तं बुद्धौ तां महत्यपि।
महान्तं संहरेज्जीवे जीवं तं ब्रह्मणि ध्रुवे।।१८।।
निवेश्य वह्निबीजेन दग्धं ध्यायेद्वपुर्गुरुः।
वारुणेनैव बीजेन सिक्तं जातं पुनः स्मरेत्।।१९।।
ब्रह्मणो निर्गतं जीवं स्मृत्वा तस्माद्गुरूत्तमः।
महान्तं च ततो बुद्धिं बुद्धेर्जातामहंकृतिम्।।२०।।
अहंकृतेर्मनो ध्यायेत् तस्माच्छब्देन चाम्बरम्।
स्पर्शन चाम्बराद्वायुं वायो रूपेण चानलम्।।२१।।
अनलाद्रससंयुक्ता आपश्ताभ्यो महीं स्मरेत्।
गन्धेन सहितामेवं विशोध्य वपुरात्मवान्।।२२।।

भूत शुद्धि प्रकार

हाथों को धोकर अपने ललाट में ऊर्ध्व पुण्ड्र लगावें। सभी वाद्यों के वादन को ब्रह्मघोष घोषित का शब्द ब्रह्ममयी मानकर घण्टा बजावें। देशिक अस्त्र मन्त्र से दशों दिशाओं में चरुकी बजाकर मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करें। रेचक कुंभक और कुंभक रेचक ऐसी चार विधि से युक्त श्वास-प्रश्वास की क्रिया को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम में मूल मन्त्र की संख्या सात या चौदह या आद्य की चौगुनी होती है। ऐसा मत शास्त्रज्ञों का है। तब भूतशुद्धि करें। मूल मन्त्र के साथ पृथ्वी को गन्ध सहित जल में विलीन करें। जल को रस सहित अग्नि में विलीन करें। रूप तन्मात्रा सहित अग्नि को वायु में विलीन करें। स्पर्श तन्मात्रा के साथ वायु को आकाश में विलीन करें। आकाश को शब्द तन्मात्रा के साथ मानस में विलीन करें। मन को बुद्धि में, बुद्धि को अहंकार में, अहंकार को महत में, महत को जीव में और जीव को ब्रह्म में विलीन करें। अग्नि का निवेश करके

गुरु अपने शरीर को दग्ध मानें। स्मरण करें कि जल बीज से भस्म सिक्त हो गया। स्मरण करें कि जीव ब्रह्म से निकल गया। महत में चला गया। महत बुद्धि में और बुद्धि अहंकार में, अहंकार मन में चला गया ऐसा ध्यान करें। ध्यान करें कि अहंकार आकाश शब्द में, आकाश वायु में, वायु अग्नि में, अग्नि जल में और जल भूमि में परिवर्तित हो गया। इसे गन्ध सहित वपुरात्मा में भूतशुद्धि करें।

भूतशुद्धिक्रमे अङ्गेषु वर्णन्यासक्रम:

न्यसेदङ्गेषु 'मूल'स्य वर्णानष्टौ यथाक्रमम्।
विन्यसेत्प्रणवं नाभौ नकारं मेहने न्यसेत्।।२३।।
मोकारं जानुयुगले नाकारं पादयोर्द्वयोः।
राकारं विन्यसेन्मूर्ध्नि यकारं नयनद्वये।।२४।।
णाकारं वदनाम्भोजे यकारं हृदयाम्बुजे।
एवं विन्यस्य वर्णांस्तान् ध्यात्वा तं पुरुषोत्तमम्।।२५।।

भूतशुद्धि क्रम में अंगों में वर्णन्यास क्रम

मूल मन्त्र अष्टाक्षर के आठों वर्णों का न्यास अंगों में यथाक्रम करें। ॐकार का न्यास नाभि में, 'न'कार का न्यास मेहन मे, मोकार का न्यास दोनों घुटनों में, नाकार का न्यास दोनों पैरों में, राकार का न्यास मूर्धा में, यकार का न्यास दोनों आँखों में, णाकार का न्यास मुख कमल में, यकार का न्यास हृदय कमल में करें। इस प्रकार के न्यास के बाद उस पुरुषोत्तम का ध्यान करें।

मानसयागविधि:

मनसाराधयेद्देवमर्घ्याद्यैर्विविधैः क्रमैः।
अर्घ्यं पाद्यं तथाचामं स्नानं वस्त्रोपवीतके।।२६।।
गन्धं पुष्पं तथा धूपं दीपं पुष्पाञ्जलिं तथा।
नैवेद्यं विविधं चापि ताम्बूलं मुखवासनाम्।।२७।।
इत्यादि मानसेनैव 'मूलमन्त्रे'ण कारयेत्।
मूलमन्त्रं जपेत्पश्चादष्टोत्तरशतावरम्।।२८।।

मानसयाग विधि

देव का पूजन विविध मानसिक उपचारों पाद्य, अर्घ्यादि से करें। अर्घ्य, पाद्य, आचमनीय, स्नान, वस्त्र, उपवीत, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, पुष्पांजलि और विविध नैवेद्य मुख वासन ताम्बूल इत्यादि से मानसिक पूजन मूल मन्त्र से करें। एक सौ आठ बार मूल मन्त्र का जप करें।

पूजापात्रादिसन्नाहः

देवस्य पुरतः पात्रे आधारे पञ्च विन्यसेत्।
पात्राणि परिशुद्धानि शुद्धलोहमयानि च।।२९।।
आवाहनाह्वयं पात्रमन्यदेकं निवेशयेत्।
पूरयेद्गलिताम्भोभिः 'प्रणवे'नाभिमन्त्रयेत्।।३०।।
शोषणं प्लावनं चापि कुर्या'दग्न्यमृताक्षरैः'।
दर्शयेत्सुरभीमुद्रां तच्चतुर्थ्या नमोऽन्तया।।३१।।
पाद्यं मध्ये दक्षिणेऽर्घ्यं वामे चाचामवारि च।
स्नानीयं शाङ्करे कोणे शुद्धोदमितरत्र च।।३२।।
स्पृशन् दक्षिणहस्तेन तत्तन्नाम स्मरन् द्विजः।
उच्चार्य कल्पयामीति पात्रादर्घ्याज्जलं हरेत्।।३३।।
किञ्चिदन्येन पात्रेण निनयेन्नासिकासमम्।
संमन्त्र्य 'मूलमन्त्रेण'ण सप्तवारं द्विजोत्तमः।।३४।।
प्रोक्षयेत्पञ्चपात्राणि पूजाद्रव्याण्यशेषतः।

पूजा पात्रादि सन्नाह

देव के आगे आधार पर पाँच पात्र रखें। पात्र परिशुद्ध शुद्ध लौह का होना चाहिये। आवाहन के लिये एक पात्र अन्यत्र रखें। उसे जलधार से पूर्ण करके प्रणव से अभिमन्त्रित करें। उसका शोषण और प्लावन अग्नि और अमृताक्षर से करें। चतुर्थ्यन्त और नमोअन्त से धेनु मुद्रा दिखावें। मध्य में पाद्य दक्षिण में अर्घ्य और बाएँ आचमनीय जल रखें। स्नानीय ईशान कोण में और यहीं पर शुद्धोदक रखें। दाएँ हाथ से प्रत्येक का स्पर्श करके द्विज उनके नामों का स्मरण करें। कल्पयामि कह कर अर्घ्य पात्र से जल निकालें। थोड़े-थोड़े जल अन्य पात्रों से भी लेकर नासिकाग्र के पास ले आयें। मूल मन्त्र के सात जप से द्विजोत्तम उसे मन्त्रित करें। उस जल से पाँचों पात्रों और सभी पूजन सामग्रियों का प्रोक्षण करें।

नित्यार्चनात्पूर्वं योगपीठकल्पनप्रकारः

पादपीठे तु देवस्य मूलबेरे गुरूत्तमः।।३५।।
'आयान्त्वाद्येन' मन्त्रेण योगपीठं प्रकल्पयेत्।
आधारशक्तिः प्रथमा कूर्मकालानलस्ततः।।३६।।
अनन्तोऽथ महीपश्चादूर्ध्वमूर्ध्वं यथाक्रमम्।
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च यथाक्रमम्।।३७।।

प्रागादिदिक्षु क्रमशः अधर्मादिचतुष्टयम्।
आग्नेय्यादिषु कोणेषु तेषां मध्ये सदाशिवः।।३८।।
एते पादमयाः प्रोक्ताः खट्वायाः कमलापतेः।
ऋगादिवेदाश्चत्वारः खट्वाकाष्ठचतुष्टयम्।।३९।।
वैकारिकस्तैजसश्च भौतिकश्चेति ते त्रिधा।
पूर्वापरगुणाः प्रोक्तास्तथा सत्वादयो गुणाः।।४०।।
दक्षिणोत्तरसूत्राणि तूलिका पञ्चभूमिका।
जीवात्मास्तरणं तस्मादूर्ध्वं पद्मासनं स्मृतम्।।४१।।
पार्श्वयोरुभयोः कल्प्यौ परमेष्ठित्रिलोचनौ।
सनत्कुमारः सनकः सनन्दः पृष्ठतस्त्रयः।।४२।।
एतेषान्तु नमोऽन्तेन चतुर्थ्या प्रणवादिना।
अर्चयेन्मन्त्रमुद्धृत्य तन्त्रशास्त्रार्थतत्त्ववित्।।४३।।
ततो देवं समालोक्य साम्मुख्यं शाश्वतीं स्थितिम्।
प्रार्थ्य मन्त्राक्षरन्यासः कर्तव्यः पूर्ववर्त्मना।।४४।।

नित्यार्चन के पहले योगपीठ कल्पन प्रकार

देव के मूल मूर्ति के पादपीठ में उत्तम गुरु योगपीठ की कल्पना 'आयान्त्वाद्येन' मन्त्र से करें। पहले आधार शक्ति तब कूर्म कालानल, तब अनन्त तब भूमि एक-दूसरे के ऊपर योगपीठ कल्पित करें। पीठ पर पूर्व में धर्म, दक्षिण में ज्ञान, पश्चिम में वैराग्य, उत्तर में ऐश्वर्य का प्रकल्पन करें। आग्नेयादि कोनों में अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्य को प्रकल्पित करें। मध्य में सदाशिव को रखें। इतने पैरों (पावा) से युक्त कमलापति का खाट होता है। ऋगादि चारों वेद, चारों पावा के पाटी होते हैं। सत्वादि गुण पूर्वापर होते हैं। दक्षिण उत्तर सूत्र पंचभूमिका तूलिका होते हैं। जीवात्मा तरण होता है। उसके ऊपर पद्मासन होता है। दोनों पार्श्वों में ब्रह्मा और शंकर होते हैं। सनत्कुमार, सनक, सनन्दन तीनों पीठ के तरफ रहते हैं। इनके नामों के पहले ॐ चतुर्थ्यन्त नाम तब नमः लगाकर तन्त्र शास्त्रज्ञ पूजन करें। जैसे धर्म के पूजन के लिये मन्त्र होगा—'ॐ धर्माय नमः' इसी प्रकार का सबका होगा। तब देव का शाश्वत सामुख्य देखकर प्रार्थना करके मन्त्राक्षर न्यास पूर्ववत् करें।

कर्मार्चायाः योगपीठकल्पनक्रमः

कर्मार्चासहजे पीठे योगपीठं यथापुरम्।

कर्मार्चा में योगपीठ कल्पन प्रकार

सहजपीठ में कर्मार्चा करें। योगपीठ पूर्ववत् होता है।

भगवत: नित्यार्चनविधि:

प्रकल्प्यावाहने पात्रे जलमर्घ्यार्थमाहरेत्।।४५।।
ललाटान्तं समुद्धृत्य मूलेनागच्छ चञ्चुना।
आवाहयेन्मूलबेरात् सिञ्चेन्मूर्धनि कर्मण:।।४६।।
प्रणवेन ब्रह्मरन्ध्रं पिधाय कमलापते:।
साम्मुख्यं स्वागतं चोक्त्वा स्थितिं यागावसानिकीम्।।४७।।
प्रार्थ्य मन्त्राक्षरान्न्यस्य यजेदर्घ्यादिभि: क्रमात्।
'सावित्र्या' वितरेदर्घ्यं पाद्यं 'त्रिणी पदेति' च।।४८।।
आचामो 'विष्णुगायत्र्या' 'तद्विष्णो' दन्तधावनम्।
जिह्वानिर्लेहनं कुर्यात् 'तद्विप्रासो' विपर्ययात्।।४९।।
'ऋतं सत्यमि'ति श्रुत्या गण्डूषपरिकल्पनम्।
'पौरुषेणैव सूक्तेन' स्नापयेत्पुरुषोत्तमम्।।५०।।
'युवा सुवासे'ति ऋचा वस्त्रे द्वे धौतनिर्मले।
'यज्ञोपवीतमन्त्रेण ब्रह्मसूत्रं प्रकल्पयेत्।।५१।।
'गन्धद्वारेति'मन्त्रेण गन्धेनालेपनं हरे:।
'विष्णोर्नुकमि'ति श्रुत्या पुष्पैश्च परिमण्डयेत्।।५२।।
'जितन्त' इति मन्त्रेण भूषयेत्सर्वभूषणै:।
'इरावतीति' मन्त्रेण पादयोरक्षतार्पणम्।।५३।।
धूप: कालागरुमुखै: 'धूरसी'ति मनुं जपेत्।
'उद्दीप्यस्वे'ति मन्त्रेण दीपानुज्वाल्य दर्शयेत्।।५४।।
आधोष्य चतुरो वेदान् नृत्तं गीतं च दर्शयन्।

भगवत की नित्यार्चन विधि

आवाहन के लिये प्रकल्पित पात्र में अर्घ्य के लिये जल डालें। पात्र को ललाट के पास ले जाकर मूलबेर से गरुड़ का आवाहन 'आगच्छ चंचुना' मन्त्र से करें। उसको मूर्धा जल से सिञ्चित करें। प्रणव से ब्रह्मरन्ध्र में कमलापति को बुला लायें। सामुख्य और स्वागत स्थिति यथावसान तक करें। प्रार्थना करके मन्त्राक्षरों का न्यास करें। अर्घ्यादि से पूजन करें। सावित्री मन्त्र से अर्घ्य दें। 'त्रीणि पदेति' से पाद्य देवें। विष्णुगायत्री से आचमन करावें। तद्विष्णु से दतुवन करायें। 'तद्विप्रासो' से जिभ्भी करावें। 'ऋतं सत्यम' ऋचा से कुल्ला करावें। 'पौरुषसूक्त'

से पुरुषोत्तम को स्थान में बिठावें। 'युवा सुवासे' ऋचा से दो द्यौत वस्त्र दें। 'यज्ञोपवीत' मन्त्र से ब्रह्मसूत्र प्रकल्पित करें। 'गन्धद्वारा' मन्त्र से हरि को गन्ध लेपन करें। 'विष्णोर्नुकम' श्रुति से फूलों से परिमण्डित करें। 'जितन्त' मन्त्र से सभी भूषणों से अलंकृत करें। 'इरावती' मन्त्र से पैरों में अक्षत समर्पित करें। 'धूरसी' मन्त्र से काला अगर धूप दिखावें। 'उद्दीपस्व' मन्त्र से दीपक जलाकर दिखावें। चारों वेदों का पाठ करके नृत्य, गीत दिखावें।

भगवत:नित्यार्चनक्रमे नैवेद्यसमर्पणप्रकार:

अर्चयेद्विविधै: पुष्पैर्नामभिर्बहुभिर्हरिम्।।५५।।
हवींषि सुखपक्वानि विविधानि महानसात्।
सिक्तानि सर्पिभि: सम्यक् सोपदंशानि पानकै:।।५६।।
आनीतानि यथायोगं विन्यस्तान्यासनेऽग्रत:।
प्रोक्षयेदस्त्रमन्त्रेण वर्मणा परिषेचयेत्।।५७।।
'देवस्य त्वेति' मन्त्रेण दर्शयन् ग्रासमुद्रया।
त्रिपञ्च सप्त वारं वा देवाय विनिवेदयेत्।।५८।।
एवं निवेद्य विधिवत् सोदकं सोपदंशकम्।
ताम्बूलीं वासनायुक्तां दद्याच्चरणमित्यपि।।५९।।

भगवत के नित्यार्चन क्रम में नैवेद्य समर्पण प्रकार

हरि के विविध नामों से उनका अर्चन विविध फूलों से करें। महानस अर्थात् भोजनालय से सुपक्व विविध हवि को गोघृत से भिंगोकर सम्यक् सोपदेश पानकों के साथ लाकर हरि के आसन के आगे रखें। उनका प्रोक्षण अस्त्र मन्त्र से परिषेचन कवच मन्त्र से करें। 'देवस्यत्वेति' मन्त्र से तीन, पाँच या सात बार ग्रास मुद्रा दिखाकर निवेदित करें। इस प्रकार विधिवत् निवेदित करके मोदक सोपदंशक सुवासित ताम्बूल चरण में अर्पित करें।

नित्याराधनक्रमे होमादिसम्पादननिर्देश:

ततो निर्गत्य सदनान्नित्यहोमं समापयेत्।
बलिं च दद्याद्भूतेभ्यो नित्योत्सवमथाचरेत्।।६०।।

नित्यार्चन क्रम में होमादि सम्पादन निर्देश

तब मन्दिर से निकल कर नित्य होम करें। उन्हें बलि देकर नित्योत्सव करें।

नित्यार्चनप्रसंगे नीराजनोद्वासनादिक्रम:

तत: प्रविश्य सदनं नीराज्य 'चरमेण' च।
उद्वासयेन्मूलबेरे यथापूर्वं गुरूत्तम:।।६१।।
'जपेदष्टाक्षरं मन्त्रं' यथाशक्ति प्रणम्य च।
स्वीकृत्य पादसलिलं पिबेत्त्रि: शिरसा पुन:।।६२।।

धारयेत्पादुकां चापि तुलस्यादि तथा हरेत्।
सेवार्थमागतानां च यतीनां विदुषामपि।।६३।।
अन्येषां विष्णुभक्तानां पाद्यादि विरेद्गुरुः।

नित्यार्चन प्रसंग में नीराजन उद्वासनादि का क्रम

तब मन्दिर में जाकर 'चरमेण' से आरती करें। मूलमूर्ति में गुरुश्रेष्ठ पूर्ववत् उसे उद्वासित करें। यथाशक्ति अष्टाक्षर मन्त्र का जप करें और प्रणाम करें। चरणोदक का पान तीन बार करें और अपने शिर पर पादुका रखें। तब तुलसी आदि को हटा दें। सेवा के लिये आयें यतियों, विद्वानों और दूसरे विष्णु भक्तों को पाद्य आदि प्रदान करें।

भगवन्निवेदितान्नविनियोगः

विष्णोर्निवेदितान्नादि स्वीकृत्य स्वयमात्मनः।।६४।।
सेवार्थमागतेभ्यश्च सर्वेभ्योऽपि प्रदापयेत्।
विष्णोर्निवेदितान्नेन यष्टव्या गृहदेवताः।।६५।।
भुञ्जीत विष्णुनैवेद्यम् देवीभ्यो विनिवेदितम्।

भगवत को निवेदित अन्न का वितरण

विष्णु के निवेदित अन्न को स्वयं ग्रहण करें और सेवा के लिये आगत सबों को प्रदान करें। विष्णु को निवेदित अन्न में गृहदेवता पूज्य हैं। विष्णु और देवी को निवेदित अन्न को ग्रहण करें।

चण्डादिनिवेदितान्नविनियोगादिः

चण्डादिपरिवाराणां यदन्नं विनिवेदितम्।।६६।।
तन्न भुञ्जीत मनुजो जलेऽग्नौ वा विनिक्षित्।
तरन्ति पितरश्चापि तेन तृप्ताः न संशयः।।६७।।
इदमाराधनं विष्णोः कथितं ते समासतः।

।। इति भार्गवतन्त्रे षोडशोऽध्यायः।।

चण्ड आदि के निवेदित अन्न का वितरण

चण्ड आदि परिवार गणों को जो अन्न निवेदित होता है, उसे मनुष्य न खाये। जल में, अग्नि में डाल दें। उससे पितर तृप्त होकर तर जाते हैं। यह विष्णु आराधन सांगोपांग आप से कहा गया।

।। श्री भार्गवतन्त्र में सोलहवाँ अध्याय सम्पूर्ण ।।

सप्तदशोऽध्यायः

अग्निकार्यानिरूपणाध्यायः

अग्निकुण्डे होमसम्पादनात्पूर्वं कर्तव्यानि कृत्यानि

श्रीराम:

द्वारपार्श्वस्थितौ देवौ पूजयित्वाग्निसद्मनः।
प्रविश्य गोमयाम्भोभिः कुण्डमालिप्य पश्चिमे।।१।।
आसने प्राङ्मुखो भूत्वा समावेश्यात्मदक्षिणे।
कुसुमानि तथा वामे द्रव्याण्यन्यानि कल्पयेत्।।२।।
प्राणानायम्य सङ्कल्प्य कुण्डस्योत्तरभूतले।
प्रागग्रान्निक्षिपेद्दर्भान् क्रमात्तेषु विनिक्षिपेत्।।३।।
आज्यपात्रं चरुं स्थालीं प्रोक्षणीपात्रमप्यथ।
प्रणीतां समिधो दर्भांस्तण्डुलान् परिधित्रयम्।।४।।
स्रुक्स्रुवौ लक्षणोपेतौ दर्वीं व्यजनमेक्षणे।
काष्ठं घण्टामक्षतांश्च गन्धद्रव्याणि चेतरान्।।५।।
विन्यस्य कुण्डान्तराले प्रागग्रा उदगायताः।
तिस्रस्तिस्रो लिखेद्रेखाः प्रणवेन पृथक् पृथक्।।६।।
विसृज्य लेखनं कूर्चं हस्तौ प्रक्षाल्य वारिणा।
दर्भस्तंबद्वयेनाद्भिरभ्युक्ष्याग्निं निवेशयेत्।।७।।

अग्नि कार्य निरूपण

अग्निकुण्ड होम करने के पहले के कर्त्तव्य कृत्य

श्री भार्गव राम ने कहा कि द्वार पार्श्वों में स्थित देवताओं का पूजन करके अग्निशाला में जाकर पश्चिम कुण्ड को गोबर जल से लीपें। पूर्व की ओर मुख करके आसन पर बैठें। अपने दाएँ भाग में फूलों को और बाएँ भाग में अन्य सामग्रियों को रखें। प्राणायाम करके संकल्प करें। कुण्ड के उत्तर भूतल पर पूर्वाग्र कुशों को बिछावें। आज्य पात्र, चरु, थाली, प्रोक्षणी पात्र, प्रणीता, समिधा, कुश, चावल, परिधित्रय, स्रुक, स्रुवा, लक्षणायुक्त दर्वी, पंखा, इक्षण, लकड़ी, घण्टा, अक्षत, गन्ध, द्रव्य आदि कुण्ड के अन्तराल में पूर्वाग्र उत्तराग्र रखें। प्रणव से अलग-अलग तीन रेखा खींचे। लेखन कूर्च को अलग रखकर हाथों को जल से धोवें। दो कुशों से अग्नि का अभ्युक्षण करके रख दें।

अद्भिः परिसमूह्यास्त्रैः परिस्तीर्यानलं कुशैः।
दशभिर्दशभिः साग्रैः प्रागग्रैरुदगञ्चलैः।।८।।
द्रव्याग्निमध्येऽपां पूर्णां प्रणीतां विनिवेशयेत्।
साक्षतां दर्भयुग्मेन कूर्चं निर्माय विन्यसेत्।।९।।
तत्रावाह्यार्चयेद्देवं वासुदेवं सनातनम्।
अग्नेराग्नेयकोणे तामासने विनिवेशयेत्।।१०।।
पवित्रितैस्त्रिभिर्दर्भैः आच्दाद्य प्रोक्षणीं पुरः।
विन्यसेदात्मनस्तत्र प्रणीतां कूर्चमानकैः।।११।।
अद्भिरापूर्य चोत्पूय पात्राण्युत्तानयन् गुरुः।
प्रोक्षयेत्प्रोक्षणांवोभिराज्यस्थालीं समाहरेत्।।१२।।
तस्यां विन्यस्य तत्कूर्चं कूर्चे तन्मयविष्टरे।
अग्नेर्दक्षिणतो देवमर्चयेच्चतुराननम्।।१३।।
पूरयित्वाज्यपात्रं तत् गालितेनैव सर्पिषा।
उदगग्निं निवेश्यास्मिन् आज्यस्थालीं निवेशयेत्।।१४।।
दीप्तेन बर्हिषा तस्य पर्यग्निकरणं चरेत्।
दर्भाग्रे द्वे निवेश्यास्मिन् पुनः पर्यग्निमाचरेत्।।१५।।
उदगुत्तीर्य तत्पात्रम् अग्निमग्नौ निवेशयेत्।
श्रपयेद्धृदयाद्यङ्गैः चरुपात्रे हुताशने।।१६।।
अग्नेरुत्तरत्तः स्थाप्यं चरुपात्रं यथाक्रमम्।
आज्यपात्रं पुरस्कृत्य त्रिरुत्पूय गुरूत्तमः।।१७।।

परिसमूहन जल से अस्त्र मन्त्र के द्वारा करें। अग्नि का परिस्तरण कुशों से करें। दश-दश कुशों को पूर्वाग्र और उत्तराग्र रखें। द्रव्य अग्नि के मध्य में जलपूर्ण प्रणीता को रखें। दो कुशों से कूर्च बनाकर अक्षत के साथ रखें। वहाँ सनातन वासुदेव का आवाहन करके अर्चन करें। अग्नि से आग्नेय कोण में आसन पर निवेश करें। तीन कुशों की पवित्रा से प्रोक्षणी को ढक दें। पवित्रा कूर्च में देवात्मा का निवेश करें। जल से भरकर गुरु पात्रों को उत्तान करें। प्रोक्षण जल से आज्य थाली का प्रोक्षण करके उसे उठाकर कूर्च के साथ कूर्च के विस्तर पर रखें। अग्नि के दक्षिण भाग में ब्रह्मा का पूजन करें। आज्य पात्र को भरकर उससे गोघृत उत्तर की ओर अग्नि में गिराकर आज्य थाली को उत्तर तरफ रखें। दीप्त वर्हिषा से उसका पर्यग्नि करें। दो कुशाग्रों में निवेशित करके पुनः

पर्यग्निकरण करें। उस आज्य पात्र को उत्तर से उठाकर अग्नि के आग्नेय में स्थापित करें। चरुपात्र में हृदयादि अंगों का न्यास करके उसे अग्नि के उत्तर तरफ स्थापित करें। गुरु श्रेष्ठ आज्य पात्र के आगे त्रिरुत्पूय रखें।

कूर्चग्रन्थिं विसृज्याद्भिः स्पृष्ट्वाग्नौ विनिवेशयेत्।
सौरभेयीं दर्शयित्वा घृतं तदमृतं स्मरेत्।।१८।।
इन्द्रादीनग्निकुण्डस्य परितः पूजयेत् क्रमात्।
अतितप्तेन तोयेन स्रुक्स्रुवौ क्षालयेद्गुरुः।।१९।।
दर्भपञ्चककूर्चेन मूलमध्याग्रभूमिषु।
संमृज्याग्नौ च निष्टप्य तावुदीच्यां निवेशयेत्।।२०।।
ग्रन्थिं विसृज्य कूर्चस्य स्पृष्ट्वाम्ब्वग्नौ निवेशयेत्।
होमवस्तुषु संसिञ्चेत् स्रुवेणाज्यं सकृत्सकृत्।।२१।।
उदगग्रा च परिधिर्न्यसनीया च पश्चिमे।
प्रागग्रा दक्षिणे तद्वदुदीच्यां दिशि विन्यसेत्।।२२।।
आग्नेयैशानयोः स्थाप्यावाधारसमिधावुभौ।
'अदितेन्वि'त्यादिमन्त्रैः परिषेचनमाचरेत्।।२३।।
समिधः पञ्चदश च सिक्त्वाज्येन ततस्सकृत्।
जप'न्त्रष्टाक्षरं मन्त्रं' ध्यात्वा च परमेष्ठिनम्।।२४।।
आदद्यान्मुद्रया मुष्ठ्या वेष्टयित्वा कुशैः करम्।
आज्यपात्रं समादाय प्राजापत्यं ततः परम्।।२५।।
ऐन्द्रं च जुहुयादग्नौ आग्नेयं सौम्यमेव च।
व्यस्ताभिर्व्याहृतिभिश्च समस्ताभिर्यथाक्रमम्।।२६।।

कूर्च गाँठ खोलकर जल से धुलाकर अग्नि में डाल दें। धेनुमुद्रा दिखाकर घी को अमृत होने की कल्पना करें। अग्नि कुण्ड के सब ओर क्रमशः इन्द्रादि लोकपालों की पूजा करें। अति गरम जल से गुरु स्रुक और स्रुवा को धोये। पाँच कुशों के कूर्च के मूल मध्य अग्र में मिट्टी लगावें। फिर साफ करके उत्तर दिशा में रख दें। कूर्च के गाँठ खोलकर जल से स्पर्श कराकर अग्नि में डाल दें। हवन सामग्री को स्रुव के द्वारा गोघृत से सेचन करें। पश्चिम उत्तराग्र परिधि का न्यास करें। दक्षिण में पूर्वाग्र करके उत्तर दिशा में रख दें। आग्नेय और ईशान में दोनों आधार समिधाओं को रखें। 'अदितेन्वि' आदि मन्त्र से उनका परिषेचन करें। पन्द्रह समिधाओं को गोघृत से सिक्त करके परमेष्ठि का ध्यान

करके अष्टाक्षर मन्त्र का जप करें। आदद्यान्मुद्रा और मुट्ठी से कुश को वेष्टित करें। उसे आज्यपात्र में रखें। तब प्राजापत्य और ऐन्द्र का अग्नि में हवन करें। आग्नेय में सौम्य का भी हवन करें। अलग-अलग व्याहृतियों से और सभी व्याहृतियों से यथाक्रम हवन करें।

होमक्रमे वह्न्यादिध्यानस्वरूपम्

परिषिच्य ततो वह्निं ध्यायेच्चत्वारि शृङ्गया।
ओमग्नये नमः स्वाहेत्यग्नौ पूर्णाहुतिर्भवेत्।।२७।।
द्विशीर्षकं सप्तहस्तं त्रिपादं सप्तजिह्वकम्।
वरदं शक्तिपाणिं च विभ्राणं स्रुक्स्रुवौ तथा।।२८।।
अभितिदं चर्मधरं वामे चाज्यधरं करे।

हवन क्रम में अग्नि आदि के ध्यान के रूप

अग्नि का परिषेचन करके उसे चार श्रृंगों से युक्त होने का ध्यान करें। 'ॐ अग्नये नमः स्वाहा' मन्त्र से पूर्णाहुति होती है। ध्यान करें कि अग्नि के दो शिर, सात हाथ, तीन पैर और सात जीभ हैं। उनके हाथों में वरमुद्रा, शक्ति, स्रुक और स्रुवा है। अभयमुद्रा, चर्म, बाएँ हाथ में आज्य है।

वह्नेः सप्तजिह्वानां नामस्थानादिविवेकः

काली कराली सुमना लोहिता धूम्र एव हि।।२९।।
स्फुलिङ्गिनी विश्वरूपी सप्त जिह्वाः प्रकीर्तिताः।
काल्यास्तु मध्यमं स्थानं कराल्याः पूर्वदिग्भवेत्।।३०।।
मनोजवायाश्चाग्नेय्यां लोहितायास्तु वारुणे।
सुधूम्रा सोमनिलया स्फुलिङ्गिन्यनिलाश्रया।।३१।।
ऐशान्यां विश्वरूपी तु एवं स्थानं स्मरेत् क्रमात्।
जिह्वायां दक्षिणे वक्त्रे धूम्रायां मारणादिकम्।।३२।।
लोहितायां वशीकारः काल्यां कर्म च शान्तिकम्।
सर्वसिद्धिः स्फुलिङ्गिन्यामानने दक्षिणेतरे।।३३।।
करालिका विजयदा पुष्टिदा च मनोहरा।
काष्र्ण्यं लौहित्यमेतासां वर्णः श्यामत्वमेव च।।३४।।
स्फुलिङ्गरूपं च ततो वर्णः स्फटिकसन्निभः।
तपनीयनिभः प्रोक्तः जिह्वायामानुपूर्वशः।।३५।।

अग्नि की सात जिह्वाओं के नाम स्थान का विवेक

अग्नि की सातों जिह्वाओं के नाम काली, कराली, सुमना, लोहिता, धूम्रा, स्फुलिंगिनी और विश्वरूपा है। काली का स्थान अग्नि के मध्य में है। कराली का स्थान पूर्व में है। मनोजवा का आग्नेय में और लोहिता का पश्चिम में है। धूम्रा का पश्चिम में, स्फुलिंगी का वायव्य में स्थान है। विश्वरूपा का स्थान ईशान में है। क्रमशः इस प्रकार के स्थानों का स्मरण करें। दक्षिण में स्थित धूम्रा जीभ में मारण आदि कर्म करें। लोहिता में वशीकरण और काली में शान्ति कर्म करें। स्फुलिंगिनी में सर्वसिद्धि मिलती है। दक्षिण में इतर कराली विजयप्रदा है। पुष्टिदा और मनोहर लोहिता में आकर्षण कर्म करें। सबों का वर्ण श्यामत्व है। स्फुलिंग रूप का वर्ण स्फटिक के समान है। अनुपूर्वी के साथ जीभ अग्नि के समान है।

अग्नित्रयलक्षणं तेषामुपयोगश्च

नित्याग्निर्वृद्ध इत्युक्तः उत्सवाग्निर्युवा भवेत्।
दीक्षाशान्तिप्रतिष्ठासु बालाग्निरभिधीयते।।३६।।
अरणीमथनाज्जातः बालाग्निरिति कथ्यते।
सूर्यकान्ताश्मनो जातो यौवनाग्निः प्रकीर्तितः।।३७।।
लौकिकाग्निस्तु वृद्धाग्निरग्नित्रयमुदाहृतम्।

अग्नित्रय के लक्षण और उसके उपयोग

नित्याग्नि को वृद्ध कहा जाता है। उत्सवाग्नि को युवक कहते हैं। दीक्षा शान्ति और प्रतिष्ठा में बालाग्नि को प्रशस्त मानते हैं। अरणी मंथन से उत्पन्न अग्नि को बालाग्नि कहते हैं। सूर्यकान्त मणि से उत्पन्न अग्नि को युवाग्नि कहते हैं। लौकिक अग्नि को वृद्धाग्नि कहते हैं।

समिधः प्रमाणं दोषयुक्तसमिधः प्रयोगफलनिर्देशश्च

आयामः समिधां तालः कनिष्ठानाहनं मतम्।।३८।।
चर्महीने विनाशः स्यात् भेदे क्षीणकुलं भवेत्।
आर्द्रा तु बन्धुनाशः स्यात् पुत्रनाशः पुरातने।।३९।
तक्षासु भार्यामरणं कलहाय च शाखिनी।
उद्वेगाय भवेत्स्थूला ह्रस्वावग्रहकारिणी।।४०।।
दीर्घातिवृष्टिजननी त्याज्या दोषयुता समित्।

समिधा का प्रमाण दोषयुक्त समिधा के प्रयोग का फल

समिधा का आयाम एक ताल बराबर बारह अंगुल का और मोटाई

कनिष्ठा अंगुली के बराबर होती है। छिलका रहित समिधा के हवन से विनाश और छेद होने पर कुल क्षीण होता है। गीली समिधा से बन्धुनाश और पुरानी समिधा से हवन करने पर पुत्र का नाश होता है। तक्षासु से पत्नी मरण और शाखा वाली समिधा से कलह होता है। मोटी समिधा से उद्वेग होता है। छोटी समिधा अवग्रहकारिणी होती है। लम्बी समिधा से वर्षा होती है। अतः दोषयुक्त समिधा त्याज्य है।

कामनानुरूपं समिधां होमद्रव्याणां च विवरणम्

यज्ञवृक्षोद्भवैश्शान्तिस्सौभाग्यं कुसुमैर्भवेत्।।४१।।
धूपद्रव्यैस्सदारोग्यं पुष्टिर्दध्ना पयश्शुचिः।
अन्नेन विविधान् कामान् आज्येनायुष्मतीः प्रजाः।।४२।।
श्वेतपद्मैस्तु जुहुयादिच्छन् ब्रह्मश्रियं नरः।
लक्ष्मीपुष्पैस्तु जुहुयाल्लक्ष्मीकामोऽथ वारुणैः।।४३।।
पद्मैर्बिल्वसमिद्भिर्वा ज्ञानकामस्तु सर्पिषा।
कन्याकामो हुवेल्लाजैः गोकामो गोमयैः पुनः।।४४।।
आयुष्कामस्तु दूर्वाभिर्भूमिकामस्तु मृत्स्नया।
यवैरिन्द्रियकामस्तु तिलैःसर्वजनप्रियः।।४५।।
ब्रह्मवर्चसकामस्तु ब्रह्मवृक्षसमुद्भवैः।
वैणवैश्च यवैश्चैव नीवारैः शालिभिस्तथा।।४६।।
सर्वे कामाश्च सिद्ध्यन्ति होतुर्बीजैर्यथोदितैः।
लाजहोमेन सिद्ध्यन्ति सर्वकामाः न संशयः।।४७।।
अन्नेनान्नादिकामस्तु पुत्रकामस्तु पायसैः।
निम्बपुष्पैर्हिरण्यार्थी सर्वे सिध्यन्ति सर्पिषा।।४८।।

कामना के अनुरूप समिधा होम द्रव्यों का विवरण

यज्ञवृक्ष की समिधा से शान्ति होती है। फूलों के हवन से सौभाग्य होता है। धूप द्रव्यों से आरोग्य मिलता है। दही से पुष्टि होती है। दूध से पवित्रता मिलती है। अन्न से विविध कामना पूर्ति और गोघृत से प्रजा आयुष्मती होती है। श्वेत कमल के हवन से मनुष्य का ब्रह्म श्री नष्ट होती है। लक्ष्मी पुष्प के हवन से लक्ष्मी अर्थात् धन मिलता है। ज्ञान के इच्छुकों को कमल, बेल या गोघृत से हवन करना चाहिये। विवाहेक्षुओं को लावा से हवन करना चाहिये। गाय की कामना से गोमय से हवन करें। आयुवृद्धि के लिये दूर्वा से और भूमि के इच्छुक

मिट्टी से हवन करें। इन्द्रियों की कामना से यव से और जनप्रियता के लिये तिल से हवन करें। ब्रह्मवर्चस की कामना से पलाश की समिधा से हवन करें। वैणव, यव, नीवार, चावल के हवन से सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। लावा के हवन से सभी इष्ट पूर्ण होते हैं। इसमें संशय नहीं है। अन्न के इच्छुक अन्न से, पुत्र की कामना से पायस से हवन करें। सोना पाने के इच्छुक नीम के फूलों से हवन करें। गोघृत से हवन करने पर सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

तत्तद्धोमद्रव्यपरिमाणनिर्देशः

होमे सर्पिर्मधुक्षीरधाराः स्युश्चतुरङ्गुलाः।
शुक्तिर्दध्नाहुतिर्ग्रासं पायसाद्याहुतिर्भवेत्।।४९।।
भक्ष्याहुतिस्तदर्धेन फलैः पुष्पैरखण्डितैः।
निष्पावबीजमानेन धूपद्रव्याहुतिर्भवेत्।।५०।।
अष्टाङ्गुला तदर्धा वा समिद्दूर्वा षडङ्गुला।
मृद्विकाक्षप्रमांणा तु गोमयाहुतिरुच्यते।।५१।।
पूर्णाहुतिर्घृतस्य स्यात्कुडवेन मुनीश्वर।
न्यूनाधिकप्रमाणेन हव्यकव्याहुतीः कृताः।।५२।।
भुञ्जते दानवाः दैत्याः न फलाय प्रकल्पते।

हवन द्रव्यों के प्रमाण का निर्देश

हवन में गोघृत, मधु, दूध की धार चार अंगुल की होती है। दही का आहुति ग्रास शुक्ति भर होती है। पायस आदि की आहुति शुक्ति होती है। भक्ष्य की आहुति मात्रा पायस की आहुति के आधा होती है। फल और फूल अखण्डित आहुति होते हैं। निष्पाव बीज के बराबर धूप द्रव्य की आहुति होती है। आठ अंगुल या चार अंगुल या छः अंगुल की दूर्वा समिधा होती है। मिट्टी के अक्ष के बराबर गोबर की आहुति होती है। एक कुडव घी की पूर्णाहुति होती है। एक कुडव बारह अंगुली का होता है। प्रमाण से कम या अधिक हव्य कव्य की आहुति देने पर वे दानव, दैत्य खा जाते हैं। फल नहीं मिलता।

अग्निकुण्डे हरेः आवाहनम् आराधनं च

वर्मणा परिषिच्याग्निमग्नौ पीठप्रकल्पनम्।।५३।।
आधारशक्त्यादिमन्त्रैर्वह्वावावाहनं हरेः।
पूर्ववत्सकलं कुर्यात् उपचारमुषर्बुधे।।५४।।
तैस्तैर्मन्त्रैश्च स्वाहान्तैस्सर्पिषैव सकृत् सकृत्।
निवेदनान्तं कृत्वैवं परिवारार्थमप्यथ।।५५।।

हुत्वा कवचमन्त्रेण पूर्ववत्परिषेचयेत्।
एतन्नित्यार्चनं वह्नौ प्रतिष्ठादावनन्तरम्।।५६।।

अग्नि कुण्ड में हरि का आवाहन और आराधन

कवच मन्त्र से अग्नि का परिषेचन करके उसमें पीठ कल्पित करें। आधार शक्ति आदि मन्त्र से अग्नि में हरि का आवाहन करें। विद्वान सभी कर्म पूर्ववत् उपचारों से करें। उनके मन्त्रों में स्वाहा जोड़कर गोघृत से सकृत सकृत हवन करें। निवेदन के अन्त में परिवारों के लिये भी करें। कवच मन्त्र से हवन करके पूर्ववत् परिषेचन करें। प्रतिष्ठा के बाद अग्नि का अर्चन नित्य इसी प्रकार से करें।

अग्नौ नित्याराधनविध्यादौ विशेष:

तत्तत्क्रियोक्तविधिना होममन्यत्समाचरेत्।
नित्ये धार्यो वीतिहोत्र: न प्रणीता न चात्मभू:।।५७।।
नेध्मप्रक्षेपणं चाग्नौ न चरुश्रपणं भवेत्।
आज्येन केवलं वह्नौ विष्णो: पूजा जपावधि:।।५८।।
नाऽघारहोम: कर्तव्य: अग्नौ नष्टे तु निष्कृति:।
प्रतिष्ठादिषु सर्वेषु सर्वमेतत्समाचरेत्।।५९।।
कर्मावसानं ब्रह्मादीन् नोद्वासेत्तन्त्रवित्तम:।

अग्नि में नित्य आराधन विधि आदि में विशेष

उनकी क्रिया में उक्त विधि से अन्य स्थानों में हवन करें। वीतिहोत्र नित्य धार्य है। प्रणीता और आत्मभू को न रखें। अग्नि में इध्म प्रक्षेप न करें और न चरु श्रपण करें। विष्णु के पूजन जप की अवधि में केवल गोघृत से हवन करें। अग्नि के बुझने पर आधार हवन न करें। सभी प्रतिष्ठा आदि में सभी आचार इसी प्रकार से करें। कर्म के अवसान में ब्रह्मा आदि का उद्वासन न करें।

पूर्णाहुतिसम्पादनविधि:

प्रायश्चित्ताहुतीर्हुत्वा कुर्यात्पूर्णाहुतिं तत:।।६०।।
आत्मनोऽग्रे स्रुवं याम्ये चाज्यस्थालीं तथोत्तरे।
स्रुचं विन्यस्य हस्ताभ्याम् आदद्यात्सादितान् कुशान्।।६१।।
आज्यस्थाल्यां न्यसेन्मूलं मध्ये मध्यं स्रुचीतरम्।
स्पृष्ट्वा त्रिरेवं जुहुयादग्नौ दर्भान् तथा दहेत्।।६२।।
परिधीनात्मन: पूर्वं प्रणीतां विन्यसेद्गुरु:।
आपूर्य प्रोक्षणीतीर्थै: पूर्वाद्याशासु सेचयेत्।।६३।।

अवन्यां विसृजेच्छेषं प्रोक्षयेदात्मनः शिरः।
ब्राह्मणमुद्वसेत्पश्चात्स्रुचं तोयेन पूरयेत्।।६४।।
परिषिच्य ततः कुण्डं देवमग्नेः समुद्धरेत्।
भस्मना तिलकं कुर्यात् हुतेनाधापनोदिना।।६५।।
'अग्नेनये'ति मन्त्रेण ह्युपस्थाय ततोऽनलम्।
भक्त्या यदग्नौ विहितं यथाशक्ति यथाविधि।।६६।।
आराधनं त्वं देवेश गृहाण परमेश्वर।
इति देवपदाम्भोजे न्यसेद्धवनजं फलम्।।६७।।

पूर्णाहुति सम्पादन विधि

प्रायश्चित्त हवन करके पूर्णाहुति करें। अपने आगे स्रुव, दक्षिण में आज्य पात्र, उत्तर तरफ स्रुच रखें। हाथ भर के कुशों को रखें। आज्य थाली में मूल, मध्य में मध्य और स्रुची को अन्त में रखें। तीनों को छूते हुए अग्नि में कुश को डाल दें। अपनी परिधि के पूर्व में गुरु प्रणीता रखें। उसे प्रोक्षणी जल से भरें। पूर्वादि क्रम से सेचन करें। शेष जल को जमीन पर गिराकर अपने शिर का प्रोक्षण करें। ब्रह्मा को उद्वासित करके स्रुचा में जल भर दें। उस कुंड का परिसेचन करके अग्नि से देव का समुद्धार करें। भस्म से तिलक करें। 'अग्नेनये' मन्त्र से अग्नि का उपस्थापन करें। प्रार्थना करें—

भक्त्या यदग्नौ विहितं यथाशक्ति यथाविधि।।
आराधनं त्वं देवेश गृहाण परमेश्वर।

प्रार्थना के बाद देव के चरण कमलों में जंगली फूलों को रखें।

पूर्णाहुतिविधिः

अगस्त्यः

श्रुतो मया परंधाम्नः वह्नौ पूजाक्रमोऽधुना।
पूर्णाहुतिविधानं तत्कथमद्य ब्रवीहि मे।।६८।।

पूर्णाहुति विधि

अगस्त्य ने कहा कि परमधाम में अग्नि पूजन क्रम को सुना। उसका पूर्णाहुति विधान क्या है? उसे बतलाइये।

श्रीरामः

अर्घ्याद्यैरर्चयेद्देवमनले सर्पिषा गवाम्।
स्रुचमाज्येन सम्पूर्य कुडवेन गुरूत्तमः।।६९।।

दर्भेण समिधा युक्तं फलेन परिपूरितम्।
गन्धैः पुष्पैरक्षतैश्च पूजयित्वा स्रुचं गुरुः।।७०।।
अपिधाय स्रुवेणाथ नासिकाग्रान्तमुद्धरन्।
उत्थाय वाद्य घोषेषु सर्वतो नादितेषु च।।७१।।
'पूर्णाहुतिमि'ति मनुं घोषयत्सु द्विजातिषु।
'मूलमन्त्रे'ण जुहुयादनले विमले गुरुः।।७२।।
कुर्वीत स्विष्टकृद्धोमं कुक्कुटाण्डप्रमाणकम्।
चरुं घृताप्लुतं सर्वैरुपदंशैस्समन्वितम्।।७३।।
सशर्करं च समधु सदर्भसमिधं स्रुचि।
विन्यस्य सर्पिषाप्लाव्य स्रुवाग्रणापिधाय च।।७४।।
जुहुयान्'मूलमन्त्रे'ण प्रत्यहं सर्वकर्मसु।
एष तेऽग्निविधिः प्रोक्तः पृच्छतः कलशात्मज।।७५।।

।। इति भार्गवतन्त्रे सप्तदशोऽध्यायः।।

श्री भार्गव राम ने कहा कि अग्नि में देव का अर्चन अर्घ्यादि और गाय के घी से करें। गुरु स्रुचा में एक कुडव गाय का घी डालें। कुश से युक्त समिधा और फल से परिपूर्ण स्रुचा की पूजा गन्ध, अक्षत, फूल से गुरु करें। स्रुचा से उसे ढककर नासिकाग्र के सामने ले आयें। वाद्यघोष से सर्वत्र निनादित स्थिति में उसे उठाकर 'पूर्णाहुतिमिति' मन्त्र घोष ब्राह्मण करें। तब गुरु मूल मन्त्र से विमल अग्नि में उसे डाल दें। इसके बाद मुर्गी के अण्डे के बराबर चरु को घी से प्लुत करके सभी उपदंशों से समन्वित करें। तब शक्कर, मधु, कुश, समिधा के साथ उसे स्रुचि में रखें। गोघृत में प्लावित करें। स्रुवा के अग्रभाग को ढककर मूलमन्त्र से अग्नि में डाल दें। प्रतिदिन सभी कर्मों को अग्नि की यही विधि प्रोक्त है। हे अगस्त्य! आपने पूछा तब इस विधि को मैंने आपको बतला दिया।।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय सत्तरह सम्पूर्ण ।।

अष्टादशोऽध्यायः

नित्योत्सवबलिसमर्पणविधिनिरूपणाध्यायः

अग्निकार्यसम्पादनानन्तरमुत्सवाचरण निर्देशः

श्रीरामः

नित्योत्सवविधिं वक्ष्ये यथावदवधारय।
अभ्यर्च्याग्नौ जगन्नाथमथ नित्योत्सवं चरेत्।।१।।

अग्नि कार्य सम्पादन के बाद उत्सव करने के निर्देश

श्री भार्गव राम ने कहा कि अब मैं नित्योत्सव विधि बतलाता हूँ। यथावत् धारण करो। अग्नि में जगन्नाथ की पूजा करने के बाद नित्योत्सव करें।

नित्योत्सवक्रमे बलिद्रव्यानयनक्रमः

अन्तः प्रविश्य सदनं बलिबिम्बं समर्चयेत्।
शिबिकादौ समारोप्य बलिद्रव्यं समाहरेत्।।२।।
सोपदंशं महान्नं वा पयोदधि घृतान्वितम्।
अथवा शुद्धमन्नं वा बल्यर्थं परिकल्पयेत्।।३।।
सर्वार्थतोयं शुद्धाख्यं गन्धपुष्पाक्षतानि च।
धूपं दीपं च विभ्राणाः व्रजेयुः परिचारकाः।।४।।
गायन्तश्चापि नृत्यन्तः तालमद्दलपाणयः।
व्रजेयुरग्रे देवस्य प्रदीपैर्बहुभिः सह।।५।।
व्यजनं चामरं छत्रमुत्सवाङ्गं तथेतरत्।
सर्वमादाय गच्छेयुर्देवस्याग्रेऽधिकारिणः।।६।।

नित्योत्सव क्रम में बलि द्रव्यों को ले आने का क्रम

मन्दिर के अन्दर जाकर बलिबिम्ब का अर्चन करें। पालकी आदि में रखकर बलि द्रव्यों को अर्पित करें। उपदंश सहित महान्न या दूध, दही, घृतान्वित अन्न या शुद्ध अन्न बलि के लिये परिकल्पित करें। सर्वार्थ के लिये शुद्ध जल, गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप लेकर परिचारक स्थित रहे। गाते, नाचते तालमद्दल पाणिदेव के आगे बहुत दीपकों के साथ पंखा, चामर, छत्र, अत्सवांग अन्य सब कुछ लेकर अधिकारी देव के आगे जायें।

बलिदानक्रमनिर्देशः

चण्डप्रचण्डावारभ्य बलिदानं समाचरेत्।
तत्तन्नाम तु देवानां चतुर्थ्या नमसान्वितम्।।७।।
प्रणवादि समुच्चार्य बलिदानं समाचरेत्।
इदमर्घ्यं बलिरयम् इदं ते उदकं त्विति।।८।।
तोयं पूर्वोत्तरं दद्यात् तालनृत्तस्वरान्वितम्।
गन्धं पुष्पं तथा धूपं दीपमर्घ्यं बलिस्ततः।।९।।
उदकं च प्रदातव्यं प्राङ्गणे बलिकर्मणि।

बलिदान क्रम निर्देश

चण्ड, प्रचण्ड से प्रारम्भ करके बलिदान अर्पित करें। देवों के चतुर्थ्यन्त नाम के पहले प्रणव और बाद में नमः लगाकर उच्चारण करते हुए बलि प्रदान करें। कहें—'इदमर्घ्यं बलिरयम् इदं ते उदकं त्विति तोयं' कह कर ताल नृत्य स्वरान्वित पूर्वोत्तर में बलि देवें। तब गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, अर्घ्य के साथ बलि प्रदान करें। बलि कर्म में जल प्रांगण में देवें।

तत्तद्देवानां स्वरनृत्ततालविवेकः

चण्डादिद्वारपालानां सर्वेषामृषभस्वरः।।१०।।
नृत्तं तु वैजयन्ती स्यान्मल्लतालमुदाहृतम्।
विष्णुक्रान्तं खगेशस्य नृत्तं तालं तु गारुडम्।।११।।
स्वरस्तु मध्यमः प्रोक्तः विष्वक्सेनस्य कथ्यते।
नृत्तं स्वस्तिकमित्युक्तं बलितालर्षभस्वरौ।।१२।।
तद्वन्नृत्तं गणेशस्य भद्रतालं तु पञ्चमः।
स्वरश्च कुंभतनय दुर्गायाः धैवतः स्वरः।।१३।।
सर्वमङ्गलनृत्तं स्यात् भद्रतालमुदीरितम्।
ब्रह्मणो ब्रह्मतालं स्यात् नृत्तं स्यात् सर्वमङ्गलम्।।१४।।
स्वरस्तु मध्यमस्तस्य शुनासीरस्य कथ्यते।
विलासनृत्तमुदितं स्वरः षड्ज उदाहृतः।।१५।।
समतालं तथा वह्नेः कथ्यते ऋषभस्वरः।
बद्धावतालं नृत्तं तु सर्वतोभद्रमीरितम्।।१६।।
यमस्य खेटकं नृत्तं गान्धारः स्वर उच्यते।
तालं तु श्रृङ्गिणी प्रोक्ता निर्ऋतेर्मध्यमः स्वरः।।१७।।

मल्लतालं तथा नृत्तं कथितं चक्रमण्डलम्।
वरुणस्य स्वरः प्रोक्तः पञ्चमो मङ्गलाह्वयः।।१८।।
तालं कान्तारनृत्तं स्यात् मरुतो धैवतः स्वरः।
जयतालं तु कथितं नृत्तं स्यात् पृष्ठकुट्टिमम्।।१९।।
सोमस्य भद्रतालं स्यात् नर्तनं कटिबन्धनम्।
स्वरो निषादः कथितः शङ्करस्य तु धैवतम्।।२०।।
स्वरस्तु ढक्करी तालं वामजानूर्ध्वनर्तनम्।
अन्येषामपि देवानां स्वरः पञ्चम इष्यते।।२१।।
भद्रतालं तु कथितं सर्वमङ्गलनर्तनम्।
भूतानां बलितालं स्यात् स्वरो गान्धार उच्यते।।२२।।
सर्वमङ्गलनृत्तं च दर्शयेत्कुम्भसम्भव।

उन देवों के स्वर, नृत्त, ताल विवेक

चण्डादि द्वारपालों के ऋषभ स्वर, नृत्त वैजयन्ती और तालमल्ल होते हैं। विष्णुक्रान्त गरुड़ का नृत्त ताल गारुड़ स्वर मध्यम होते हैं। विष्वक्सेन के नृत्त स्वस्तिक, बलि ताल और स्वर ऋषभ होते हैं। तदवत गणेश का ताल भद्र, स्वर पंचम है। दुर्गा का स्वर धैवत, नृत्त सर्वमंगल और ताल भद्र है। ब्रह्मा का ताल ब्रह्म है, नृत्त सर्वमंगल है, स्वर मध्यम है। सूर्य का नृत्त विलास, स्वर षडज और ताल सम है। अग्नि का स्वर ऋषभ, ताल बद्ध और नृत्त सर्वतोभद्र है। यम का नृत्त खेटक, स्वर गान्धार और ताल शृंगिणी है। निर्ऋति का स्वर मध्यम, ताल मल्ल और नृत्त चक्र मण्डल है। वरुण का स्वर पंचम, ताल मंगल और नृत्त कान्तार है। मरुत का स्वर धैवत, ताल जय और नृत्त पृष्ठकुट्टिम है। सोम का ताल भद्र, नृत्त कटिबन्धन और स्वर निशाद है। शंकर का स्वर धैवत, ताल ढक्करी और नर्त्तन वाम जानू ऊर्ध्व है। अन्य देवताओं का स्वर पंचम है। ताल भद्र और नर्त्तन सर्वमंगल है। भूतों का ताल बलि, स्वर गान्धार, नृत्त सर्वमंगल है। देवों को इन्हें दिखाना चाहिये।

उत्सवभ्रमणे बलिदानक्रमः

तृतीयावरणान्तं तत् परिक्रम्य यथाक्रमम्।।२३।।
तत्तन्नृत्तादिसहितं बलिं दत्वा यथाविधि।
महापीठे बलिद्रव्यं बलिशिष्टं विनिक्षिपेत्।।२४।।
उत्सवान्ते हरिं तत्र प्रापणान्तं यथोचितम्।
पूजयित्वाथ यानादेरवरोप्य गुरूत्तमः।।२५।।

मन्दिरान्तर्भुवं नीत्वा यथास्थानं निवेशयेत्।
श्रियादीनां च देवीनां ब्रह्मादीनां तथैव च॥२६॥
अन्येषां परिवाराणामाश्रितानां च पूजनम्।
तत्तन्मन्त्रेण कुर्वीत मुख्येभ्यस्तु निवेदनम्॥२७॥

उत्सव भ्रमण में बलिदान क्रम

तृतीय आवरण के बाद यथाक्रम परिक्रमा करें। नृत्त आदि सहित यथाविधि बलि प्रदान करें। महापीठ में बलि द्रव्य और बलिशिष्ट का निक्षेप करें। उत्सव के बाद हरि को यथोचित वहाँ ले आयें। उन्हें पूजकर यान आदि में श्रेष्ठ गुरु चढ़ावे। मन्दिर के गर्भगृह में लाकर यथास्थान रखें। लक्ष्मी आदि देवियों और ब्रह्मादि का उसी प्रकार से करें। अन्य परिवार और आश्रितों का पूजन उनके मन्त्रों से करें। मुख्यों को नैवेद्य अर्पित करें।

द्वारपालादिभ्यो बलिप्रदानादिविधिः

बलिस्तु द्वारपालानां तथा वै विधिरुद्रयोः।
इन्द्रादिलोकपालानां सर्वावरणवासिनाम्॥२८॥
पीठाधिदेवतानाञ्च बलिमेवं विनिक्षिपेत्।
देवीनामाश्रितानां च ताक्ष्र्यशेनेशयोरपि॥२९॥
आश्रितानां च भक्तानां प्रापणान्तं समर्चनम्।

॥ इति भार्गवतन्त्रे अष्टादशोऽध्यायः ॥

द्वारपालों आदि के बलिदानादि की विधि

द्वारपालों, ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्रादि लोकपाल, सभी आवरणों के देव और पीठादि के देवताओं को बलि इसी प्रकार देवें। देवियों और आश्रितों गरुड़ शेनेश आश्रितों भक्तों को लाने के बाद अर्चन करें।

॥ श्री भार्गव तन्त्र में अध्याय अट्ठारह सम्पूर्ण॥

▼

एकोनविंशोऽध्यायः

जीर्णोद्धारविधिनिरूपणाध्यायः

जीर्णोद्धारावसरः

धाम्नो वा कौतुकानां वा वैकल्येऽवयवादिषु।
सन्धातुं यदि शक्येत तदा सन्धानमाचरेत्।।१।।

जीर्णोद्धार विधि निरूपण

जीर्णोद्धार के अवसर

धामों या कौतुकों या मूर्तियों के अंग भंगादि होने पर यदि सन्धान कर सकें, तो करें।

संधानानर्हे बिम्बादौ विधिः

अशक्ये तुच्छिते धाम्नि बिम्बे त्यक्त्वा पुनः सृजेत्।
पूर्वद्रव्यं पुनः सृष्टौ योग्यं संयोज्य कल्पयेत्।।२।।
अयोग्यं तुच्छितं धीमान् अगाधे निक्षिपेज्जले।
भिन्नं वा स्फुटितं बिम्बं भूतिकामो न पूजयेत्।।३।।

सन्धान के दिन बिम्ब आदि की विधि

सन्धान में अशक्त होने पर, धाम के तुच्छित होने पर मूर्ति को हटाकर धाम को नये सिरे से बनवावें। पूर्वधाम की सामग्रियों में से पुनर्निर्माण योग्य सामग्रियों से ही बनावें। विद्वान अयोग्य तुच्छित सामग्री को अगाध जल में डाल दें। अंगभंगी या टूटी मूर्तियों की पूजा भूतिकामी न करें।

सन्धानावसरे भगवतः आराधनस्थलम्

लघुसाध्येऽङ्गसन्धाने कुंभे शक्तिं निवेशयेत्।
अनन्तजीर्णे बिम्बादौ बालबिम्बेऽर्चयेद्धरिम्।।४।।

सन्धान के अवसर पर भगवत आराधन स्थल

छोटे-मोटे मरम्मत में कुंभ में शक्ति का विनिवेश करें। मूर्ति के अधिक जीर्ण होने पर हरि का अर्चन बालबिम्ब में करें।

अजीर्णधामबिम्बत्यागनिषेधः

अजीर्णं धाम बिम्बं वा त्यक्त्वा नान्यत्र कल्पयेत्।
कल्पने तु महान् दोषः आचार्ययजमानयोः।।५।।
अन्यथा वा न कुर्वीत निर्दुष्टे बिम्बमन्दिरे।

अजीर्ण धाम बिम्ब के त्याग का निषेध

सही सलामत धाम और मूर्ति को छोड़कर अन्यत्र कल्पित न करें। अन्यत्र बनवाने से आर्य और यजमान दोनों को महान दोष लगता है। निर्दिष्ट बिम्ब मन्दिर में अथवा अन्यथा न करें।

विमानादिजीर्णोद्धारक्रमे शक्त्यावाहनव्यवस्था

सन्धाने तु विमानस्य शक्तिमावाहयेद्ध्रुवे।।६।।
ध्रुवबेरस्य सन्धाने कुम्भे वा बालकौतुके।
वैकल्ये परिवाराणां तेषामावाहनं ध्रुवे।।७।।
अङ्गबिम्बाङ्गसन्धाने तत्रापि परिवारवत्।
एवं सर्वं समालोच्य जीर्णोद्धारं समाचरेत्।।८।।

विमान आदि जीर्णोद्धार के क्रम में शक्ति आवाहन व्यवस्था

विमान के जीर्णोद्धार के क्रम में ध्रुवबेर में शक्ति का आवाहन करें। ध्रुवबेर के मरम्मत में कुम्भ में या बालकौतुक में शक्ति का आवाहन करें। परिवार मूर्ति के खण्डित होने पर आवाहन ध्रुवबेर में करें। अंगबिम्ब के मरम्मत में परिवारवत आचार करें। इन सबों को दृष्टिगत करते हुए जीर्णोद्धार कार्य करें।

बालालयकल्पनविवेकः

दिशश्च विदिशश्चापि मध्ये माधवसद्मनः।
सावकाशेऽभिरुचिते बालसद्म प्रकल्पयेत्।।९।।
पञ्च वा बाहुदण्डेन सप्त संकुचिते त्रिक्रम्।
चतुरश्रं मनोहारि कल्पयेत् बालसद्म तत्।।१०।।
यस्यां दिश्यभवद्द्वारं मन्दिरे पूर्वनिर्मिते।
तस्यां बालालये चापि बलजं परिकल्पयेत्।।११।।

बालालय कल्पन विवेक

माधव मन्दिर की दिशा, विदिशा और मध्य में अभिरुचि और अवकाश में बालमन्दिर की कल्पना करें। पाँच या सात हाथ के संकुचित त्रिक में चतुरस्र मनोहारी बालमन्दिर को बनावें। पूर्व निर्मित मन्दिर में जिस दिशा में द्वार होता है, उसी दिशा में बालालय और बलज परिकल्पित करें।

बालबिम्बकल्पनप्रकारः

लोहजं दारुजं यद्वा शैलजं वा मनोहरम्।
बालबिम्बं प्रकप्येत यथा प्राचीनमन्दिरे।।१२।।

उत्सेधो बालबिम्बस्य वृद्धौ पञ्चभिरङ्गुलैः।
साकं हस्तेन हानौ तु विंशत्याङ्गुलिभिर्भवेत्।।१३।।
पूर्ववत्कल्पयेद्बिम्बं नान्यथा कलशोद्भव।

बालबिम्ब कल्पन प्रकार

प्राचीन मन्दिर के समान लोहा, लकड़ी या पत्थर की मनोहर बालमूर्ति बनवायें। बालबिम्ब का उत्सेध वृद्ध पाँच अंगुल का होना चाहिये। एक हाथ या बीस अंगुल की बालमूर्ति बनवाने से हानि होती है। हे अगस्त्य! पूर्ववत् मूर्ति बनवायें। दूसरे प्रकार से न बनवायें।

अङ्गवैकल्यशान्त्यर्थ होमक्रमः

एवं प्रकल्प्य मेधावी बालबिम्बं च मन्दिरम्।।१४।।
शुभे काले तु सम्प्राते पूजयित्वा द्विजोत्तमान्।
आशिषो वाचयित्वा च दत्त्वा तेभ्योऽपि दक्षिणाम्।।१५।।
भूसुरैस्तैरनुज्ञातः आचार्यं वरयेत्पुरा।
तं प्रणम्य यथाशास्त्रं मण्डयित्वाभिपूजयेत्।।१६।।

अंग खण्डित होने पर शान्ति के लिये होमक्रम

इस प्रकार के बालबिम्ब और मन्दिर बनवाकर शुभ समय में पूजा करवा कर ब्राह्मणों से आशीर्वचन कराकर उन्हें दक्षिणा देकर उनकी आज्ञा से आचार्य का वरण पूर्ववत् करें। आचार्य को प्रणाम करके यथाशास्त्र मण्डित करके पूजा करें।

बालबिम्बस्थापनक्रमे आचार्यवरणक्रमः

ततः शास्त्राविदाचार्यः अङ्गवैकल्यशान्तये।
दूर्वाभिर्मधुयुक्ताभिः सहस्रं होममाचरेत्।।१७।।
व्याहृत्या सर्पिषा पश्चात् 'पञ्चोपनिषदा' शतम्।
हुत्वा पूर्णाहुतिं कुर्यात् तेन शान्तिर्न संशयः।।१८।।

बालबिम्ब स्थापन क्रम में आचार्य वरण क्रम

तब शास्त्रज्ञ आचार्य अंग वैकल्य की शान्ति के लिये दूर्वा और मधु मिश्रण में एक हजार हवन करें। गोघृत से व्याहृतियों से हवन के बाद 'पंचोपनिषद' से सौ आहुति से हवन करें। हवन के बाद पूर्णाहुति करें। इससे शान्ति हो जाती है, इसमें संशय नहीं है।

बालबिम्बप्रतिष्ठाराधनक्रम:

अङ्कुराण्यर्पयेत्पश्चात् बध्वा प्रतिसरं ततः।
जलाधिवासाद्यखिलं कर्म कुर्यात् यथापुरम्।।१९।।
बालालयस्य मध्ये वा दिव्ये वा मानुषेऽपि वा।
हस्तमात्रोन्नतां वेदिं कृत्वा तस्यां निवेशयेत्।।२०।।
'मूलमन्त्रेण' विधिवत् रत्नन्यासं न कारयेत्।
प्रोक्षयेच्च यथापूर्वं ततो मूलालयं व्रजेत्।।२१।।
मूलबिम्बं समाराध्य कुंभं न्यस्याग्रतो हरेः।
तत्र तस्मात् समावाह्य संहारक्रममाश्रयन्।।२२।।
अभ्यर्च्य कुम्भमर्ध्याद्यैर्वेदवाद्यपुरस्सरम्।
आदाय कुंभमर्चाभिः अन्याभिः सह देशिकः।।२३।।
प्रादक्षिण्येन तद्धाम्नः बालसद्म प्रविश्य च।
कर्मार्चादीनि बिम्बानि तत्र स्थाने निवेशयेत्।।२४।।
ततः कुंभगतां शक्तिं बालबिम्बे नियोजयेत्।
पूर्ववत्सकलं कुर्यात् सान्निध्यं याचयेत्ततः।।२५।।
भगवन् पुनरुद्धारः तव धाम्नश्च वर्ष्मणः।
यावत्समाप्यते तावत् सान्निध्यमिह आचर।।२६।।

बालबिम्ब प्रतिष्ठा आराधन क्रम

अंकुरार्पण करें। तब प्रतिसर बन्धन करें। तब जलाधिवास आदि सभी कर्मों को पूर्ववत् करें। बालालय के मध्य में या दिव्य या मानुष आलय में एक हाथ उन्नत वेदी बनाकर उस पर मूर्ति को रखें। 'मूलमन्त्र' से विधिवत् रत्न न्यास करें। पूर्ववत् प्रोक्षण करके मूल आलय में आयें। मूल मूर्ति का पूजन करके हरि के आगे कुंभ स्थापित करें। उसमें उसका आवाहन करके संहार क्रम का आश्रय ग्रहण करके कुंभ का अर्चन करें। वेदवाचन, वाद्य वादन कराते हुए अर्चा कुंभ को लेकर देशिक दूसरों के साथ प्रदक्षिणा क्रम से बाल मन्दिर में प्रवेश करें। वहाँ कर्मार्चादि मूर्तियों के स्थान में उसका निवेश करें। तब कुंभगता शक्ति को बालबिम्ब में नियोजित करें। सभी कर्म पूर्ववत् करके सान्निध्य की याचना करें। इसके लिये इस श्लोक का पाठ करें—

भगवन् पुनरुद्धारः तव धाम्नश्च वर्ष्मणः।
यावत्समाप्यते तावत् सान्निध्यमिह आचर।।

इति प्रार्थ्य ततो देवम् अङ्गैः साकं समर्चयेत्।
वैकल्यरहितान् सर्वान् परिवारान् समर्चयेत्।।२७।।
विकलानर्पयेद्देवान् देवपादारविन्दयोः।
लुप्तानामपि पीठानां परिवारवदिष्यते।।२८।।
आश्रितानां तु पार्थक्यं भक्तानां परिवारवत्।
देवीनां च श्रियादीनां सर्वासां परिवारवत्।।२९।।
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं यथापूर्वं समाचरेत्।
अथवा नित्यमेव स्यात् जीर्णोद्धारसमाप्तये।।३०।।
महोत्सवं प्रकुर्वीत यद्यन्नित्यं पुरातनम्।
स्थण्डिले बलिदानं स्यात् सतायां पीठमस्तके।।३१।।

इस प्रकार प्रार्थना करके देव के अंगों का साक समर्चन करें। वैकल्य रहित सभी परिवार मूर्तियों का पूजन करें। टूटे-फूटे देवबिम्बों को देव के चरण कमलों में अर्पित करें। लुप्त पीठों में परिवार के समान अर्चन करें। आश्रितों और पार्थक्य भक्तों का पूजन परिवार के पूजन के समान करें। लक्ष्मी आदि सभी देवियों का पूजन परिवार पूजन के समान करें। नित्य नैमित्तिक काम्य कर्मों का सम्पादन पूर्ववत् करें। अथवा नित्य पूजन के समान जीर्णोद्धार कर्म करें। यदि नित्य पुरातन महोत्सव करें, तो स्थण्डिल में बलिदान करें या पीठ के मस्तक पर करें।

जीर्णबिम्बप्रक्षेपप्रकार:

एवं समाप्य मेधावी गत्वा गर्भगृहं गुरुः।
हैमं लाङ्गलमादाय मोचयेत्पीठबन्धनम्।।३२।।
कुशैः काशैस्तृणैश्चान्यैः तथा गोवालनिर्मितः।
रज्जुभिर्वेष्टयद्बिम्बं रथमारोपयेत्ततः।।३३।।
ग्रामं प्रदक्षिणीकृत्य समुद्रं वा सरोवरम्।
अगाधं चाप्यशोष्यं च सलिलं यत्र नित्यशः।।३४।।
तत्र गत्वा क्षिपेद्बिम्बं यद्वा भूमौ खनेदपि।

जीर्ण बिम्ब प्रक्षेप प्रकार

इस प्रकार कर्म सम्पादन के बाद मेधावी गुरु गर्भगृह में जायें। सोने का लांगल लेकर पीठ बन्धन को खोल दें। कुश, काश, तृणादि से तथा गाय के बछड़े के बाल से निर्मित धागे से बिम्ब को वेष्टित करके रथ में रखकर गाँव

की प्रदक्षिणा करके समुद्र या सरोवर के अगाध जल में अथवा जहाँ नित्य जल रहता हो वहाँ जाकर बिम्ब को डाल दें। अथवा भूमि खोदकर गाड़ दें।

संस्कारानन्तरं पुन: प्रतिष्ठाक्रम:

ततः स्नात्वा विधानेन सन्धाने यदि कर्मणि।।३५।।
सन्धानाय गुरुर्दद्यात् बिम्बं देवस्य शार्ङ्गिणः।
कारयित्वा पुनः सृष्टिं सन्धानं वा यथाविधि।।३६।।
जलाधिवासाद्यखिलं सर्वं कर्म यथापुरम्।
पुनः सृष्टौ प्रकुर्वीत सन्धाने नैतदिष्यते।।३७।।
सम्प्रोक्षणं प्रकुर्वीत बालशक्तिं निवेशयेत्।
एवं सम्प्रोक्ष्य विधिवत् कर्मबिम्बैः समन्वितम्।।३८।।
अभ्यर्चयेद्यथापूर्वं भगवन्तं मुनीश्वर।

।। इति भार्गवतन्त्रे एकोनविंशोऽध्याय:।।

संस्कार के बाद पुनः प्रतिष्ठा क्रम

तब विधान से सन्धान कर्म के लिये स्नान करके गुरु विष्णु की मूर्ति को बिम्ब प्रदान करें। पुन: सृष्टि सन्धान यथाविधि करें। पूर्ववत् जलाधिवास आदि सभी कर्म करें। पुन: सृष्टि सन्धान इष्ठ नहीं है। सम्प्रोक्षण करके बालशक्ति का निवेश करें। कर्मबिम्ब का भी प्रोक्षण करें। पूर्ववत् भगवत का अर्चन करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में उन्नीसवाँ अध्याय सम्पूर्ण ।।

विंशोऽध्यायः

स्नपनविधिनिरूपणाध्यायः

स्नपनभेदनिर्देशः

श्रीरामः

स्नपनं देवदेवस्य बहुधा परिकीर्त्यते।
तत्र ब्राह्मं विशेषं स्यात् सर्वकर्मसु योजयेत्।।१।।
अथवा वैष्णवं स्नानं यद्वा पुण्यं समाचरेत्।
श्रेष्ठमध्यकनिष्ठानि त्रिविधानि महामुने।।२।।

स्नान विधि निरूपण

स्नान के भेद के वर्णन

श्री भार्गव राम ने कहा कि हे महामुने! देव के स्नान विधान बहुत प्रकार के वर्णित हैं। उनमें ब्राह्म स्नान विशेष है। सभी कर्मों में इसी को योजित करें। अथवा वैष्णव स्नान या पुण्य स्नान का समाचरण करें। ये स्नान श्रेष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ तीन प्रकार के होते हैं।

ब्राह्मादिस्नपनलक्षणम्

ब्राह्मं तु पञ्चविंशद्भिरष्टोनैर्मध्यमं भवेत्।
एतत्तु वैष्णवं प्रोक्तं पुण्यं तु नवभिर्घटैः।।३।।

ब्राह्मादि स्नान के लक्षण

ब्राह्म स्नान पच्चीस घटों के जल से उत्तम होता है। मध्यम स्नान आठ घटों से होता है। वैष्णव स्नान नव घटों के जल से होता है।

स्नपनपीठकल्पनप्रकारः

स्नानमण्डपभूमध्ये कल्पयेद्वेदिकां गुरुः।
पञ्चहस्तसमायामविस्तारां लोचनप्रियाम्।।४।।
प्रागग्राण्युदगग्राणि चतुर्दश निपातयेत्।
चन्दनार्द्राणि सूत्राणि कोष्ठान्येकोनसप्ततिः।।५।।
तत्र ब्राह्मं च दैवं च मानुषं च पदत्रयम्।
एकान्तरान्तरं तेषु वीथ्यर्थं परिमार्जयेत्।।६।।
ब्राह्मे तु वीथिकां हित्वा नवैव कलशास्पदम्।
दैवे तु कलशाः स्थाप्या अष्टौ दिक्षु विदिक्षु च।।७।।

शिष्टानि परिमार्ज्यानि मानुषेऽष्टौ तथा भवेत्।
परिमार्ज्यानि शिष्टानि धान्यैः पीठं प्रकल्पयेत्।।८।।

स्नान पीठ कल्पन प्रकार

स्नान मण्डप के भूतल मध्य में गुरु वेदी बनावें। इसका आयाम विस्तार पाँच हाथ होता है। इसे लोचन प्रिय बनावें। चन्दन घोल से आद्र सूत्र से पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर चौदह सूत्रपात करें। इससे वह एक सौ उनहत्तर कोष्ठ बनते हैं। उनसे ब्राह्म, दैव और मानुष तीन पद कल्पित करें। उनमें वीथि के लिये एक के बाद एक कोष्ठ मिटा दें। ब्राह्म वीथि को छोड़कर नव कलश पद बनावें। मध्य में ब्राह्म कलश और आठों दिशा विदिशाओं में आठ कलश स्थापित करें। शेष कोष्ठों को मिटाने के बाद मानुष कोष्ठ आठ होते हैं। शेष को मिटाकर आठ धान्यपीठ स्थापित करें।

ब्राह्मे पदे स्थापनीयानि स्नपनद्रव्याणि

घृतमुष्णोदकं रत्नं फलं लोहं यथाक्रमम्।
स्नानगन्धाक्षतयवं ब्राह्मेऽष्टौ मध्यतः क्रमात्।।९।।

ब्राह्म पद में स्थापनीय स्नपन द्रव्य

घी, गर्मजल, रत्न, फल, लोह, स्नान गन्ध, अक्षत, यव ये आठ द्रव्य ब्राह्म कलश के लिये होते हैं।

दैवपदे स्थाप्यानि स्नपनद्रव्याणि

दिव्ये पदाष्टके स्थाप्यं पाद्यं दधि ततः परम्।
अर्घ्यं पाद्यं च पानीयं ततो मधुघटं न्यसेत्।।१०।।
पञ्चगव्यं कषायं च क्रमेणाष्टौ यथाक्रमम्।

देव पद में स्थापनीय स्नपन द्रव्य

आठ देव पदों में स्थाप्य द्रव्य पाद्य वही अर्घ्य पाद्य पानीय तब मधु घट का न्यास करें। इसमें पंचगव्य कषाय क्रम से आठों में डालें।

मानुषे पदे स्थाप्यानि स्नपनद्रव्याणि

मानुषे विन्यसेत् प्राच्यां गन्धोदकघटं गुरुः।।११।।
दक्षिणस्यामिक्षुरसं नारिकेलाम्बु वारुणे।
शान्तितोयमुदीचीने ज्वलने मङ्गलोदकम्।।१२।।
सर्वौषधिरसं कुंभं यातुधाने निवेशयेत्।
सर्वगन्धोदकं वायौ रौद्रे मूलौषधिं न्यसेत्।।१३।।

मानुष पद में स्थापनीय स्नपन द्रव्य

मानुष में पूर्व में गन्धोदक घट, दक्षिण में ईख रस, पश्चिम में नारियल पानी, उत्तर में शान्ति जल, आग्नेय में मंगल जल, नैर्ऋत्य में सर्वौषधि रस, वायव्य में सर्वगन्धोदक और ईशान में मूल औषधि का न्यास करें।

रत्नोदकद्रव्यपरिगणनम्

माणिक्यं पद्मरागं च नीलं वज्रं च पुष्यकम्।
प्रवालं मौक्तिकं चैव तथा मरकतं क्षिपेत्।।१४।।
वैडूर्यं नव रत्नानि न्यसेद्रत्नोदके घटे।

रत्नोदक द्रव्य परिगणन

रत्नोदक घट में माणिक्य, पद्मराग, नीलम, हीरा, पुष्पराग, मूंगा, मोती, मरकत, वैडूर्य डालें।

फलोदकद्रव्यपरिगणनम्

कदलीबीजपूराम्रधात्रीबिल्वफलैस्सह ।।१५।।
नालिकेरं च पनसं मातुलुङ्गफलोदके।

फलोदक द्रव्य की गणना

केला, बीजपूर, आम, आमला, बेलफूल, नारियल, कटहल, मोसम्मी के रस फलोदक होते हैं।

लोहोदकद्रव्याणि

सुवर्णं रजतं ताम्रं सीसकं त्रपुकं तथा।।१६।।
कांस्यमायससारं च सप्त लोहघटोदके।
प्रत्येकं निष्कमानानि विन्यसेत्कल्पतन्त्रवित्।।१७।।

लोहोदक द्रव्य

लोहोदक द्रव्य में सोना, चाँदी, ताम्बा, सीसा, त्रपुक, कांसा, मायससार ये सात होते हैं। लोहोदक घट में प्रत्येक की मात्रा निष्क होती है।

मार्जनद्रव्याणि

स्नानकुंभे न्यसेद्धीमान् रजनीसूर्यवर्तिनीम्।
सहदेवीं शिरीषं च सदाभद्रं कुशाञ्चलम्।।१८।।
मार्जनानि षडेतानि मुष्टिमात्राणि वै पृथक्।

मार्जन द्रव्य

स्नान कुंभ में विद्वान रजनी, सूर्यवर्तिनी, सहदेई, शिरीष, सदाभद्र, कुशांचल को एक-एक मुट्ठी डालें।

गन्धोदकद्रव्याणि

चन्दनागरुकुष्ठानि मुरामांसी च कुङ्कुमम्।।१९।।
ह्रीबेरमप्युशीरं च गिरिजं च तथा नव।
गन्धवस्तूनि तत्कुंभे विन्यसेत्पलमात्रतः।।२०।।

गन्धोदक द्रव्य

गन्धोदक कुंभ में चन्दन, अगर, कूठ, मुरामांसी, कुंकुम, ह्रीबेर, खश और गिरिज नव गन्ध वस्तु एक-एक पल की मात्रा में डालें।

षडक्षतद्रव्याणि

नीवाराः वैणवश्शाल्यः प्रियङ्गुष्षाष्टिकास्तथा।
गोधूमाः तण्डुलाश्चैते मुष्टिमात्राः षडक्षताः।।२१।।

षडक्षत द्रव्य

षडक्षत में नीवार, वैणवशाल्य, प्रियंगु, ष्षाष्टिका, गेहूँ, चावल एक-एक मुट्ठी होते हैं।

यवाम्बुद्रव्याणि

यवाश्च व्रीहयश्चापि वेणवश्च इमे त्रयः।
पृथक् कुडवमात्रेण यवाम्बु कलशे न्यसेत्।।२२।।

यवाम्बु द्रव्य

यवाम्बु द्रव्य में यव, व्रीहि (धान), वेणव तीन का एक-एक कुडव यवाम्बु कलश में डालें। कुडव तीन छटाक के बराबर होता है।

पाद्यद्रव्याणि

तुलसीपद्मदूर्वाश्च श्यामाकं चाक्षतं तथा।
विष्णुक्रान्तं बिल्वपत्रं मुष्टिमात्रं पृथक् पृथक्।।२३।।
पलमेकं चन्दनं च पाद्येऽष्टौ विनिवेशयेत्।

पाद्य द्रव्य

पाद्य द्रव्य में तुलसी, कमल, दूर्वा, साँवाँ, अक्षत, विष्णुक्रान्त, बेलपत्रे अलग-अलग एक-एक मुट्ठी एक पल = आठ तोला लगभग सौ ग्राम चन्दन के साथ डालें जाते हैं।

अर्घ्यद्रव्याणि

कुशाग्राक्षतसिद्धार्थतिलपुष्पफलानि च।।२४।।
यवाः पृथङ्मुष्टिमात्राः पलमात्रं च चन्दनम्।
अष्टौ द्रव्याण्यर्घ्यकुंभे विन्यसेत् फलितं फलम्।।२५।।

अर्घ्य द्रव्य

अर्घ्य द्रव्य में कुशाग्र, अक्षत, पीला सरसों, तिल, पुष्प, फल, मुट्ठी भर यव, सौ ग्राम चन्दन होते हैं। इन्हें अर्घ्य कुंभ में डालें, तो फलित फल प्राप्त होता है।

आचामभाजने निक्षेप्यद्रव्याणि

एलालवङ्गतक्कोलजातिकर्पूरचम्पकाः ।
चन्दनं कुसुमान्येवमष्टौ आचामभाजने।।२६।।
पलार्धपरिमाणानि प्रत्येकं तत्र निक्षिपेत्।

आचमन पात्र में निक्षेप्य द्रव्य

आचमन पात्र में इलायची, लवंग, तक्कोल, जाति, कपूर, चंपा, चन्दन अन्य पुष्प ये आठ डालें जाते हैं। प्रत्येक की मात्रा चार तोला होती है।

पञ्चगव्यद्रव्याणि

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिरिमानि वै।।२७।।
चतुष्पलानि प्रत्येकं पञ्चगव्यघटे क्षिपेत्।

पंचगव्य द्रव्य

पंचगव्य में गोमूत्र, गोबर, गोदुग्ध, दही, गोघृत प्रत्येक के चार पल बराबर ३२ तोला पंचगव्य घट में डालें जाते हैं।

कषायोदकद्रव्याणि

कषायाम्बुघटे द्रव्याण्येतानि विनिवेशयेत्।।२८।।
शमीपलाशखदिरबिल्वाश्वत्थविकङ्कताः ।
औदुम्बरश्च न्यग्रोधस्तेषामष्टौ त्वचः स्मृताः।।२९।।

कषायोदक द्रव्य

काषाय जल घट में इन द्रव्यों को डालें। शमी, पलाश, खैर, बिल्व, पीपल, विकंकत, गूलर, बरगद आठ के छाल डालें।

शान्तिकुंभद्रव्याणि मङ्गलोदकद्रव्याणि

तुलसीवेणुनीवारयवाश्च श्वेतसर्षपाः।
तिलाश्च षट् शान्तिकुंभे द्रव्याणि परिकल्पयेत्।।३०।।
प्रत्येकं मुष्टिमात्राणि चूर्णिताश्च त्वचस्तथा।
इन्द्रवल्यङ्कुराश्वत्थपल्लवं च कुशेशयम्।।३१।।

एकपत्राम्बुजं कुष्ठं कुंकुमं रोहिणीद्रुमम्।
पुण्यास्सुमनसश्चाष्टौ यूथिका मल्लिका अपि।।३२।।
त्रीण्युत्पलानि जातिश्च चम्पकं केतकी तथा।
द्रव्याणि पञ्चदश च न्यसेत् मङ्गलपाथसि।।३३।।

शान्ति कुंभ के द्रव्य और मंगलोदक द्रव्य

शान्ति कुंभ में तुलसी, बाँस, नीवार, यव, पीला सरसों और तिल छ: द्रव्यों को डालें। प्रत्येक की मात्रा एक मुट्ठी है। त्वचा सहित इन्हें कूटकर चूर्ण डालें। मंगल घट में एकपत्र, कमल, कूठ, कुंकुम, रोहिणी, द्रुम, पुण्या, सुमन इन आठों के साथ यूथिका, मल्लिका, तीन उत्पल, जाति, चम्पा, केतकी और द्रव्य कुल पन्द्रह वस्तुओं को डालें।

सर्वौषधिजलद्रव्याणि

मांसी कुष्ठं हरिद्रे द्वे मुरा शैलेयचम्पके।
मुस्ता वचा च कर्पूरं प्रत्येकं पलमात्रकम्।।३४।।
पिष्ट्वा सर्वौषधिजले दशैतानि विनिक्षिपेत्।

सर्वौषधि जल के द्रव्य

जटमांसी, कूठ, हल्दी द्वे, मुरा, शिलाजीत, चम्पा, मुस्ता, वचा, कपूर इन दसों को एक-एक पल पीसकर सर्वौषधि कुंभ जल में डालें।

सर्वगन्धोदकद्रव्याणि

कर्पूरं कुंकुमं कुष्ठं मांसी मलयजं मुरा।।३५।।
प्रियङ्गुकेसरं मुस्ता तमालं नागकेसरम्।
मूलद्वयं च कच्चोरं सुरसर्पिककेसरम्।।३६।।
उशीरं तगरं लोध्रं तथैव हरिचन्दनम्।
अगरूद्वासितं कुष्ठं कालेयं ग्रन्थिपल्लवम्।।३७।।
मुकुलं चम्पकस्येति प्रत्येकं पलसम्मितम्।
चूर्णीकृत्य न्यसेत्तत्र सर्वगन्धोदके घटे।।३८।।

सर्व गन्धोदक द्रव्य

सर्व गन्धोदक घट में एक पल = आठ तोला = ८० ग्राम के तौल में प्रत्येक औषधि का चूर्ण डालें। कपूर, कुंकुम, कूठ, जटमांसी, श्वेत चन्दन, मुरा, प्रियंगु, केसर, मुस्ता, तमाल, नागकेसर, मूलद्वय, कच्चोर, सुरसर्पि केसर, खश, तगर, लोध्र, हरिचन्दन, अगरवासित कूठ, कालेय, ग्रन्थि पल्लव, मुकुल चम्पक।

मूलौषधिद्रव्याणि

व्याघ्री सिंही बलाकाग्नी शरपुंखा शतावरी।
बिल्वमूलं वचा शुण्ठी कोरण्डं शतमूलिका।।३९।।
प्रत्येकं पलमानाः स्युः पिष्ट्वा कुंभे विनिक्षिपेत्।
मूलौषध्यः इमाः प्रोक्ताः देवस्नपनकर्मणि।।४०।।

मूल औषधि द्रव्य

देव स्नपन कर्म में निम्नांकित मूल औषधियाँ होती हैं—व्याघ्री, सिंही, बलाकांग्नी, शरपुंखा, शतावर, बिल्वमूल, वचा, सोंठ, कोरण्ड, शतमूली इनके एक पल को पीसकर कुंभ में डालें।

मकरन्दादिस्नपनद्रव्यपरिमाणम्

मकरन्ददधिक्षीरपञ्चगव्यघृतान्यपि ।
प्रत्येकं द्रोणमानीय यद्वा शिवमथाढकम्।।४१।।
द्रव्यकुंभानि सर्वाणि तत्प्रमाणानि कल्पयेत्।

मकरन्द आदि स्नपन द्रव्य परिमाण

मकरन्द, दही, दूध, पंचगव्य, घी और अन्य एक-एक द्रोण शिव स्नान के लिये एक आढ़क द्रव्य को कुंभ में डालें।

चूर्णकुंभद्रव्याणि

चूर्णकुंभं निशाचूर्णैः कण्ठदघ्नैः प्रपूरयेत्।।४२।।

चूर्ण कुंभ के द्रव्य

चूर्ण कुंभ में हल्दी चूर्ण, दही में घट को कण्ठ तक भर दें।

मृत्तिकोदकद्रव्याणि

पुण्यक्षेत्रे नदीतीरे पर्वते पुलिने ह्रदे।
निर्झरे सङ्गमेऽशोष्ये वेदिकोर्वरयोस्तथा।।४३।।
शालिक्षेत्रे देवखाते वृषशृङ्गे च हस्तिनः।
वराहधृष्टे वल्मीके कुलीरावसथे तथा।।४४।।
नलिन्यां दीर्घिकायां च स्थिताश्चैकोनविंशतिः।
पृथक् च मुष्टिमात्राभिः पूरयेन्मृत्तिकोदकम्।।४५।।

मृत्तिकोदक द्रव्य

मृत्तिकोदक घट में एक-एक मुट्ठी निम्न स्थान की मिट्टी डालें। पुण्य क्षेत्र, नदी तट, पर्वत, सरोवर तट, निर्झर, कभी न सूखने वाले संगम वेदी,

उर्वरा भूमि, शालिक्षेत्र, देवखात, वृष शृंग उत्पाटित, हाथी से उखाड़ी, सूअर से उक्टी भूमि, दीमक के टीले, कुलीर, अवसथ, नलिनी, दीर्घिका स्थित कुल उन्नीस स्थानों की एक-एक मुट्ठी मिट्टी घट में डालें।

प्रतिसरबन्धः शयनक्रमश्च

अङ्कुराण्यर्पयेत्पूर्वं कुर्यात्प्रतिसरं करे।
एकबेरे मूलबेरे बाहुल्ये स्नानकौतुके।।४६।।
शय्यायां शाययेद्बिम्बं स्नानीयमितरद्यदि।
कूर्चद्वारेण शयनं प्रातरुत्थाप्य देशिकः।।४७।।

प्रतिसर बन्धन शयन क्रम

अंकुरार्पण के पहले देव के हाथ में प्रतिसर बन्धन करें। एक मूर्ति होने पर मूल मूर्ति के हाथ में, बहुत मूर्तियों के होने पर स्नान कौतुक बाँधें। मूर्ति को शय्या पर सुला दें। यदि अन्य बिम्बों का स्नान कराना हो, तब कूर्च द्वार में शयन करावें। सबेरे देशिक उन्हें उठा दें।

स्नानमण्डपे स्नपनबिम्बस्थापनं कलशस्थापनादिकं च

द्वारतोरणकुंभादीन् समभ्यर्च्य यथापुरम्।
द्वारेष्वध्ययनं नृत्तं गीतं वाद्यं प्रवर्तयेत्।।४८।।
स्नपनप्रतिमां पश्चात् स्थापयेत्स्नानमण्डपे।
पुण्याहं वाचयेत्पश्चात् प्रोक्षयेत्कलशानपि।।४९।।
स्नानीयान्यपि वस्तूनि कलशस्थापनं चरेत्।
'इन्द्रं नत्वे'ति मन्त्रेण तन्तुभिर्वेष्टनं भवेत्।।५०।।
तत्तत्स्थानेषु कलशान् स्थापये'न्मूलविद्यया'।
'सर्वमन्त्रेण' कुंभेषु द्रव्यैरम्बुप्रपूरणम्।।५१।।
कूर्चेन पल्लवन्यासो यथानेत्रमनोहरः।
'अस्त्रमन्त्रेण' तान् कुंभान् शरावैरपिधापयेत्।।५२।।
नारिकेलफलैः तेषामलङ्कारः शुभोदयः।
वासोभिर्वेष्टयेत्कुम्भान् मण्डयेच्चन्दनाक्षतैः।।५३।।

स्नान मण्डप में स्नपन बिम्ब स्थापन, कलश स्थापन आदि

द्वार तोरण कुंभादि का अर्चन पूर्ववत् करें। द्वार में अध्ययन, नृत्त, गीत, वाद्य बजवायें। इसके बाद स्नपन प्रतिमा को स्नान मण्डप में स्थापित करें। तब पुण्याहवाचन करके कलशों का प्रोक्षण करें। स्नानीय अन्य वस्तुओं से

कलश स्थापन करें। 'इन्द्र नत्वे' मन्त्र से कलश में धागा लपेटें। मूल विद्या से उनके निर्दिष्ट स्थानों में कलश स्थापित करें। 'सर्वमन्त्र' से कलशों को द्रव्यों और जल से प्रपूरित करें। कूर्च से पल्लव न्यास मनोहर रूप में करें। 'अस्त्र मन्त्र' से उन कुंभों को ढक्कन से ढक दें। ढक्कनों पर अलंकृत नारियल फल रखकर उनका मण्डन चन्दन आदि से करें।

स्नपनकलशेषु तत्तद्देवानामावहनादिक्रमः

वेदतुर्यादिघोषैश्च घोषिते च दिगन्तरे।
देवतावाहनं कुर्यात् कलशेषु गुरूत्तमः।।५४।।
घृतकुंभे वासुदेवः पुरुषश्चोष्णवारिणि।
फलतोये तु सत्यः स्यात् स्नानेऽच्युत उदाहृतः।।५५।।
अनन्त अक्षते कुंभे केशवो मणिवारिणि।
लोहे नारायणो देवो माधवो गन्धवारिणि।।५६।।
यवोदके तु गोविन्दः पाद्ये विष्णुः प्रकीर्तितः।
मधुहन्ताऽर्घ्यकलशे आचामे तु त्रिविक्रमः।।५७।।
वामनः पञ्चगव्ये च श्रीधरो दधिभाजने।
दुग्धकुंभे हृषीकेशः पद्मनाभो मधुन्यपि।।५८।।
दामोदरः कषायाम्भस्येवं कृत्वाथ मानुषे।
गुडकुम्भे वराहस्स्यान्नृसिंहश्चैक्षवोदके।।५९।।
श्रीधरो नालिकेरोदे हयास्यः शान्तिवारिणि।
वासुदेवो मङ्गलोदे सर्वौषध्यां सङ्कर्षणः।।६०।।
प्रद्युम्नः सर्वगन्धाप्सु मूलौषध्यामनिरुद्धः।
एवं ब्राह्मे तु कुंभानां देवताः परिकीर्तिताः।।६१।।
चूर्णकुंभे भवेल्लक्ष्मीः मृत्तिकाकलशे मही।
एवमावाहयेद्धीमान् योगपीठपुरस्सरम्।।६२।।
तत्तन्नामचतुर्थ्यैव नमः प्रणवयुक्तया।
अष्टावरं समुच्चार्य तत आवाहनं चरेत्।।६३।।
अर्घ्यादि प्रणवान्तं तं समभ्यर्च्य यथाविधि।

स्नपन कलशों में उनके देवों का आवाहनादि क्रम

वेदघोष और बाजों से दिशाओं को गूंजाते हुए गुरु कलशों में देवता का आवाहन करें। घृतकुंभ में वासुदेव, गर्म जल में पुरुष, फलों के जल में

सव्य, स्नान जल में अच्युत, अक्षत कुंभ में अनन्त, मणिजल में केशव, लौह जल में नारायण देव, गन्ध जल में माधव, यवोदक में गोविन्द, पाद्य में विष्णु, अर्घ्य कलश में मधुहन्ता, आचमन में त्रिविक्रम, पंचगव्य में वामन, दधि भाजन में श्रीधर, दूधकुंभ में हृषिकेश, मधुकुंभ में पद्मनाभ, कषाय जल में दामोदर, कषाय जल में मानुष, गुड़ कुंभ में वराह, ऐक्षव (ईखरस) जल में नृसिंह, नारियल जल में श्रीधर, शान्ति जल में हयग्रीव, मंगलोदक में वासुदेव, सर्वौषधि में संकर्षण, सर्वगन्ध में प्रद्युम्न, मूल औषधि जल में अनिरुद्ध और ब्राह्म कुंभ में देव को आवाहित करें। चूर्ण कुंभ में लक्ष्मी, मृत्तिका कलश में वसुधा का आवाहन योगपीठ बनाकर करें। इनके चतुर्थ्यन्त नाम के पहले ॐ और अन्त में नम: लगाकर आठ बार उच्चारण करके आवाहन करें। प्रणवान्त अर्घ्यादि से यथाविधि उनका पूजन करें।

अग्निहोममन्त्राणां निर्देश:

अग्निं संस्कृत्य विधिवत् तत्राराध्य श्रिय: पतिम्।।६४।।
'मधुवाता' 'मधुनक्तं' 'मधुमान्नो' 'वनस्पति'।
'वेदाहं' 'विष्णोर्नुकं' च 'ओषधय: संवदन्ते'।।६५।।
नारायणानुवाकश्च तथा 'या ओषधीरिति'।
विष्णुगायत्रिया चापि 'तद्विष्णोरि'त्यनन्तरम्।।६६।।
'न ते विष्णुरि'ति श्रुत्या 'विष्णो: कर्मेति' मन्त्रत:।
'दधिक्राव्णेति' यजुषा 'आप्यायस्वेति' वै ऋचा।।६७।।
'मधुवाता' 'ओषधयस्त्वं' 'विष्णुर्या फलिनी'रिति।
'शन्नोदेवीश्च' सावित्री त्रातारमिति देशिक:।।६८।।
महाव्याहृतिभि: पश्चात् 'गन्धद्वाराम'नन्तरम्।
शतधारं वसूनां च ततो घृतं मिमिक्षिरे।।६९।।
सर्पिषा जुहुयादेतैर्मन्त्रै: सम्पातमाहरेत्।
सेचयेच्चापि कुंभेषु देवमग्नेर्विसर्जयेत्।।७०।।

अग्नि होम मन्त्रों का निर्देश

अग्नि का संस्कार विधिवत् करके उसमें लक्ष्मीपति का आराधन करें। 'मधुवाता', 'मधुनक्त', 'मधुमान्नो', 'वनस्पति', 'वेदाहं', 'विष्णुर्नुकं', 'ओषधय: संवदन्ते', नारायण अनुवाक, 'या ओषधीरिति', 'विष्णुगायत्री', 'तद्विष्णुरिति', 'न ते विष्णुरिति' श्रुति, 'विष्णुकर्मेति' मन्त्र, 'दधिक्राव्णेति', यजुषा, 'आप्यायस्वेति ऋचा', 'मधुवाता', 'ओषधयस्त्व', 'विष्णुर्या फलिनी', 'शन्नोदेवी' सावित्री त्रातारमिति,

महाव्याहृति से, 'गन्धद्वाराम', शतधारा वसूनां, घृतं मिमिक्षिरे मन्त्रों से गाय की घी से हवन करें। सम्पात घृत को इकट्ठा करें। इससे कुंभों का सेचन करें। अग्नि में देव का विसर्जन करें।

ब्राह्मस्नपनविधिनिर्देश:

ऋत्विग्भि: सहित: कुंभान् शान्तिमन्त्रैश्च पञ्चभि:।
अभिमन्त्र्यास्त्रमन्त्रेण वस्त्रेणाच्छाद्य देशिक:।।७१।।
दन्तकाष्ठं गन्धतैलं दद्यादामलकं तत:।
गण्डूषाचमने च द्वे देवायार्घ्यादि दापयेत्।।७२।।
पौरुषेणैव सूक्तेन कलशै: स्नापयेद्धरिम्।
वस्त्रयज्ञोपवीतादि नैवेद्यान्तं समर्चयेत्।।७३।।
पूर्वं कूर्चेन सम्प्रोक्ष्य पश्चात्कुंभाभिषेचनम्।
एतद्ब्राह्मं भवेत् स्नानम्

ब्राह्म स्नपन विधि निर्देश

ऋत्विजों सहित देशिक पंच शान्ति मन्त्र से कुभों का अभिमन्त्रण करें। अस्त्र मन्त्र से कुंभों को वस्त्र से ढक दें। दतुवन, गन्ध, तेल, आमला, गण्डूष दो आचमन देकर देव को अर्घ्य आदि देवें। कलश जल से हरि का स्नान पौरुष सूक्त से करें। वस्त्र यज्ञोपवीत से लेकर नैवेद्य अर्पण तक के कर्म से पूजन करें। पहले कूर्च से सम्प्रोक्षण करें, तब कुंभ जल से अभिषेक करें। ब्रह्मस्नान इस प्रकार से होता है।

वैष्णव-स्नपनविधिनिर्देश:

वैष्णवं शृणु वक्ष्यते।।७४।।
ब्राह्मे दैवे च तान्कुंभान् संस्थाप्यावाह्य पूर्ववत्।
वैष्णवेनैव सूक्तेन जुहुयात् शोडशाहुती:।।७५।।
अन्ते च विष्णुगायत्र्या हुत्वा सम्पातसेचनम्।
अन्यत् सर्वं यथापूर्वं न विशेषोऽस्ति कश्चन।।७६।।

वैष्णव स्नान विधि

अब वैष्णव स्नान को कहता हूँ। ब्राह्म और देव कुम्भों में उन्हें पूर्ववत् आवाहित स्थापित करें। 'वैष्णव सूक्त' से सोलह आहुति डालें। अन्त में विष्णुगायत्री से हवन करके सम्पात सेचन करें। अन्य सभी पूर्ववत् करें। विशेष कुछ नहीं है।

पुण्यस्नपनविधिनिर्देशः

अथ पुण्यं प्रवक्ष्यामि स्नपनं शार्ङ्गधन्वनः।
दिव्यं च मानुषं त्यक्त्वा ब्राह्मे नवघटास्पदम्।।७७।।
घृतं ब्राह्मे न्यसेत् कुंभं प्राच्यां पाद्यघटं न्यसेत्।
अर्घ्यकुंभं पदे याम्ये आचामाम्बु च वारुणे।।७८।।
पञ्चगव्यमुदीचीने आग्नेये दधिभाजनम्।
नैर्ऋते तु पयः कुंभं मारुते मधुभाजनम्।।७९।।
कषायमीशकोणे च द्रव्यदेवाश्च पूर्ववत्।
अद्भ्यः सम्भूत इति च वेदाहं च प्रजापतिः।।८०।।
यो देवभ्यः ऋचं ब्राह्मं यद्वाग्देवीं ततः परम्।
..................चत्वारि श्रद्धयेति च।।८१।।
नवभिर्जुहुयादग्नौ संपाताज्येन सेचयेत्।
अन्यत्सवं यथापूर्वं कथितं कलशोद्भव।।८२।।

पुण्य स्नपन विधि निर्देश

अब मैं श्रीविष्णु के पुण्य स्नपन को कहता हूँ। दिव्य और मानुष को छोड़कर ब्राह्म में नव कलश स्थापित होते हैं। मध्य में ब्राह्म कुम्भ घृत युक्त होता है। पूर्व में पाद्य घट, दक्षिण में पाद्य घट, पश्चिम में आचमन घट, उत्तर में पंचगव्य घट, आग्नेय में दधि घट, नैर्ऋत्य में दूध घट, वायव्य में मधु घट, ईशान में काषाय घट स्थापित होते हैं। उनमें द्रव्य और देव पूर्ववत् होते हैं। 'अद्भ्यः संभूत' और 'वेदाहं' से प्रजापति को स्थापित करें। 'यो देवेभ्यः' ब्राह्म ऋचा से वाग्देवी को स्थापित करें। नवों कुण्डों की अग्नि में हवन करें। सम्पात आज्य से सेचन करें। अन्य सभी पूर्ववत् होते हैं।

हरिद्रामृत्तिकास्नपनमन्त्रनिर्देशः

'श्री सूक्तेन' भवेद्धोमो हरिद्रास्नानकर्मणि।
हवनं 'भूमिसूक्तेन' मृत्तिकास्नपने सति।८३।।

हल्दी मिट्टी से स्नपन मन्त्र निर्देश

हल्दी स्नान कर्म में श्रीसूक्त से हवन होता है। मृत्तिका स्नान में भूमिसूक्त से हवन होता है।

महास्नपनभेदाः

वासुदेवं परिमेष्ट्यं प्राजापत्यमिति त्रिधा।
महास्नपनमेतत्तु प्रायश्चित्तेषु कर्मसु।।८४।।

महास्नपन के भेद

प्रायश्चित्त के महास्नपन में वासुदेव, ब्रह्मा और प्रजापति तीन का स्नान होता है।

वासुदेवस्नपनविधिः

ब्राह्माणां द्रव्यकुंभानामष्टावष्टौ समन्ततः।
शुद्धोदकुंभाः संस्थाप्याः तेषां संख्या शतद्वयम्।।८५।।
द्रव्यकुंभार्चनं पूर्वं कथितं कलशोद्भव।
सर्वशुद्धोदकुंभानां देवो नारायणः स्मृतः।।८६।।
शुद्धोदकेषु सर्वेषु मौक्तिकं राजतं तु वा।
विन्यसेद्धोममन्त्रस्तु पूर्वमेवोदितं मुने।।८७।।
तैर्हुत्वा सर्पिषा पश्चात् द्वादशाक्षरविद्यया।
सहस्रमष्टसहितं हुत्वा सम्पात होमयेत्।।८८।।
अन्यत् सर्वं यथापूर्वं कारयेत्कर्मकोविदः।
एतत्तु वासुदेवाख्यं स्नपनं सर्वकामदम्।।८९।।

वासुदेव स्नपन विधि

ब्राह्म स्नान के आठों कुंभों में आठ-आठ द्रव्य होते हैं। दो सौ शुद्ध जल के घट स्थापित होते हैं। द्रव्य कुंभ का अर्चन पहले कथित है। सभी शुद्ध जल कुंभों के देव नारायण होते हैं। शुद्धोदक सभी कुंभों में मोती या चाँदी का निवेश पूर्वकथित हवन मन्त्रों से करें। इसके बाद द्वादशाक्षर विद्या के पाठ से एक हजार आठ हवन घी से करें। सम्पात घी से भी हवन करें। कर्म विशेषज्ञ और सभी कुछ पूर्ववत् करें। इस प्रकार के वासुदेव का स्नपन सभी इच्छाओं को पूरा करता है।

पारमेष्ठ्यस्नपनविधिः

पारमेष्ठ्यमथो वक्ष्ये यथावदवधारय।
वैष्णवानां तु कुंभानां परितोऽष्टौ पृथक् पृथक्।।९०।।
एतेषामुदकुंभानां षट्त्रिंशत् सहिताः शतम्।
पूर्ववत् सकलं कृत्वा वैष्णवोक्तविधानतः।।९१।।
नारायणार्चनं कुर्यात् मूलेनैव घटाम्बुषु।
वैष्णवेनैव सूक्तेन गायत्र्यन्तं यथापुरम्।।९२।।

हुत्वा मूलेन मनुना होमश्चाष्टसहस्रकम्।
अन्यत् सर्वं यथापूर्वम् प्राजापत्यमथ शृणु।।९३।।

परमेष्ठी स्नपन विधि

अब परमेष्ठी हवन का वर्णन करता हूँ, यथावत् स्मरण रखिये। वैष्णव कुंभों के सभी ओर अलग-अलग एक सौ तिरेसठ जल कुंभ स्थापित करें। पूर्वोक्त वैष्णव विधान से सभी कर्म पूर्ववत् करें। कुंभ जलों में नारायण का अर्चन उनके मूल मन्त्र से करें। पूर्ववत् वैष्णव सूक्त और गायत्री से अर्चन करें। मूलमन्त्र से एक हजार आठ हवन करें। अन्य सभी कार्य पूर्ववत् होते हैं। अब प्राजापत्य के बारे में सुनिये।

प्राजापत्यस्नपनविधिः

पुण्यस्नपनवत् कार्यम् अष्टावष्टौ समन्ततः।
तेषां तथाकृतेऽम्बूनां द्विसप्तति घटास्तथा।।९४।।
वैष्णवेन षडर्णेन विष्णोरावाहनं भवेत्।
विशेषयजनं तेन अष्टोत्तरसहस्रकम्।।९५।।
अभिषिच्य द्रव्यकुंभैः तैस्तैस्तेषामुपोदकैः।
स्नापयित्वा मण्डयित्वा समभ्यर्च्य यथाविधि।।९६।।
प्रणम्य च परिक्रम्य स्तुत्वा स्तोत्रैरनेकधा।
मन्दिराभ्यन्तरं पश्चात् गमयेत्स्नानकौतुकम्।।९७।।
एकबेरविधानं चेत् स्नपनं मूलकौतुके।

प्राजापत्य स्नपन विधि

पुण्य स्नान के समान आठों कुंभों में आठ द्रव्यों को डालकर अर्चन करें। उनमें वैसा करने के बाद उस जल से बहत्तर घटों में वैष्णव षडक्षर से विष्णु का आवाहन करें। विशेष यजन में एक हजार आठ घट जल से अभिषेचन करें। द्रव्य कुंभों के जल से स्नान कराकर उन्हें स्थापित मण्डित करके यथाविधि अर्चन करें, प्रणाम करें, परिक्रमा करें और अनेक स्तोत्रों से स्तुति करें। इसके बाद मन्दिर में जाकर स्नान कौतुक करें। एक मूर्ति विधान में मूल कौतुक का स्नान होता है।

कौबेरस्नपनविधिः

कौबेरं स्नपनं वक्ष्ये शृणुष्व कलशोद्भव।।९८।।
घृतं मध्ये दध्यनले पीयूषं नैर्ऋते पदे।
मकरन्दं गन्धवहे शर्करा शाङ्करे पदे।।९९।।

नृसिंहः शर्करादेवः इतरेषां यथापुरम्।
'ब्रह्मजज्ञानमि'ति च 'अयाश्चाग्नेति' विद्यया।।१००।।
'असुन्वन्ते'ति च ऋचा 'चानोनियुनि' (?) मन्त्रतः।
'तमीशानमि'तीत्येवं सर्वमन्यत् यथापुरम्।।१०१।।

कौबेर स्नपन विधि

अगस्त्य जी अब मैं कुबेर के स्नपन विधान को कहता हूँ। मध्य में घृत कुंभ, आग्नेय में दही, नैर्ऋत्य में पीयूष, वायव्य में मकरन्द और ईशान में शक्कर कुंभ स्थापित करें। नृसिंह शर्करा देव हैं। अन्य पूर्ववत् हैं। इनका अर्चन 'ब्रह्मजज्ञानमिति', 'अयाश्चाग्नेति विद्या', 'असुन्वन्तेति ऋचा', 'चानोनियुनि' मन्त्र, 'तमीशानम' से करें। अन्य सभी पूर्ववत् होते हैं।

कल्याणस्नपनप्रकारः

अनेनैव प्रकारेण चत्वारिंशच्छुभोदकैः।
स्नानं कल्याणमुदितं व्याहृत्यावाहनं हरेः।।१०२।।
तयैव जुहुयादग्नौ अष्टोत्तरसहस्रकम्।

कल्याण स्नपन प्रकार

व्याहृति से हरि का आवाहन करके चालीस शुभ घट जल से कल्याण स्नान होता है। उसी के समान अग्नि में एक हजार आठ हवन करें।

अपराजितस्नपनस्य ऐन्द्रस्नपनस्य च स्वरूपम्

एकेन घृतकुंभेन स्नानं स्यादपराजितम्।।१०३।।
उपकुंभाष्टकयुतमैन्द्रमेतन्मुनीश्वर ।
'अपराजितमन्त्रेण' होमः स्यादपराजिते।।१०४।।
ऐन्द्रे शुद्धोदकुंभानां देवस्त्रैलोक्यमोहनः।
होमस्त्रैलोक्यमन्त्रेण अष्टोत्तरसहस्रकम्।।१०५।।
अन्यत्सर्वं यथापूर्वं कर्तव्यं कर्मकोविदैः।

अपराजित स्नपन और ऐन्द्र स्नपन स्वरूप

अपराजित स्नान एक ही घृत कुंभ से होता है। ऐन्द्र स्नान आठ उपकुंभों से होता है। अपराजित का हवन 'अपराजित मन्त्र' से होता है। ऐन्द्र में शुद्धोदक कुंभों से त्रैलोक्यमोहन से होता है। त्रैलोक्य मन्त्र से एक हजार आठ हवन होता है। अन्य सभी कार्य कर्मकोविद पूर्ववत् करें।

स्नपनजलस्नानादिफलश्रुतिः

एवं ते स्नपनं प्रोक्तं सप्रकारं महामुने।।१०६।।

देवस्नानाम्बुभिः स्नातः नरके न निमज्जति।
तत्तीर्थं पाति यो भक्त्या पुनर्जन्म न विद्यते।।१०७।।
पादुकां शिरसा बिभ्रन् वैकुण्ठे किङ्करो भवेत्।
चूर्णं धृत्वा तु शिरसि मोदते दिवि देववत्।।१०८।।

स्नपन जल स्नानादि फल श्रुति

महामुने इस प्रकार के सभी स्नपनों को आपसे कहा गया। देव स्नान के जल से स्नान करने वाला नरक में नहीं जाता। जो उस जल को पीता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता। शिर पर पादुका रखने वाला वैकुण्ठ में किंकर होता है। शिर पर चूर्ण धारण करने वाला देवताओं के समान स्वर्ग में आनन्दित रहता है।

स्नपने पादुकातीर्थादिप्रदाननिर्देशः

पादुकातीर्थचूर्णानि गृहीत्वा देशिकोत्तमः।
सिषेविषुभ्यः सर्वेभ्यो भक्तेभ्योऽपि प्रदापयेत्।।१०९।।

।। इति भार्गवंतन्त्रे विंशोऽध्यायः।।

स्नपन में पादुका तीर्थादि प्रदान के निर्देश

पादुका तीर्थ चूर्ण को लेकर देशिकोत्तम सभी सेवकों और भक्तों को प्रदान करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में बीसवाँ अध्याय सम्पूर्ण ।।

एकविंशोऽध्यायः

पवित्रारोपणविधिनिरूपणाध्यायः

कर्मसु जायमानदोषपरिहारविषयक: प्रश्न:

अगस्त्य:

भगवन् देवदेवेश जामदग्न्य कृपानिधे।
नित्यनैमित्तिकादीनां न्यूनाधिक्यादिसंभवे।।१।।
सर्वेषां ब्राह्मणादीनां चातुराश्रम्यमेयुषाम्।
किं नु तत्र समाधानं ब्रूहि मे भक्तवत्सल।।२।।

पवित्रारोपण विधि का निरूपण

कर्म में उत्पन्न दोष परिहार विषयक प्रश्न

अगस्त्य ने कहा—भगवन! देवदेवेश! जामदग्न्य! कृपानिधे! नित्य नैमित्तिक आदि कर्मों में न्यूनाधिक्य होने पर सभी ब्राह्मण आदि चारों वर्णों में रहने वालों के लिये क्या समाधान है? हे भक्तवत्सल! इसे बतलाइये।

पवित्रारोपणस्य दोषपरिहारोपायत्वम्

श्रीराम:

पवित्रयजनं नाम समाराधनमुत्तमम्।
समाप्य पूता: ते सर्वे गलिता: कर्मणो नरा:।।३।।

पवित्रारोपण का दोषपरिहारोपायत्व

श्री भार्गवराम ने कहा—इसके लिये पवित्र यजन नामक समाराधन उत्तम होता है। कर्म दोष समाप्त हो जाता है। मनुष्य पवित्र हो जाते हैं।

पवित्रारोपणार्थ कालनिर्देश:

श्रावणे भाद्रपद्यां वा मासि वाश्वयुजे भवेत्।
शोभने तिथिनक्षत्रे वासरे शुभनन्दिते।।४।।
पवित्रभूषणं कुर्यात् कल्याणं कमलापते:।
अश्विन्यो: श्रवणे पुष्ये रोहिण्यां वा पुनर्वसौ।।५।।
उत्तरत्रितये स्वातौ मृगे मैत्रेऽन्त्यमेऽपि वा।
कुर्यात् पवित्रं कल्याणं यथाविधि मुनीश्वर।।६।।

पवित्रारोपण के लिये काल निर्देश

सावन, भादो या आश्विन मास उत्तम हैं। शुभ तिथि, नक्षत्र, दिन में

शुभनन्दित पवित्रा को धारण करें। इससे लक्ष्मीपति कल्याण करते हैं। अश्विनी, श्रवण, पुष्य, रोहिणी, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, स्वाती, मृगशिरा, मैत्रेऽन्त्य नक्षत्रों में पवित्र कल्याण यथाविधि करें।

पवित्रोपादानद्रव्यसन्नाहः

तन्तून् ब्राह्मणकन्याभिर्निर्मितानथवाऽपणात्।
क्रीतान् वा दोषरहितान् कौशेयान् वा यथावसु।।७।।
आदाय क्षालयित्वाद्भिः मुद्गचूर्णैर्विमिश्रयेत्।
शोषयेदातपे सम्यक् त्रिगुणीकृत्य तान् पुनः।।८।।
पुनश्च त्रिगुणीकृत्य शङ्कोः सूत्रं निवेशयेत्।
अङ्गस्थलानुगुण्येन पवित्रं कारयेत् सुधीः।।९।।
सूत्राण्यष्टोत्तरशतं सर्वत्र परिकीर्तितम्।

पवित्र उपादान द्रव्य समूह

ब्राह्मण कन्या के द्वारा निर्मित सूत या बनिया के अलावा किसी से खरीदा हुआ सूत या दोष रहित रेशमी धागा या यथोपलब्ध सूत ले आयें। उसे जल से धोकर मूंगचूर्ण मिश्रित करें। धूप में सूखा कर सम्यक् रूप से त्रिगुणित करें। दुबारा त्रिगुणित करके उसे शंकु में निवेशित करें। अंगस्थल के अनुसार धीमान पवित्र बनावें। एक सौ आठ सर्वत्र सूत्र परिकीर्तित है।

पवित्रमानं ग्रन्थिसंख्या च

पवित्रमधिवासाय नाभ्यन्तं परिकल्पयेत्।।१०।।
आचार्यदेवपद्मानां शिरोमानं गुरोर्भवेत्।
द्वात्रिंशद्ग्रन्थयस्तेषाम् अनले मेखलासमम्।।११।।
कुंभस्य करकस्यापि कण्ठमानमुदीरितम्।
विंशतिस्सप्त च तयोर्ग्रन्थयः परिकीर्तिताः।।१२।।

पवित्रमान ग्रन्थि संख्या

अधिवास के लिये नाभि तक की पवित्रा बनावें। आचार्य देव पद्मों के लिये गुरु के शिर तक लम्बाई होती है। उनमें बत्तीस गाँठ अग्नि की मेखला के समान बनावें। कुंभ के करक का मान कण्ठ तक होता है। उनमें सत्ताईस गाँठ लगाये जाते हैं।

दशपवित्राणां नामानि लक्षणञ्च

पवित्रसंख्या बेराणां दश तानि वदाम्यहम्।
प्रामाण्यं ग्रन्थिसंज्ञं च अलङ्काराह्वयं तथा।।१३।।

उत्तमाधममध्यानि किरीटाख्यमनन्तरम्।
श्रीवत्सकौस्तुभाह्वानं वनमालाह्वयं दश।।१४।।
प्रामाण्यं नाभिमर्यादं द्वात्रिंशद्ग्रन्थिसंयुतम्।
हृदयान्तं ग्रन्थिसंज्ञं ग्रन्थयः पञ्चविंशतिः।।१५।।
अलङ्कारं तु जङ्घान्तं द्वात्रिंशद्ग्रन्थिनिर्मितम्।
उत्तमं जानुसीमान्तं ग्रन्थयोऽष्टोत्तरं शतम्।।१६।।
अशीति ग्रन्थिसहितमूर्वन्तं मध्यमं भवेत्।
नाभ्यन्तं ग्रन्थयः षष्टिः जघन्यस्य प्रकीर्तितम्।।१७।।
किरीटमानं तन्नाम्नो द्वात्रिंशत् ग्रन्थयः स्मृताः।
श्रीवत्सं स्तनमर्यादं ग्रन्थयः सप्तविंशतिः।।१८।।
कौस्तुभं हृदयान्तं स्यात् द्वात्रिंशद्ग्रन्थिसंयुतम्।
वनमालापवित्रं तु चरणान्तं प्रकल्पयेत्।।१९।।
अनेकग्रन्थिसहितं स्वतन्त्राणामिदं भवेत्।

दश पवित्राओं नाम और लक्षण

मूर्तियों में लगने वाली पवित्राओं की संख्या दश होती है। अलंकार के अनुरूप प्रमाण्य ग्रन्थि नाम होते हैं। उत्तम, अधम, मध्यम, किरीट, श्रीवत्स, कौस्तुभ दश-दश गाँठ प्रमाण्य हैं। नाभि तक लम्बाई वाली पवित्रा के बत्तीस गाँठ लगते हैं। हृदय तक लम्बी पवित्रा में पच्चीस गाँठ बनाये जाते हैं। जंघा तक लम्बी अलंकार पवित्रा में बत्तीस गाँठ लगाये जाते हैं। उत्तम पवित्रा घुटनों तक लम्बी होती है। उसमें एक सौ आठ गाँठ लगते हैं। मध्यम पवित्रा जाँघों तक लम्बी होती है। उसमें अस्सी गाँठ लगाये जाते हैं। जघन्य पवित्रा नाभि तक लम्बी होती है। उसमें साठ गाँठ लगाये जाते हैं। किरीट नामक पवित्रा किरीटमान की होती है। उसमें बत्तीस ग्रन्थियाँ लगती हैं। स्तन तक लम्बी श्रीवत्स पवित्रा में सत्ताईस गाँठ होते हैं। हृदय तक लम्बी कौस्तुभ में बत्तीस गिरह लगते हैं। चरण तक लम्बी वनमाला पवित्रा में अनेक गाँठ लगते हैं। यह स्वतन्त्र मूर्तियों को पहनायी जाती है।

परतन्त्रबिम्बानां पवित्रमाननिर्देशः

बिम्बानां परतन्त्राणां देवीनां चोत्तमादिकम्।।२०।।
हस्तमानं भवेदग्नेर्ग्रन्थयो द्वादश स्मृताः।
सर्वेषां परिवाराणां द्वात्रिंशद्ग्रन्थिभिर्युतम्।।२१।।

नाभ्यन्तं द्वारपालानामपि तादृशकल्पनम्।
कर्णिकायामसदृशं पीठान्तं परिकल्पयेत्।।२२।।
अनेकग्रन्थिसहितं गुरूणामृत्विजामपि।
अन्येषामपि सर्वेषां नाभ्यन्तं परिकल्पयेत्।।२३।।

परतन्त्र मूर्तियों में पवित्रमान निर्देश

परतन्त्र देवी मूर्तियों की पवित्रा उत्तम आदि मान में होती है। अग्नि की पवित्रा एक हाथ लम्बी होती है। उसमें बारह गिरह होते हैं। सभी परिवारों के लिये बत्तीस गाँठ वाली पवित्रा बनायी जाती है। द्वारपालों की पवित्रा उसी प्रकार की नाभि तक होती है। कर्णिका आयाम के समान पीठान्त बनावें। गुरुओं और ऋत्विजों के लिये निर्मित पवित्राओं की लम्बाई नाभि तक अनेक गाँठों से युक्त होती है।

पवित्रनिर्माणविधि:

गन्धैः परिमलीकुर्यात् द्रव्यैः कर्पूरिकादिभिः।
मणिमुक्ताप्रवालाद्यैः स्वर्णैर्वा कुसुमैरपि।।२४।।
ग्रन्थीनां पूरणं कुर्यात् कुङ्कुमाद्यैश्च शोभयेत्।
यथाविभवविस्तारं पवित्राणि प्रकल्पयेत्।।२५।।

पवित्र निर्माण विधि

कपूर आदि गन्ध द्रव्यों से परिमल करें। मणि, मोती, मूंगा, सोना या फूलों से गाँठों का पूरण करें। कुंकुम आदि से सुशोभित करें। अपने वैभव विस्तार के अनुसार पवित्राओं को परिकल्पित करें।

पवित्रोत्सवसम्पादनार्थमनुज्ञायाचनम्

अङ्कुराण्यर्पयेद्रात्रौ दशम्यां प्रार्थयेद्धरिम्।
प्रणम्य च परिक्रम्य ऋत्विग्भिः सहितो गुरुः।।२६।।
चातुर्वर्णस्याश्रमिणां कर्मवैकल्यशान्तये।
सर्वदोषविनाशार्थं सेवतां च महोत्सवम्।।२७।।
सम्पदे सर्वलोकानां दुर्भिक्षोत्सादनाय च।
आरोग्यसिध्यै रुग्णानां प्रभोरिष्टार्थसिद्धये।।२८।।
पवित्रारोहणं नाम क्रियतेऽद्य महोत्सवः।
अनुजानीहि देवेश कर्मस्वस्मान्नियोजय।।२९।।

पवित्रोत्सव सम्पादन के लिये अनुज्ञा याचन

रात में अंकुरार्पण करके दशमी तिथि में हरि से प्रार्थना करें। ऋत्विजों सहित गुरु प्रणाम परिक्रमा करें। चारों वर्ण के लोगों के कर्म वैकल्य के शान्ति के लिये, सभी दोषों के विनाश के लिये महोत्सव करें। प्रार्थना करें—

सम्पदे सर्वलोकानां दुर्भिक्षोत्सादनाय च।
आरोगयसिध्यै रुग्णानां प्रभोरिष्टार्थसिद्धये।।
पवित्रारोहणं नाम क्रियतेऽद्य महोत्सवः।
अनुजानीहि देवेश कर्मस्वस्मान्नियोजय।।

पवित्राधिवासनविधिनिर्देशः

प्रार्थ्यैवं मन्दिरात्तस्मात् आचार्यो मण्डपान्तरे।
ऋत्विग्भिः सह दर्भेषु प्रागानन उपोषितः।।३०।।
जपैर्ध्यानेन च हरेः रात्रिं सर्वां समापयेत्।
आरभेत प्रभातायामधिवासनकर्मणि।।३१।।
न्यस्तचित्तो हविर्भुक्त्वा निशायामधिवासयेत्।
पवित्रभूषणस्नानकौतुकानि ध्रुवे भवेत्।।३२।।
एकबेरे तदितरे सव कल्याणकौतुके।
ततः प्रतिसरं बध्वा पूजयेत् द्वारतोरणान्।।३३।।
चतुर्वेदविदो विप्रान् स्थापयेच्च चतुर्दिशम्।
वाद्यघोषे च संघुष्टे धान्यराशौ च मण्डपे।।३४।।
प्रागग्रेषु च दर्भेषु पवित्राणि निवेशयेत्।
पुण्याहवारिभिः प्रोक्ष्य शोषयेच्छोषणादिभिः।।३५।।
गन्धवस्तुभिरालिप्य सुगन्धैरपि धूपयेत्।
कुसुमानि विकीर्याथ वेष्टयेन्नववाससा।।३६।।
प्रदर्श्य चक्रमुद्रां च पूजयेदस्त्रविद्यया।
सूत्रैरीशानमारभ्य मण्डपं परिवेष्टयेत्।।३७।।
ऊर्ध्वं चक्रमधः पद्मं गदां द्वारेषु चाष्टसु।
दिक्षु शंखं मण्डपस्य ध्वात्वा भूतबलिं क्षिपेत्।।३८।।
छिद्रयन्ति च कर्माणि विघ्नयन्ति च यानि वै।
बलिं गृहीत्वा निर्यान्तु तानि भूतानि वै बहिः।।३९।।
इति मन्त्रेण भूतेभ्यो माषान्नेन बलिर्भवेत्।

पवित्रा के अधिवास विधि का निर्देश

हरि की इस प्रकार प्रार्थना करके आचार्य मन्दिर से मण्डप में आयें। ऋत्विजों के साथ उपवास रहकर पूर्वमुख बैठें। सारी रात को जप ध्यान में समाप्त करें। प्रभात में अधिवासन कर्म प्रारम्भ करें। एकाग्रता से केवल हवि खा कर हल्दी में अधिवास करें। पवित्र भूषण स्नान कौतुक ध्रुवबेर में होते हैं। एक मूर्ति होने पर ऐसा होता है। इसके अतिरिक्त अन्य के लिये कल्याणकौतुक होता है। इसके बाद प्रतिसर बाँधकर द्वार तोरणों की पूजा करें। चारों वेदों के ज्ञानी विप्र चारों दिशाओं में मण्डप में धान्य राशि पर वाद्य वादन के साथ स्थापित करें। पूर्वाग्र कुशों में पवित्राओं को रखें। पुण्याह जल से पोंछकर शोषण आदि से सूखा दें। गन्ध द्रव्यों का लेप लगाकर सुगन्धित धूप में धूपित करें। उन पर फूलों को छींटे। नये वस्त्रों से लपेट दें। चक्र मुद्रा दिखाकर अस्त्र विद्या से पूजन करें। ईशान से आरम्भ करके मण्डप को सूत्रों से घेर दें। आठों द्वारों में ऊपर चक्र, नीचे पद्म, द्वार में गदा और मण्डप की दिशाओं में शंख का ध्यान करके भूतबलि प्रदान करें।

छिद्रयन्ति च कर्माणि विघ्नयन्ति च यानि वै।
बलिं गृहीत्वा निर्यान्तु तानि भूतानि वै बहि:।।

इस मन्त्र से भूतों को उड़द भात की बलि प्रदान करें।

पवित्रोत्सवक्रमे भगवत: चतु:स्थानार्चनम्

तत: संस्नाप्य देवेशमुपवीतान्तमर्चयेत्।।४०।।
निर्माय मण्डलं तस्मिन् देवमारोप्य पूजयेत्।
मण्डलं च तत: कुंभे वासुदेवं समर्चयेत्।।४१।।
सुदर्शनं च करके निवेद्यान्नं यथाविधि।
तत: कुण्डेऽग्निमाधाय मूलेन समिदष्टकम्।।४२।।
चरुणाथ 'नृसूक्तेन' जुहुयात् षोडशाहुती:।
स्रुवेणाज्येन चाष्टौ च मूलमन्त्रेण देशिक:।।४३।।
सम्पातमाज्यं सङ्गृह्य पवित्रेषु विसर्जयेत्।

पवित्रारोपण क्रम में भगवत के अर्चन के चार स्थान

तब देव को स्नान कराकर यज्ञोपवीत तक के उपचारों से पूजा करें। मण्डल निर्माण करके उसमें देव को स्थापित करके पूजन करें। तब कुंभ में वासुदेव का पूजन करें। सुदर्शन और करक को भी विधिवत् अन्न अर्पित करें।

तब कुण्ड में अग्नि लाकर मूलमन्त्र आठ समिधा और चरु की सोलह आहुति नृसूक्त मन्त्र से प्रदान करें। स्रुवा से गोघृत की आठ आहुतियाँ मूल मन्त्र से देशिक प्रदान करें। सम्पात घृत से ग्रहित करके पवित्रों में डाल दें।

पवित्रारोहणप्रकारः

'इदं विष्णु'रिति श्रुत्या पवित्रारोहणं भवेत्।।४४।।
कल्याणकौतुके कुम्भे करकेऽग्नौ च मण्डले।
आरोप्य मङ्गलैः सार्धं मूलबिम्बे तथा चरेत्।।४५।।
सर्वार्चासु तथा कृत्वा प्रासादं वेष्टयेत्ततः।
पञ्चवर्णैस्तथा सूत्रैर्नयेद्रात्रिं जपादिभिः।।४६।।

पवित्रारोहण प्रकार

'इदं विष्णु' रिति श्रुति से पवित्रारोहण होता है। कल्याण कौतुक कुंभों में करक में अग्नि के और मण्डल के मंगलवाचन के साथ मूलबिम्ब में भी पवित्रारोहण करें। सभी अर्चन में वैसा ही करके प्रासाद को पाँच रंग के सूत्रों से वेष्टित करके जप आदि करते हुए रात बितावें।

पवित्रोत्सवद्वितीयदिनकृत्यम्

जागरेण ततः प्रातर्मण्डलस्थं जगद्गुरुम्।
स्नापयित्वा समभ्यर्च्य चक्राब्जं वर्तयेत् पुनः।।४७।।
द्वारादियजनं कृत्वा पूजयेच्चक्रपङ्कजम्।
तस्मिन् देवं समारोप्य कुंभं च करकं तथा।।४८।।
दीपान्तमर्चयेत्प्राज्ञः निवेद्य च चतुर्विधम्।

पवित्रोत्सव में दूसरे दिन के कृत्य

रात्रि जागरण के बाद सबेरे मण्डस्थ जगद्गुरु को नहला कर समर्चन करके पुनः चक्राब्ज में ले आयें। द्वारादि का पूजन करके चक्र कमल की पूजा करें। उसमें देव का समारोपण करके कुंभ करक का अर्चन दीप दर्शन तक करावें। तब प्राज्ञ चारों प्रकार के नैवेद्यों को अर्पित करें।

पवित्रोत्सवक्रमे होमविधिः

हविरग्नौ च जुहुयात् 'नृसूक्तेन' चतुर्विधम्।।४९।।
यवं ब्रीहिं च वेणुं च तिलं लाजं तथा सुमम्।
अगरुं च घृतं पश्चात् समिधो नवमं पृथक्।।५०।।
अष्टोत्तरशत्तं होमो मुहूर्ते शोभने गुरुः।

पवित्रोत्सव क्रम में हवनाविधि

चार प्रकार के हवि का 'नृसूक्त' से हवन करें। यव, धान, वेणु, तिल, लावा, पुष्प, अगर, घी और समिधा नवों से अलग-अलग हवन करें। शुभ मुहूर्त में गुरु इनकी एक सौ आठ आहुतियों से हवन करें।

मण्डलादीनां पवित्रैः भूषणप्रकारः

पवित्रैर्मण्डलं कुंभं करकं मखकौतुकम्।।५१।।
कुण्डं च हव्यवाहं च भूषयित्वाब्जमण्डलम्।
प्रदक्षिणीकृत्य ततो मन्दिरे ध्रुवकौतुकम्।।५२।।
पवित्रैः समलङ्कृत्य हविरन्तं समर्चयेत्।
बेराण्यन्यानि सर्वाणि परतन्त्रांस्तथेतरान्।।५३।।
देवीश्च परिवारांश्च पीठान्यपि यथाक्रमम्।
वाद्यवेदादिघोषैश्च पवित्रारोहणं चरेत्।।५४।।
'मूलमन्त्रे'ण सर्वेषां पवित्रारोहणं मतम्।
आचार्यो मूर्तिपैः सार्धं प्रविश्य हरिमन्दिरम्।।५५।।
प्रणम्य स्वाञ्जलिं पुष्पैरापूर्य स्तुनुयात्ततः।
विकिरेत्तानि पुष्पाणि देवपादारविन्दयोः।।५६।।
मनुष्यार्थानि सर्वाणि पवित्राणि तथा हरेः।
विन्यस्य पादयोः स्तुत्वा नत्वा स्वार्थं समाहरेत्।।५७।।
ततः पूजकमुख्यानाम् ऋत्विजां सहकारिणाम्।

मण्डलादि में पवित्रों से भूषित करने का प्रकार

मण्डल, कुंभ, करक, मखकौतुक, कुंड, अग्नि और अब्जमण्डल को पवित्रा से भूषित करें। मन्दिर की प्रदक्षिणा करके ध्रुवकौतुक को पवित्र से अलंकृत करें। हवि तक के सभी उपचारों से पूजा करें। अन्य सभी मूर्तियों के अतिरिक्त परतन्त्र देवी, परिवार पीठों पर वाद्य वेदादि के घोष के साथ पवित्रारोहण करें। मत है कि सबों पर पवित्रारोहण मूलमन्त्र से करें। मूर्तियों के साथ आचार्य हरिमन्दिर में प्रवेश करें। अंजली भर पुष्पों को लेकर स्तुति करें। फूलों को देव के चरण कमलों में विकीरित करें। मनुष्यों के लिये निश्चित सभी पवित्रों को हरि के चरणकमलों में रखकर स्तुति प्रणाम करें। तब उन्हें अपने लिये उठा लें। इसके बाद पुजारी मुख्य ऋत्विजों और सहयोगियों के लिये उठावें।

अपराह्णे भगवन्तं प्रति क्षमाप्रार्थनम्

अन्येषां ब्राह्मणादीनामितरेषां च दापयेत्।।५८।।
देवस्याननमालोक्य पादौ स्पृष्ट्वा जगद्गुरोः।
विज्ञापयेदिमां गाथां प्राञ्जलिर्विनयान्वितः।।५९।।
भगवन् देवदेवेश सर्वलोकनमस्कृतः।
संवत्सरोपचारेषु न्यूनाधिक्योपशान्तये।।६०।।
आराधनमिदं भक्त्या सहास्माभिरनुष्ठितम्।
गृहाण नेह किञ्चिच्च स्वातन्त्र्यं मम माधव।।६१।।
त्वदाज्ञया कृतं सर्वं त्वमेव परमा गतिः।
अत्र न्यूनातिरेकाणि क्षमस्व पुरुषोत्तम।।६२।।
इति तं प्रार्थयेद्देवमपराह्णे जगत्पतेः।

अपराह्न में भगवन्त से क्षमा प्रार्थना

इसके बाद अन्य ब्राह्मणों और दूसरों को पवित्र प्रदान करें। देव के मुख का अवलोकन करके जगद्गुरु के पैरों को छूकर हाथों को जोड़कर विनीत होकर निम्न गाथा सुनावें।

भगवन् देवदेवेश सर्वलोकनमस्कृतः।
संवत्सरोपचारेषु न्यूनाधिक्योपशान्तये।।
आराधनमिदं भक्त्या सहास्माभिरनुष्ठितम्।
गृहाण नेह किञ्चिच्च स्वातन्त्र्यं मम माधव।।
त्वदाज्ञया कृतं सर्वं त्वमेव परमा गतिः।
अत्र न्यूनातिरेकाणि क्षमस्व पुरुषोत्तम।।

अपराह्न में जगत्पति देव की प्रार्थना इस प्रकार करें।

उत्सवक्रमे दैनन्दिनकृत्यम् महोत्सवदिवसश्च

उत्सवं कारयेद्भक्त्या प्रत्यहं स्नपनं तथा।।६३।।
कालद्वयेऽपि होमश्च नव वा सप्त पञ्च वा।
त्रिरात्रमेकरात्रं वा द्वारादियजनान्वितम्।।६४।।
महोत्सवं प्रकुर्वीत चरमे दिवसे गुरुः।

उत्सव क्रम में दैनन्दिनी कृत्य और महोत्सव दिवस के कृत्य

प्रतिदिन उत्सव करावें। प्रतिदिन स्नपन करावें। दोनों समय सबेरे-शाम

नव या सात या पाँच हवन करें। सात या पाँच या तीन या एक रात द्वारों का भी पूजन करें। अन्तिम दिन गुरु महोत्सव करावें।

पवित्रारोहणे वैकल्पिकमन्त्रः

पवित्रारोहणं कुर्यात् 'पुंसूक्ते'नापि वा हरेः।।६५।।

पवित्रारोहण का वैकल्पिक मन्त्र

अथवा पवित्रारोहण 'पुरुषसूक्त' या 'विष्णुसूक्त' से करें।

पवित्रारोहणफलश्रुतिः

इत्येष कथितो ब्रह्मन् पवित्रारोहणो विधिः।
एवं यः कुरुते भक्त्या स याति परमां गतिम्।।६६।।

।। इति भार्गवतन्त्रे एकविंशोऽध्यायः।।

पवित्रारोहण फलश्रुति

हे अगस्त्य! पवित्रारोहण की विधि को कहा गया। इस प्रकार जो पवित्रारोहण भक्तिपूर्वक करता है, उसे परम गति की प्राप्ति होती है।

।। श्री भार्गवतन्त्र का अध्याय इक्कीस सम्पूर्ण ।।

द्वाविंशोऽध्यायः

विविधप्रायश्चित्तनिरूपणाध्यायः

पूजावैकल्यादौ निष्कृतिविषयकः सामान्यः प्रश्नः

अगस्त्यः

नित्यनैमित्तिकाद्यानां पूजानां भगवन् प्रभो।
वैकल्ये वाथवा लोपे निष्कृतिस्तत्र का भवेत्।।१।।

विविध प्रायश्चित्तों का निरूपण

पूजा में न्यूनाधिक्य आदि में निष्कृति के सामान्य प्रश्न

अगस्त्य ने कहा कि भगवन प्रभो! नित्य नैमित्तिक पूजनों में वैकल्य या लोप होने पर उसके लिये क्या निष्कृति है?

अशुद्धदेहेन संपादिते अर्चने प्रायश्चित्तम्

श्रीरामः

शृणुष्व मैत्रावरुणे सर्वं वक्ष्ये यथाक्रमम्।
कर्माणि येन पूर्यन्ते येन तुष्टो भवेद्धरिः।।२।।
अस्नातोऽनुपनीतो वा तिलकेन विवर्जितः।
वसानो मलिनं वस्त्रं क्लिष्टवासोऽपवित्रकः।।३।।
प्रलयादिक्रमाद्देहमसंशोध्य समाधिना।
मन्त्रन्यासमकृत्वा च पूजिते च जगत्प्रभौ।।४।।
जपेदष्टाक्षरं मन्त्रम् अष्टोत्तरशतं बुधः।

अशुद्ध देह से संपादित अर्चन में प्रायश्चित्त

श्री परशुराम ने कहा कि हे मैत्रावरुण अगस्त्य! सुनिये, मैं उन सबों को यथाक्रम कहता हूँ, जिनसे कर्म पूर्ण होते हैं और जिनसे विष्णु प्रसन्न होते हैं। बिना स्नान के, बिना जनेऊ के या बिना तिलक लगाये, मलिन वस्त्र, क्लिष्टवास, अपवित्र अवस्था में जो पूजन करते हैं, उनसे हरि प्रसन्न नहीं होते। भूतशुद्धि में देह का संशोधन करके समाधि में मन्त्र न्यास करके जगत् प्रभु का पूजर करें। तब अष्टाक्षर मन्त्र का जप एक सौ आठ बार करें।

अशुद्धपादादिसमर्चने प्रायश्चित्तम्

पादौ हस्तावसंशोध्य अनाचम्य समर्चने।।५।।
जपः पञ्चोपनिषदां नग्नो मुक्तशिरोरुहः।

अशुद्ध पैरों आदि से समर्चन में प्रायश्चित्त

पैरों, हाथों को धोकर, बिना आचमन किये हरि के समर्चन में 'पंचोपनिषद' का जप नंगे होकर, बालों को खोलकर करने से प्रायश्चित्त होता है।

श्वसनादिपूर्वकसम्पादिते अर्चने प्रायश्चित्तम्

श्वसन् हसन् वा कुप्यन् वा स्विन्नाङ्गः प्रलपन्नपि।।६।।
अर्चयेद्देवदेवेशं शतमस्त्रमनुं जपेत्।

श्वसन आदि पूर्वक सम्पादित अर्चन के प्रायश्चित्त

जोर से साँस लेकर, हँसते हुए, क्रुद्ध होकर, स्विन्नाङ्ग होकर, प्रलाप करते हुए देवेश का अर्चन करने पर एक सौ आठ अस्त्र मन्त्र से जप से प्रायश्चित्त होता है।

लोमादिस्पर्शनादिपूर्वकभगवदर्चने प्रायश्चित्तम्

लोमलोष्ठास्थिकेशादिस्पर्शनेनैव निष्क्रिया।।७।।
अनाप्लुत्य स्त्रियं गत्वा पूजयेत्पुरुषोत्तमम्।
स्नापयेत्पञ्चगव्येन पञ्चोपनिषदं जपेत्।।८।।

लोमादि स्पर्श करते हुए भगवत अर्चन में प्रायश्चित्त

लोम, लोहा, हड्डी, केश स्पर्श, निष्क्रिय, स्त्री संगम के बाद बिना स्नान के जो पुरुषोत्तम की पूजा करता है, वह प्रायश्चित्त रूप में पंचगव्य से स्नान करके पंचोपनिषद का जप करें।

रजस्वलावस्त्राद्यस्पर्शानन्तरं सम्पादिते अर्चने प्रायश्चित्तम्

एवं रजस्वलावस्त्रं स्पृष्ट्वा देवसमर्चने।
वेदविक्रयचण्डालयूपश्वानरजस्वलाः ।।९।।
काकपाषण्डपतितप्रतिलोमखरादिकान् ।
चैत्यवृक्षं चितिं स्पर्शायोग्यं स्पृष्ट्वा समर्चने।।१०।।
पञ्चवारुणिकैर्मन्त्रैः स्नपनं कुशवारिणा।
क्षीरेण स्नापयेद्देवं सकेशकुसुमार्चने।।११।।

रजस्वला वस्त्र आदि स्पर्श के बाद भगवद अर्चन में प्रायश्चित्त

रजस्वला वस्त्र के स्पर्श के बाद देव समर्चन, वेदविक्रय, चण्डाल, यूप, श्वान, रजस्वला, कौआ, पाषण्डपतित, प्रतिलोम, गर्दभ, चैत्य वृक्ष, चिति स्पर्श के अयोग्य को स्पर्श के बाद समर्चन करने पर पंचवारुणि मन्त्र से कुश

जल से स्नान करें। कुश सहित फूलों से अर्चन करने पर देव का स्नान दूध से करावें।

मलमूत्रादिरूषिते बिम्बे भगवदर्चने निष्कृतिः

रूशितैर्मलमूत्राद्यैः पूजिते परमेश्वरे।
स्त्रीभिर्वानुपनीतैर्वा बिम्बे स्पृष्टेऽपि वाचरेत्।।१२।।
कुशोदकेन स्नपनं मन्त्रेण परमेष्ठिना।

मलमूत्रादि रूषित मूर्ति में भगवत अर्चन करने पर निष्कृति

मल, मूत्र से रूषित मूर्ति में परमेश्वर की पूजा करने पर या स्त्रियों, अपवित्रों से मूर्ति के स्पर्श होने पर पूजा करने पर प्रायश्चित्त में परमेष्ठी को कुश जल से स्नान करावें।

दुष्टान्ननिवेदिते प्रायश्चित्तम्

म्लेच्छपुल्कसचण्डालप्रतिलोमानुलोमजैः।।१३।।
अस्पृश्यैरपि शूद्राद्यैराचाररहितै द्विजैः।
श्वभिः सृगालैश्च खरैः स्पृष्टमन्नं निवेदितम्।।१४।।
अयाज्ञियैः कोद्रवाद्यैः हविः कृत्वा निवेदितम्।
प्रमादेन घृतस्नानं स्नानमुष्णाम्बुभिस्ततः।।१५।।

दुष्टान्न निवेदन करने पर प्रायश्चित्त

म्लेच्छ, पुल्कस, चण्डाल, प्रतिलोम, अनुलोमज, अछूत, शूद्रादि, आचाररहित, कुत्ता, सियार और गदहा से छूत अन्न निवेदन से, अयाज्ञीय कोदो आदि के हवि निवेदन प्रमादवश करने पर घृत स्नान के बाद गर्म जल से स्नान करने से प्रायश्चित्त होता है।

अत्युष्णादिहविर्निवेदने प्रायश्चित्तम्

अत्युष्णमतिशीतं वा विना शाकादिभिस्तु वा।
हविर्निवेदने कुर्यात् 'पञ्चोपनिषदां' शतम्।।१६।।

अत्युष्णादि हवि निवेदन में प्रायश्चित्त

अति गर्म, अति शीत, बिना शाकादि के हवि निवेदन करने पर पंचोपनिषद का सौ पाठ करें।

शवादिदूषिते ग्रामे प्रायश्चित्तम्

शवादिदूषिते ग्रामे पक्वान्नं विनिवेदयेत्।
पयसा स्नपनं कृत्वा 'पञ्चोपनिषदां' जपः।।१७।।

शवादि ग्राम में दूषित प्रायश्चित्त

गाँव में मरण अशौच पर पक्वान्न निवेदन करने पर दूध से स्नान करके पंचोपनिषद का जप करें।

पूजारंभानन्तरं मरणाशौचे विधिः

आरब्धायां तु पूजायामन्तरा म्रियते यदि।
तन्त्रेण सकलं कृत्वा देवदेवे समापयेत्।।१८।।
न स्नानादिक्रिया तत्र न होमो न बलिर्महः।
नैवेद्यमेकं कुर्वीत तत्तन्त्रमिति कथ्यते।।१९।।

पूजा आरम्भ के बाद मरणाशौच में विधि

पूजा प्रारम्भ करने पर यदि मृत्यु होती है, तब सभी कर्म तन्त्र से करके देवदेव को अर्पित कर दें। इसमें न स्नानादि क्रिया, न हवन, न बलि कर्म होते हैं। तन्त्र के कथनानुसार केवल नैवेद्य अर्पित करें।

निवेदितस्य अन्यस्मै निवेदने प्रायश्चित्तम्

भूयो निवेदयेत्पूर्वम् अन्यस्मै वा निवेदितम्।
कुशोदकैः स्नापयित्वा 'मूलमन्त्रा'युतं जपः।।२०।।

निवेदित अन्न को पुनः निवेदन में प्रायश्चित्त

पहले निवेदित अन्न को दुबारे निवेदित करना या दूसरे के द्वारा निवेदित अन्न को निवेदित करने के प्रायश्चित्त में कुश जल से स्नान करके मूल मन्त्र का जप दस हजार करें।

अन्यदेवार्चनप्रयुक्तसाधनोपयोगे प्रायश्चित्तम्

अन्यदेवार्चितं पुष्पम् अन्यदीयं रथादिकम्।
पूजादिषूपयुक्तं चेत् गन्धवस्त्रादिकं तथा।।२१।।
कल्याणस्नपनं कृत्वा 'मूलमन्त्रं' शतं जपेत्।

अन्य देव के अर्चन में प्रयुक्त के पुनः प्रयोग में प्रायश्चित्त

अन्य देव के अर्चन में प्रयुक्त पुष्प, दीपक, रथ आदि पूजा के उपयुक्त गन्ध, वस्त्रादि को देवता पर चढ़ाने पर कल्याण स्नान करके मूल मन्त्र का जप एक सौ बार करें।

कृम्यादिदूषितपुष्पाद्युपयोगे प्रायश्चित्तम्

कृमिकीटादिभिर्दुष्टमन्यदेवाय निर्मितम्।।२२।।
पूजादिषूपयुक्तं चेत् दध्ना स्नानं समाचरेत्।

कीड़ों आदि से दूषित पुष्प के उपयोग में प्रायश्चित्त

कृमि, कीट आदि से दूषित या अन्य देवता के लिये निर्मित पूजादि के उपयुक्त सामग्री के उपयोग होने पर दही से स्नान करें।

समर्पितावशेषोपयोग प्रायश्चित्तम्

भुक्तशेषेण वा विष्णोर्दत्तशेषेण वा पुनः।।२३।।
'मूलमन्त्र'सहस्र तु जपेदष्टोत्तरं बुधः।

समर्पित अवशेष के उपयोग में प्रायश्चित्त

खाने के बाद बचे हुए भोजन को या विष्णु के निवेदित शेष अन्न को देवता को चढ़ाने पर मूल मन्त्र का जप एक हजार बार करें।

पूजायां पर्युषितोदकोपयोगे प्रायश्चित्तम्

पूजायां स्नपने वापि यदि पर्युषितोदकम्।।२४।।
योजयेच्छान्तये तस्य कुशोदकघटाप्लवः।

पूजा में बासी पानी प्रयोग करने पर प्रायश्चित्त

पूजा में या स्नान में यदि बासी पानी का उपयोग करें, तो एक घड़े कुश जल से स्नान करके प्रायश्चित्त करें।

मलादिदुष्टवस्तुप्रयोगे प्रायश्चित्तम्

मलमूत्रादिदुष्टेन वस्तुना पूजिते यदि।।२५।।
स्नापयेद्वैष्णवैः कुम्भैः पुनः पूजादि कारयेत्।

मलादि दुष्ट वस्तु के प्रयोग करने पर प्रायश्चित्त

मल, मूत्रादि से दूषित वस्तुओं से पूजन करने पर वैष्णव कुंभ से स्नान कराकर पुनः पूजन आदि करें।

कूपदोषे प्रायश्चित्तम्

शवादिदूषितात् कूपात् जलं सर्वं समुद्धरेत्।।२६।।
पुण्याहं वाचयित्वान्ते प्रोक्षयेज्जलशुद्धये।

कूप दोष में प्रायश्चित्त

शव आदि से दूषित कुएँ का पूरा जल को निकाल कर बाहर कर दें। पुण्याहवाचन करके शुद्ध जल से प्रोक्षण करें।

विहितोपचारभङ्गे प्रायश्चित्तम्

क्लृप्तोपचारभङ्गे तु द्विगुणं कारयेत्ततः।।२७।।
शान्तयेऽष्टोत्तरशतं 'मूलमन्त्रं'जपेत्सुधीः।

विहित उपचार के भंग होने पर प्रायश्चित्त

क्लृप्त उपचार के भंग होने पर उसका दोगुना प्रयुक्त करें। शान्ति के लिये मूल मन्त्र का एक सौ आठ जप करें।

पूजावैकल्यादौ प्रायश्चित्तम्

वैकल्ये देवदेवस्य पूजाया: द्विगुणार्चनम्।।२८।।
पूजावैकल्यकालानां द्विगुणैर्वस्तुभि: पुन:।
प्रायश्चित्तावसाने तु पूजयेत्परमेश्वरम्।।२९।।

पूजा के क्रम भंग होने पर प्रायश्चित्त

यदि कभी देवदेव का पूंजन न हो सके तो दोगुना अर्चन करें। समय पर पूजन न होने पर दोगुनी सामग्रियाँ से पूजा करें। प्रायश्चित्त के बाद परमेश्वर की पूजा करें।

पूजाकालवैकल्ये प्रायश्चित्तविधि:

एकाहपूजावैकल्ये स्नपनं शान्तिवारिणा।
दिनमेकमतिक्रम्य वैकल्यञ्चेद्दिनत्रये।।३०।।
मङ्गलोदककुंभेन स्नपनं कारयेत्सुधी:।
अत ऊर्ध्वं द्वादशाहं पूजावैकल्यसंभवे।।३१।।
स्नापयेत्सर्वगन्धेन पक्षान्तं विकले सति।
मूलौषधीभि: स्नपनं मासं पूजाविपर्यये।।३२।।
ब्राह्मेण कारयेत्स्नानं वत्सरान्तं यदा भवेत्।
स्नापयेत्पारमेष्ठेन वत्सरद्वयलङ्घने।।३३।।
वासुदेवं भवेत्स्नानं तत: संवत्सरावधि।
संप्रोक्षणं प्रकुर्वीत प्रतिष्ठावत्सरत्रयात्।।३४।।
प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम्।

पूजा के समय में परिवर्तन होने पर प्रायश्चित्त विधि

एक दिवसीय पूजा में वैकल्य होने पर शान्ति जल से स्नान करें। एक के अतिक्रमण होने के बाद तीन दिनों तक पूजा न करने पर विद्वान मंगलोदक कुंभ से स्नान करावें। इससे अधिक बारह दिनों तक पूजा न होने पर सर्वगन्धों से स्नान करावें। पन्द्रह दिनों तक पूजा न होने पर मूलौषधि से स्नान करावें। एक महीने तक पूजा न होने पर ब्राह्म स्नान करावें। एक वर्ष तक पूजा न होने पर पारमेष्ठ से स्नान करावें। दो वर्षों तक पूजा न होने पर वासुदेव का स्नान

एक वर्ष तक करायें। तीन वर्षों तक संप्रोक्षण करें। सभी प्रयश्चित्तों में ब्राह्मण भोजन करावें।

अशास्त्रीयपूजादौ प्रायश्चित्तम्

अशास्त्रीयेण पूजां वा बलिं वा होमकर्म वा।।३५।।
कुरुतेऽक्षततोयेन स्नपनं तस्य निष्कृतिः।
एवं बहुदिने जाते विधिवर्जितपूजने।।३६।।
स्नापयेद्वासुदेवेन तेन शान्तिर्भविष्यति।

अशास्त्रीय पूजनादि में प्रायश्चित्त

पूजा वाले हवन कर्म शास्त्रीय विधि से न होने पर अक्षत जल से स्नान कराने पर निष्कृति होती है। बहुत दिनों तक विधिवर्जित पूजा होने पर वासुदेव से स्नान कराने पर शान्ति होती है।

अग्निदोषे प्रायश्चित्तम्

अस्पृश्यस्पर्शने वह्नेः कृमिकेशादिदूषणे।।३७।।
अष्टोत्तरशतं होमो व्याहृत्या तेन शाम्यति।
चण्डालसूतकोदक्याशवपुल्कसदूषिते।।३८।।
अयुतं होम उदितो व्याहृत्या हव्यवाहने।

अग्निदोष होने पर प्रायश्चित्त

अग्नि के अछूत से संस्पर्श होने पर और कीट केशादि दूषण होने पर व्याहृतियों से एक सौ आठ हवन करने पर शमन होता है। चण्डाल, सूत, कोदो या शवपुल्क से दूषित होने पर अग्नि में व्याहृतियों से दश हजार हवन करें।

परिवारार्चननाशादौ प्रायश्चित्तम्

परिवारार्चने नष्टे भङ्गे वा बलिकर्मणः।।३९।।
तत्तन्मन्त्रैर्यथाकालं द्विगुणीकृत्य पावके।
जुहुयाच्छान्तये तेषां समिधा वा घृतेन वा।।४०।।

परिवार अर्चन न होने पर प्रायश्चित्त

परिवार के अर्चन न होने पर या बलि कर्म न होने पर समिधा या घी से उनके मन्त्रों से अग्नि में दुगुना हवन करें।

बलिद्रव्यबलिबिम्बपतने प्रायश्चित्तम्

पतिते तु बलिद्रव्ये पुनरन्येन कारयेत्।
शान्तये स्नपनं कुर्यात् नारिकेलाम्भसा हरेः।।४१।।

बलिबिम्बे निपतिते यानादेः स्थापयेत्पुनः।
बलिशेषं समाप्याथ वैष्णवं स्नपनं चरेत्।।४२।।

बलि द्रव्य और बलि मूर्ति के गिरने पर प्रायश्चित्त

बलि द्रव्य के गिर जाने पर पुनः दूसरे द्रव्य से बलि देवें। शान्ति के लिये हरि को नारियल जल से स्नान करावें। बलिबिम्ब के गिरने पर पुनः यानादि पर स्थापित करें। बलि कर्म पूरा करने के बाद वैष्णव स्नान करावें।

अज्ञातजातिचौरैः स्पृष्टे बिम्बे प्रायश्चित्तम्

अज्ञातजातिभिश्चोरैः स्पृष्टे बिम्बे जगत्पतेः।
प्राजापत्यं प्रकुर्वीत स्नपनं तस्य शान्तये।।४३।।

अज्ञात जाति के चोरों से मूर्ति का स्पर्श होने पर प्रायश्चित्त

अज्ञात जाति के चोरों से हरि मूर्ति का स्पर्श होने पर उसकी शान्ति के लिये प्राजापत्य स्नान करायें।

मृण्मयादिबिम्बदोषे प्रायश्चित्तम्

मृण्मयं चित्रलिखितं कौतुकं च त्रिवस्तुकम्।
चण्डालाद्यैर्दूषितं चेत् त्यक्त्वा सर्वं पुनः सृजेत्।।४४।।

मृत्तिकादि मूर्ति में दोष होने पर प्रायश्चित्त

मृत्तिका चित्रांकित कौतुक तीन वस्तुओं से निर्मित बिम्ब का चण्डाल आदि से दूषित होने पर उसे हटाकर पुनः नया बनावें।

अस्पृश्यैः स्पृष्टे बिम्बे प्रायश्चित्तम्

बिम्बे पातकिभिः स्पृष्टे ब्राह्मं स्नपनमाचरेत्।
शूद्रेण कौतुके स्पृष्टे पुण्येन स्नापयेद्धरिम्।।४५।।
सामान्यैर्ब्राह्मणैः स्पृष्टे कौतुके परमेष्ठिनः।
स्नापनं कुशतोयेन तस्य निष्कृतये भवेत्।।४६।।
दुष्टस्त्रीभिस्तथाऽस्पृश्यैः कुण्डेर्वा गोलकैस्तु वा।
स्पृष्टे तच्छान्तये कुर्यात् पुण्येन स्नपनं हरेः।।४७।।

अछूत से स्पर्शित मूर्ति में प्रायश्चित्त

पातकियों से मूर्ति का स्पर्श होने पर ब्राह्म स्नपन करायें। शूद्र से मूर्ति का स्पर्श होने पर हरि का स्नान पुण्य से करायें। परमेष्ठि के कौतुक का स्पर्श सामान्य ब्राह्मण से होने पर कुश जल से स्नान कराने पर निष्कृति होती है। दुष्ट स्त्री तथा कुण्ड और गोल से बिम्ब का स्पर्श होने पर पुण्य जल से हरि को स्नान करावें।

वैश्यादिभिः गर्भगेहप्रवेशे प्रायश्चित्तम्

वैश्यशूद्रानुलोमाद्यैर्गर्भगेहप्रवेशने ।
स्त्रीभिर्वा पञ्चगव्येन प्रोक्षणं तत्र कल्पयेत्।।४८।।
गर्भगेहप्रवेशश्चेत् चण्डालैः पुल्कसादिभिः।
मृदादिकौतुकं त्याज्यं क्षालयेत् गोमयाम्बुभिः।।४९।।
प्रोक्षयेत्पञ्चगव्येन पुण्याहं वाचेयत्ततः।
पुनः सृष्ट्वा यथापूर्वं सर्वमन्यद्यथा पुरम्।।५०।।
शैलादीनां तु बिम्बानां स्पर्शे ब्राह्मं समाचरेत्।
अशौचवत्प्रवेशेऽपि स्नानं चण्डालवत् स्मृतम्।।५१।।

वैश्यादि के गर्भगृह में प्रवेश पर प्रायश्चित्त

वैश्य, शूद्र, अनुलोम, स्त्री आदि का गर्भगृह में प्रवेश होने पर पंचगव्य से प्रोक्षण करें। चण्डाल और पुल्कस आदि के गर्भगृह में प्रवेश होने पर मिट्टी आदि के कौतुक हटाकर गोबर, पानी और पंचगव्य से प्रक्षालन के समय पुण्याहवाचन करें। इसके बाद पूर्ववत् सबों को नया बनावें। पत्थर आदि की मूर्तियों के स्पर्श होने पर ब्राह्म स्नान करावें। अशौच के समान प्रवेश करने पर भी स्नान चण्डालवत होता है।

शूद्रादिभिः सम्पादिते कर्मणि प्रायश्चित्तम्

शूद्रपुल्कसचण्डालयवनाशौचिपापिनः ।
कर्मस्वधिकृता ज्ञानादज्ञानात्कामतोऽपि वा।।५२।।
कुर्वीरन् यदि कर्माणि शोधयेन्मन्दिरं ततः।
पुण्याहं वाचयेत् पश्चात् वेदान् विप्रैश्च घोषयेत्।।५३।।
स्नापयेद्वासुदेवेन कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम्।

शूद्रादि के द्वारा सम्पादित कर्मों में प्रायश्चित्त

जानकर या अनजाने में शूद्र, पुल्कस, चण्डाल, यवन, अशौच, पापी को कर्म में अधिकृत करके कर्म करवाता है। तब मन्दिर का शोधन करें। पुण्याहवाचन के बाद विप्रों से वेदपाठ करायें। वासुदेव कुंभ जल से स्नान कराकर ब्राह्मणों को भोजन करावें।

मन्दिरे चाण्डालादिप्रवेशे प्रायश्चित्तम्

चण्डालपुल्कसस्वानसृगालाशौचिगर्दभैः।।५४।।

धामावरणभूभागे प्रविष्टे निष्कृतिं शृणु।
प्रोक्षणं पञ्चगव्येन पुण्याहं वाचयेत्ततः।।५५।।
स्पर्शे तत्रत्य बिम्बानां परिवारगणस्य वा।
पीठानां वा यथापूर्वं कृत्वा कुर्याच्च निष्कृतिम्।।५६।।

मन्दिर में चाण्डालादि के प्रवेश करने पर प्रायश्चित्त

चण्डाल, पुल्कस, कुत्ता, सियार, अशौचि, गर्दभ के धाम आवरण में प्रवेश करने पर उसकी निष्कृति सुनिये। ऐसा होने पर पुण्याहवाचन कराकर प्रोक्षण करवायें। वहाँ बिम्ब के परिवार गणों का या बिम्ब का या पीठ का स्पर्श होने पर पूर्ववत् कर्मों को करके निष्कृति करें।

खद्योतस्पर्शादौ प्रायश्चित्तम्

खद्योतवर्षसंस्पर्शे यात्रायामथवाग्निना।
कुर्वीत पुण्यस्नपनं दग्धश्चेत् सर्वथा ततः।।५७।।
पुनर्निर्माय विधिवत् यथापूर्वं समाचरेत्।
स्नापयेद्वासुदेवेन प्रतिष्ठान्ते जगत्पतिम्।।५८।।
स्थापिते यागशालायां कलशेऽग्नौ प्रतिष्ठिते।
चण्डालप्रतिलोमाद्यैरस्पृश्यैरितरैरपि ।।५९।।
स्पृष्टे त्यक्त्वापरं स्थाप्य मूलेनाष्टौ शताहुतीः।
तत्तद्दैवतमन्त्राणि जपेदष्टोत्तरं शतम्।।६०।।
स्नपने वापि यात्रायां पतिते कौतुके भुवि।
पुनः संस्थाप्य तद्बिम्बं पुण्यस्नपनमाचरेत्।।६१।।
मण्डूकमूषिकाद्यैस्तु सर्वैर्मार्जारकादिभिः।

जूगनुओं आदि के स्पर्श होने पर प्रायश्चित्त

जूगनुओं, वर्ष के स्पर्श, यात्रायाम या अग्नि से होने पर पुण्य स्नपन करावें और सबों को जला दें। पुनः विधिवत् निर्मित कराकर पूर्ववत् समाचरण करें। जगत्पति की प्रतिष्ठा के बाद वासुदेव से स्नपन करावें। यागशाला में कलश, अग्नि के स्थापन के बाद यदि चण्डाल, प्रतिलोम आदि या दूसरे अछूतों के स्पर्श होने पर स्थापितों को हटाकर दूसरी स्थापना करें। मूल मन्त्र से सौ आहुति डालें। उस देवता के मन्त्र का एक सौ आठ जप करें। स्नपन में या यात्रा में कौतुक को जमीन पर गिरने पर उस बिम्ब को पुनः स्थापित करके पुण्य स्नपन करावें।

चाण्डालादिभिःकलशादिस्पर्शे प्रायश्चित्तम्

स्थापिते कलशे स्पृष्टे नष्टे वा तं परित्यजेत्।।६२।।
कुंभान्तरं तु संस्थाप्य तत्तदावाहनं चेरत्।
तद्दैवत्यान् जपेन्मन्त्रान् ध्वजपूर्वे महोत्सवे।।६३।।
स्खालित्यं यदि जायेत पुष्पयागेन शाम्यति।
हीननित्योत्सवे धाम्नि कार्यं न ध्वजपूर्वकम्।।६४।।
उत्सवं कारयेद्धीमान् कृते तन्निष्कृतये पुनः।
स्नानेन पारमेष्ठ्येन प्रीणयेत्परमेश्वरम्।।६५।।

चाण्डाल आदि से कलशादि के स्पर्श में प्रायश्चित्त

मेढ़क, मूषिका, बिल्ली आदि के स्थापित कलशों से स्पर्श होने पर स्थापित कलश के नष्ट होने पर उन्हें त्याग दें। कुंभों को पुनः स्थापित करके उनमें उनके देवताओं का आवाहन करें। उन देवताओं के मन्त्रों का जप करें। महोत्सव के पहले यदि ध्वज गिर जाये तो उसका शमन पुष्पयाग से करें। उसकी निष्कृति के लिये पुनः उत्सव करें। पारमेष्ठी स्नान से परमेश्वर को प्रसन्न करें।

स्नपनादौ बिम्बपतने प्रायश्चित्तम्

महोत्सवे वर्तमाने ध्वजे केनापि हेतुना।
नष्टे ध्वजान्तरं कृत्वा भोजयेद्ब्राह्मणान् बहून्।।६६।।
ध्वजे तु पतिते भूमौ हेतुना येन केन वा।
पुनरारोप्य तं पश्चात् विप्रेभ्यो भूरिभोजनम्।।६७।।
भङ्गच्छिद्रादिविषये वर्णलोपादिसंभवे।
संधाय च यथायोगं संप्रोक्ष्य विधिपूर्वकम्।।६८।।
पुनरारोप्य तच्छान्त्यै ब्राह्मणेभ्योऽन्नतर्पणम्।
चण्डालादिप्रवेशेन यथाकुंभान्तरं भवेत्।।६९।।

स्नपन आदि में मूर्ति के गिरने पर प्रायश्चित्त

महोत्सव में वर्तमान ध्वज के किसी प्रकार से नष्ट होने पर दूसरा ध्वज स्थापित करके ब्राह्मणों को भोजन करावें। जिस-किसी भी कारण से ध्वज को भूमि पर गिरने से उसे पुनः आरोपित करके विप्रों को बहुत प्रकार का भोजन करायें। टूटने पर, छेद होने पर, वर्ण लोप होने पर यथायोग्य संधान करके विधिवत् प्रोक्षण करें। उसे पुनः आरोपित करके ब्राह्मणों से अन्न तर्पण वैसा ही करावें जैसा चण्डालादि के प्रवेश में कुंभान्तर होता है।

चाण्डालादिभि: पालिकादिस्पर्शे प्रायश्चित्तम्

तथैव पालिकादीनां मृण्मयानां भवेद्ध्रुवम्।
अङ्कुराण्यर्पयेद्भूय: तच्छान्त्यै विप्रभोजनम्।।७०।।

चाण्डाल आदि से पालिकादि के स्पर्श में प्रायश्चित्त

मिट्टी के पालिकाओं का भी उसी प्रकार के कर्म होते हैं। शान्ति के लिये विप्र भोजन होता है।

अङ्कुरे अप्राशस्त्यादौ प्रायश्चित्तम्

अङ्कुरेष्वप्रशस्तेषु मूषिका पशुवाजिभि:।
भक्षितेष्वपि तच्छात्यै वल्मीकादिसमुद्भवे।।७१।।
शान्तिहोमो व्याहृतिभि: ब्राह्मणानां च भोजनम्।

अंकुरों के अप्रशस्त आदि होने पर प्रायश्चित्त

चूहे, पशु, घोड़ों के खाने से अंकुरों को अप्रशस्त होने पर उसकी शान्ति दीमकों से उत्पाटित मिट्टी से व्याहृतियों में हवन कराकर ब्राह्मणों को भोजन कराने से होती है।

ग्रामादिरहिते मन्दिरे परिक्रमणविधि:

ग्रामादिरहिते धाम्नि धामन्येव परिक्रम:।।७२।।

ग्राम आदि के न रहने पर मन्दिर में परिक्रमण विधि

जिस धाम में ग्राम आदि न हो, उसमें उसकी परिक्रमा अन्य स्थान में होती है।

महोत्सवे वर्षादिभि: शैथिल्ये प्रायश्चित्तम्

महोत्सवे वर्तमाने वर्षवातानलादिभि:।
ग्रामादौ शिथिले पश्चात् प्रायश्चित्तं पुनर्महः।।७३।।
प्राजापत्यविधानेन स्नपनं निष्कृतिर्भवेत्।

महोत्सव में वर्षा आदि होने से शिथिलता में प्रायश्चित्त

महोत्सव में वर्षा, आँधी, अग्नि से ग्रामीणों के शिथिल होने पर प्रायश्चित्त के लिये प्राजापत्य विधान से स्नपन करावें। इससे निष्कृति होती है।

उत्सवे विघ्ने संजाते सति प्रायश्चित्तम्

उत्सवे दैवयोगेन विघ्निते मानुषेण वा।।७४।।
बलिमेव क्षिपेद्धाम्नि ग्रामे वीथ्यां चतुर्दिशम्।
नष्टकर्माण्यशेषाणि पुनः कृत्वा यथापुरम्।।७५।।

कर्तव्यमखिलं पश्चात् कुर्याद्विध्युक्तवर्त्मना।
बलिप्रदानेऽप्यकृते अतिक्रान्तं पुराचरेत्।।७६।।
अन्यद्यथावत् कर्तव्यं महावाताद्युपद्रवे।
चण्डप्रचण्डयोरेव भूतेभ्यश्च तदन्तरे।।७७।।

उत्सव में विघ्न होने पर प्रायश्चित्त

उत्सव में दैवयोग से या मानवकृत विघ्न होने पर धाम, ग्राम, वीथियों की चारों दिशाओं में बलि प्रदान करें। नष्ट कर्मों के साथ सभी कर्म पूर्ववत् करें। इसके बाद विधि उक्त मार्ग से सभी कर्तव्यों को करें। कृत बलिप्रदान को अतिक्रमित करके दुबारे बलि प्रदान करें। भीषण आँधी के उपद्रव में अन्य कर्म यथावत् करें। चण्ड, प्रचण्ड और भूतों को भी बलि प्रदान करें।

तीर्थयात्राहीने उत्सवे प्रायश्चित्तम्

हीनायां तीर्थयात्रायां स्नपनं वासुदेवजम्।

तीर्थयात्रा रहित उत्सव के लिये प्रायश्चित्त

तीर्थयात्रा न होने पर वासुदेवज स्नपन करावें।

उत्सवबिम्बचौर्यादौ विधि: प्रायश्चित्तञ्च

नष्टे चोरादिभिर्बिम्बे कुर्यात्कर्मार्चया महः।।७८।।
बिम्बे तु पतिते वीथ्यां यानमारोप्य तत्पुनः।
वीथीपरिक्रमं कृत्वा प्राजापत्यमथाचरेत्।।७९।।
पतनेनाङ्गहीनं चेत् कुर्यात् कर्मार्चया महः।
सन्धाय विधिवत् सर्वमन्यत् कार्यं विचक्षणैः।।८०।।
यानभङ्गे नयेद्देवं यानेनान्येन केनचित्।

उत्सव मूर्ति की चोरी होने पर प्रायश्चित्त विधि

चोर आदि के द्वारा बिम्ब नष्ट होने पर महान कर्मार्चा करें। मूर्ति का वीथि में गिरने पर उसे फिर से यान पर चढ़ाकर वीथि परिक्रमा कराकर प्राजापत्य करें। किसी अंग के टूटकर गिरने पर महान कर्मार्चा करें। तब अन्य कार्यों को विचक्षण विधिवत् करें। यान भंग होने पर दूसरे यान में देव को बैठायें।

कर्माधिकृतजने विघ्निते विधि:

कर्मण्यधिकृता ये च प्रतिष्ठायाः सवस्य वा।।८१।।
दैवाद्वा मानुषाद्यद्वा विघ्निता यदि कारणात्।
तां क्रियां पूरयेदन्यैः सदृशैरधिकारिभिः।।८२।।

कर्माधिकृत जन के विघ्नित होने पर प्रायश्चित्त

कर्म में अधिकृत और प्रतिष्ठा के सदस्य के द्वारा या दैव द्वारा या मानवों आदि के कारण यदि विघ्न होते हैं, तो उन्हीं अधिकारियों के समान दूसरों का नियोजित करें।

पवित्रादिन्यूनाधिक्ये प्रायश्चित्तम्

पवित्रभूषणानां वा कुण्डानां मण्डलस्य वा।
न्यूनातिरेकशान्त्यर्थमस्त्रमन्त्रं शतं जपेत्।।८३।।

पवित्रादि के न्यूनाधिक्य होने पर प्रायश्चित्त

पवित्र भूषण या कुण्ड मण्डलों में कभी वेशी की शान्ति के लिये अस्त्र मन्त्र का जप एक सौ करें।

जलाधिवासहीनप्रतिष्ठायां प्रायश्चित्तम्

जलाधिवासरहितं प्रतिष्ठा कारिता यदि।
स्नपनं पारमेष्ठ्येन 'मूलमन्त्रं' शतं जपेत्।।८४।।

जलाधिवास रहित प्रतिष्ठा में प्रायश्चित्त

प्रतिष्ठा में जलाधिवास न होने पर पारमेष्ठ्य से स्नपन करावें। मूल मन्त्र का एक सौ जप करें।

क्लेशवासावध्यतिक्रान्ते प्रायश्चित्तम्

मासादूर्ध्वं द्वादशाब्दादर्वाक्क्लेशं सहेद्धरिः।
अत ऊर्ध्वं क्लेशवासं वासुदेवो न मन्यते।।८५।।
क्लेशावधावतिक्रान्ते कुर्यात् बालालयान्तरम्।
प्रायश्चित्तं वासुदेवं स्नपनं परिकल्पयेत्।।८६।।

क्लेशवास की अवधि में अतिक्रान्त में प्रायश्चित्त

एक महीने से ज्यादा या बारह वर्ष तक हरि के लिये कष्ट सहन करें। इससे ऊपर वासुदेव का क्लेश वास नहीं होता। क्लेश अवधि के अतिक्रान्त होने पर बालालय अन्तर करें। प्रायश्चित्त के लिये वासुदेव स्नपन करावें।

सिद्धान्तानां परस्परसांकर्ये प्रायश्चित्तम्

सिद्धान्तानां तु सर्वेषां संकरो जायते यदि।
परस्परं वा तन्त्राणां पारमेष्ठ्यं तु निष्कृतिः।।८७।।

सिद्धान्तों के परस्पर सांकर्य में प्रायश्चित्त

सभी सिद्धान्तों में यदि मिलावट होता है या परस्पर सांकर्य होता है

या तन्त्रों में परस्पर सांकर्य होता है, तो उसकी निष्कृति पारमेष्ठ्य स्नान से होती है।

मन्त्रसिद्धान्तस्वरूपम्

परिवारयुता वापि विना वा तैः समर्च्यते।
मन्त्रसिद्धान्तमित्युक्तं मूर्तिरिकैव नान्यथा।।८८।।

मन्त्र सिद्धान्त स्वरूप

परिवार के सहित या परिवार के बिना समर्चन करने पर मन्त्र सिद्धान्त होता है। एक ही मूर्ति में यह नहीं होता।

आगमसिद्धान्तस्वरूपम्

वासुदेवादयो व्यूहाः परिवारविवर्जिताः।
चत्वारो यत्र पूज्यन्ते सिद्धान्तं स्यात्तदागमम्।।८९।।

आगम सिद्धान्त स्वरूप

परिवार विवर्जित वासुदेव आदि व्यूह के चारों की पूजा जहाँ होती है, वहाँ आगम ही सिद्धान्त होता है।

तन्त्रसिद्धान्तस्वरूपम्

वासुदेवादिभिः सार्धं नारायणहयाननौ।
विष्णुश्च नरसिंहश्च मूर्तयो नव सूकरः।।९०।।
पूज्यन्ते परिवारैश्च सिद्धान्तं तन्त्रसंज्ञितम्।

तन्त्र सिद्धान्त स्वरूप

वासुदेव आदि के साथ नारायण, हयग्रीव, विष्णु, नरसिंह, वराह नव मूर्तियों की पूजा होती है। वहाँ तन्त्र सिद्धान्त होता है।

तन्त्रान्तरसिद्धान्तस्वरूपम्

नृसिंहकपिलक्रोडहंसवागीश्वरादयः ।।९१।।
वक्तृभेदेन पूज्यन्ते द्वित्र्यादिवदनास्तथा।
एकैव मूर्तिस्तत्रापि परिवारैर्विनापि वा।।९२।।
तत्तन्त्रान्तरमुद्दिष्टं तन्त्रमेतच्चतुर्विधम्।

तन्त्रान्तर सिद्धान्त स्वरूप

नृसिंह, कपिल, वराह, हंस, वागीश्वर आदि मुख भेद से दो, तीन आदि मुख वालों की पूजा जहाँ होती है, वहाँ परिवार रहित एक ही मूर्ति होने पर तन्त्रान्तर सिद्धान्त चार प्रकार का होता है।

सिद्धान्तादीनां परस्परसांकर्यनिषेध:

सिद्धान्तानां च तन्त्राणां साङ्कर्यं व्यसनाय तत्।।९३।।
तस्मादसंकरेणैव पूजयेत्परमेश्वरम्।

सिद्धान्तों के परस्पर सांकर्य का निषेध

सिद्धान्तों तन्त्रों के सांकर्य के व्यसन के लिये परमेश्वर का पूजन सांकर से ही करें।

तन्त्रचतुष्टयं सांकर्यदोष: एकत्रैकस्यैव ग्राह्यत्वञ्च

वैखानसं पाञ्चरात्रं भार्गवं शैवमित्यपि।।९४।।
तन्त्राण्यमूनि चत्वारि प्रशस्तान्यर्चनाविधौ।
असंकरेण देवेशमर्चयेत्पुरुषोत्तमम्।।९५।।
साङ्कर्यं यदि जायेत प्रतिष्ठोत्सवकर्मसु।
पूजायां स्नपनादौ वा राजराष्ट्रक्षयो महान्।।९६।।
तस्मादसंकरेणैव तथैवान्याधिकारिणाम्।
अस्पर्शनेन कुर्वीत कर्मजालं यथाविधि।।९७।।
कर्षणादिप्रतिष्ठान्ता क्रिया येन पुरातनी।
तेनैव पुनरुद्धारे नान्यथा परिकल्पयेत्।।९८।।
सा मूर्तिस्तच्च तन्त्रं च स एव स्थापक: पुन:।
पुन: प्रकल्पनेनैव क्रियाजालविपर्यय:।।९९।।

तन्त्रचतुष्टय के सांकर्य दोष एकत्र एक ही का ग्रह्यत्व

वैखानस, पांचरात्र, भार्गव और शैव चार तन्त्र हैं। अर्चन विधि में प्रशस्त हैं। बिना सांकर्य के देवेश पुरुषोत्तम का अर्चन करें। प्रतिष्ठा उत्सव कर्म में यदि सांकर्य होता है या पूजा में स्नपान पान में सांकर्य होता है, तब राज्य, राष्ट्र का महान क्षय होता है। इसलिये संकर से अन्य अधिकारी बिना स्पर्श के कर्मजाल विधिवत् करें। प्रतिष्ठा के अन्त में कर्षणादि पुरातनी क्रिया केवल पुनरुद्धार में करें। अन्यथा न करें। वह मूर्ति उसका तन्त्र और स्थापक बार-बार प्रकल्पन से क्रियाजाल में विपर्यय न करें।

अज्ञाताधिकारिजीर्णमन्दिरादौ विधि:

लुप्ते पुरातने धाम्नि प्रतिमा वा पुरातनी।
न ज्ञायते चाधिकारी पुन: सृष्टिर्यथेच्छया।।१००।।

अज्ञात अधिकारी जीर्ण मन्दिर आदि

पुरातन धाम प्रतिमा के लुप्त होने पर या पुरातनी के ज्ञात न होने पर अधिकारी पुनः इच्छानुसार बनावें।

ज्ञाताधिकारिमन्दिरादौ पूजालोपादौ विधिः

अधिकारी परिज्ञातः अजीर्णं ध्रुवकौतुकम्।
मन्दिरं च मनोहारि पूजालोपश्चिरादभूत्।।१०१।।
पूर्वतन्त्रानुरोधेन भूयस्तेनाधिकारिणा।
कुर्वीत सकलं कर्म राष्ट्रक्षोभो विपर्यये।।१०२।।

ज्ञात अधिकारी मन्दिर आदि में पूजालोप आदि में विधि

अचल मूर्ति मनोहर मन्दिर के अधिकारी के ज्ञात रहने पर भी बहुत दिनों तक पूजा न होने पर पूर्व तन्त्र के अनुसार ज्ञात अधिकारी राष्ट्रक्षोभ विपर्यय में सभी आवश्यक कर्म करें।

तन्त्रान्तरानुसारं भगवतः आराधनावसरः

क्लेशवासं गते देवे ग्रामे वा पत्तनेऽपि वा।
आमूलकर्मनिर्वृत्तिर्न कुर्यात्तत्र मङ्गलम्।।१०३।।
किं पूनर्देवदेवस्य पूजावैकल्यसंभवे।
तस्मात् सर्वात्मना तीव्रं संप्रोक्ष्याथ समर्चयेत्।।१०४।।
हेतुना येन केनापि पूजालोपे तु शार्ङ्गिणः।
तन्त्राधिकार्यलाभश्चेत् यजमानेच्छयार्चनम्।।१०५।।

तन्त्रान्तर के अनुसार भगवत आराधना के अवसर

देवता में, गाँव में या पत्तन में क्लेशवास की समाप्ति पर आमूल कर्म निवृत्ति न करके केवल मंगल करें। देवेदेव के पूजा वैकल्य पुनः होने पर सर्वात्मा का तीव्र से प्रोक्षण करके समर्चन करें। किसी कारण से विष्णु की पूजा लोप होने पर तन्त्राधिकारी लाभ के अनुसार यजमान इच्छानुसार अर्चन करें।

भगवदाराधनादौ सिद्धान्तादीनां व्यतिक्रमनिषेधः

वैकल्यशान्तिं कृत्वाथ संप्रोक्ष्य विधिवत्प्रभुः।
तन्त्रान्तरेण यजनं ततः प्रीतो भवेद्धरिः।।१०६।।
सिद्धान्ते वाऽथवा तन्त्रे शास्त्रे वा न व्यतिक्रमः।
कार्योऽनापदि शास्त्रज्ञैः भूतिकामैर्विशेषतः।।१०७।।

भगवत की आराधना में सिद्धान्तादि के व्यतिक्रम का निषेध

वैकल्य शान्ति के लिये प्रभु का संप्रोक्षण विधिवत् करें। तब तन्त्रान्तर से पूजा करने पर हरि प्रसन्न होते हैं। सिद्धान्त में या तन्त्र में या शास्त्र में व्यतिक्रम न करें। अनापद कार्य शास्त्रज्ञ और धनेच्छुओं को नहीं करना चाहिये।

गृहार्चाक्रमे पूजालोपे प्रायश्चित्तम्

पूजालोपे गृहार्चायाः पञ्चगव्याभिषेचनम्।
मासादुपरि षण्मासं पुण्यस्नपनमाचरेत्।।१०८।।
षण्मासाद्वत्सरादर्वाक् संप्रोक्षणविधिर्भवेत्।
अत ऊर्ध्वं प्रतिष्ठा स्याद्गृहार्चाराधनक्षये।।१०९।।
त्रिदशादिप्रतिष्ठायां पूजावैकल्यसंभवे।
केवलं पौरुषैः सूक्तैः स्नपनं नान्यदिष्यते।।११०।।

गृहार्चा क्रम में पूजा लोप में प्रायश्चित्त

घर के अर्चन में पूजा लोप होने पर पंचगव्य से अभिषेक करें। एक महीने से छः महीने तक लोप होने पर पुण्य स्नपन करें। छः महीनों से एक वर्ष तक पूजा न होने पर संप्रोक्षण विधि करें। इससे अधिक समय तक लोप होने पर गृहार्चाराधन का क्षय होता है। पुनः प्रतिष्ठा करें। देवताओं की प्रतिष्ठा में पूजा वैकल्य होने पर केवल पौरुष सूक्त से केवल स्नपन होता है। अन्य कुछ भी अपेक्षित नहीं है।

सालग्रामशिलापूजावैकल्यादौ प्रायश्चित्तम्

सालग्रामशिलादीनां पूजावैकल्यसंभवे।
अस्पृश्य स्पर्शने वापि क्षालयित्वार्च्चयेज्जलैः।।१११।।

।। इति भार्गवतन्त्रे द्वाविंशोऽध्यायः।।

सालग्राम शिला पूजा के वैकल्यादि में प्रायश्चित्त

सालग्राम शिला आदि में पूजा वैकल्य होने पर या अछूत के स्पर्श होने पर जल से धोकर पूजा करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय बाइस सम्पूर्ण ।।

त्रयोविंशोऽध्यायः

सम्प्रोक्षणनिरूपणाध्यायः

सर्वत्र प्रायश्चित्तेषु सामान्यकृत्यानि

श्रीरामः

प्रायश्चित्तानि सर्वाणि कथितानि महामुने।
तेषु सर्वेषु कुर्वीत साङ्कुरं कौतुकं पुरा।।१।।
अधिवासश्च कर्तव्यः प्रतिष्ठायां यथेरितः।
अपरेद्युर्भवेत् प्रातः कलशस्थापनक्रमः।।२।।
ब्राह्मवैष्णवपुण्यानां विनान्यत्रापराजितम्।
प्रायश्चित्ते द्रव्यकुंभस्थापने सोदकं भवेत्।।३।।
मध्ये न्यसेद्द्रव्यकुंभं परितः शुद्धवारि च।
मौक्तिकं रजतं वापि तेषु न्यस्याम्बुपूरणम्।।४।।
आवाह्य देवमभ्यर्च्य प्रतिष्ठाप्य हुताशनम्।
हुत्वा यथाविधि गुरुः पूर्णाहुत्यवसानिकम्।।५।।
स्नापयित्वाथ जप्त्वा च भोजयित्वा द्विजोत्तमान्।
गुरुमभ्यर्च्य नत्वा च दत्त्वा तस्मै च दक्षिणाम्।।६।।
ऋत्विग्भ्यः सहकारिभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम्।
वितीर्य देवं निनयेत् मन्दिरान्तर्भुवं गुरुः।।७।।

सम्प्रोक्षण का निरूपण

सर्वत्र प्रायश्चित्तों में सामान्य कृत्य

श्री भार्गव राम ने कहा कि महामुने! सभी प्रायश्चित्तों को कहा गया। उन सबों में पहले दिन अंकुरार्पण कौतुक होता है। प्रतिष्ठा में यथारीति अधिवास करना चाहिये। दूसरे दिन प्रातः कलश स्थापन क्रम होता है। ब्राह्म वैष्णव पुण्य के बिना अन्यत्र अपराजित होता है। प्रायश्चित्त में कुंभ स्थापन जल सहित होता है। बीच में द्रव्य कुंभ का न्यास करें। चारों ओर शुद्ध जल कुंभ स्थापित करें। उनमें मोती या चाँदी डालकर जल से पूर्ण करें। देव का आवाहन करके अर्चन करें। अग्नि प्रतिष्ठा करें। यथाविधि हवन करके गुरु पूर्णाहुति करें। स्नान करायें, जप करें और द्विजोत्तमों को भोजन करावें। यजमान गुरु का अर्चन करके प्रणाम करें और दक्षिणा देवें। ऋत्विकों, सहयोगियों, ब्राह्मणों को भी दक्षिणा देवें। तब देव को गर्भगृह में गुरु ले आयें।

सम्प्रोक्षणावसरः

श्रृणु वक्ष्येऽधुना ब्रह्मन् संप्रोक्षणविधिं क्रमात्।
अङ्गभङ्गादिसन्धाने धाम्नो वा कौतुकस्य वा।।८।।
चिराय पूजालोपे वा भूगुप्ते मरणेऽपि या।
जनने मैथुने धाम्नि शिल्पिस्पृष्टेऽपि कौतुके।।९।।
एवमादिषु चान्येषु सम्प्रोक्षणमुदाहृतम्।

सम्प्रोक्षण का अवसर

ब्रह्मण! सुनिये अब मैं संप्रोक्षण विधि को क्रमशः कहता हूँ। धाम के अंगभंग में या कौतुक या बहुत दिनों तक पूजा न होने पर या भूगुप्त होने पर, मरण, जनन, अशौच में या धाम में शिल्पों से कौतुक के स्पर्श होने इत्यादि या अन्य स्थिति में सम्प्रोक्षण सन्धान है।

सम्प्रोक्षणसन्नाहः

पुण्याहं वाचयेत्पूर्वं 'विष्णोर्नुकमि'ति ब्रुवन्।।१०।।
प्रोक्षयेद्धामबिम्बादीन् अब्लिङ्गैः क्षालयेदपि।
अङ्कुराण्यर्पयेत्पश्चात् बध्वा प्रतिसरं ततः।।११।।
कर्माङ्गस्नपनं कुर्यात् वैष्णवेनैव वर्त्मना।
शाययेच्छयने देवं प्रतिष्ठायामिवात्मवान्।।१२।।
द्वारतोरणकुंभादीन् यथापूर्वं समर्चयेत्।
वेदिकायां धान्यपीठे महाकुंभं निवेशयेत्।।१३।।
सूत्रवेष्टितसर्वाङ्गं सरत्नं प्रतिमान्वितम्।
कूर्चापिधानपत्राढ्यं वस्त्रयुग्मसमन्वितम्।।१४।।
तस्यैव दक्षिणे पार्श्वे तादृशं करकं न्यसेत्।
वासुदेवं महाकुंभे करके च सुदर्शनम्।।१५।।
आवाह्याथ यथान्यायं नैवेद्यान्तं समर्चयेत्।

सम्प्रोक्षण सन्नाह

पहले पुण्याहवाचन करें। तब 'विष्णोर्नुकमिति' बोलते हुए धाम मूर्ति आदि का प्रोक्षण करके अब्लिङ्ग से प्रक्षालित करें। तब अंकुरार्पण करें। तब प्रतिसर बन्धन करें। कर्मांग स्नान करावें। यह सब वैष्णव मार्ग से करें। तब देव का शयन शय्या पर प्रतिष्ठा के समान आत्मवान मान कर करावें। द्वार तोरण आदि का समर्चन पूर्ववत् करें। वेदी के धान्यपीठ पर महाकुंभ स्थापित करें। तब

प्रतिमा और रत्नों के साथ पत्राढ्य, कूर्च, अपिधान के सारे अंगों को सूत्र से वेष्टित करें। दो वस्त्रों से समन्वित करें। उसके दाएँ भाग में उसी के समान करक स्थापित करें। वासुदेव का महाकुंभ में और सुदर्शन का करक में आवाहन करके यथान्याय नैवेद्य तक के उपचारों से अर्चन करें।

सम्प्रोक्षणाङ्गहोमविधिः प्रोक्षणप्रकारश्च

अग्निं संसाध्य विधिवत् तत्रावाह्य जगत्प्रभुम्।।१६।।
समिद्भिराज्यैश्चरुभिस्तिलैश्चापि पृथक् पृथक्।
अष्टोत्तरशतं हुत्वा शान्तिहोमं यथापुरम्।।१७।।
पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा समुद्वास्यानलस्थितम्।
अन्यांश्च देवानुद्वास्य देवमन्तर्निवेशयेत्।।१८।।
महाकुंभजलेनैव प्रोक्षयेत्पुरुषोत्तमम्।
कूर्चेन पञ्चोपनिषदैरब्लिङ्गैरितरैरपि।।१९।।
शान्तिमन्त्राणि समये पठेयुर्ब्राह्मणोत्तमाः।
एवं सम्प्रोक्ष्य देवेशं यथापूर्वं समर्चयेत्।।२०।।

सम्प्रोक्षणांग हवन विधि और प्रोक्षण प्रकार

विधिवत् अग्नि स्थापित करके उसमें जगत्प्रभु का आवाहन करें। समिधा, गोघृत, चरु और तिल से अलग-अलग प्रत्येक में एक सौ आठ हवन करके पूर्ववत् शान्ति होम करें। तब पूर्णाहुति करके अग्नि स्थित देव का उद्वासन करें। दूसरे देवों का उद्वासन करके उन्हें देव में निवेशित करें। महाकुंभ के जल से पुरुषोत्तम का कूर्च से सम्प्रोक्षण करें। प्रोक्षण के समय पंचोपनिषद, अब्लिङ्ग और अन्य मन्त्रों का वाचन करें। उत्तम ब्राह्मण शान्ति मन्त्र का पाठ करें। इस प्रकार देव को सम्प्रोक्षित करके पहले के समान समर्चन करें।

ब्राह्मणादिसम्माननं दक्षिणाप्रदानं च

ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या देया ताम्बूलदक्षिणा।
आचार्यदक्षिणां दद्यात् शतनिष्कं ततोऽधिकम्।।२१।।

।।इति भार्गवतन्त्रे त्रयोविंशोऽध्यायः।।

ब्राह्मण आदि का सम्मान और दक्षिणा प्रदान

भक्तिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन कराकर पान के साथ दक्षिणा देवें। आचार्य को दक्षिणा सौ निष्क से अधिक प्रदान करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय तेईस सम्पूर्ण ।।

चतुर्विंशोऽध्यायः

अष्टाक्षरमन्त्रनिरूपणाध्यायः

रामस्य माहात्म्यकीर्तनं कार्तरयज्ञापनञ्च

अगस्त्यः

भगवन् सर्वलोकेश सर्वर्षिगणसेवित।
त्वमेव भगवान् विष्णुस्त्वं ब्रह्मा त्वं महेश्वरः।।१।।
त्वमादित्यस्त्वमग्निश्च चन्द्रमास्त्वं पुरन्दरः।
वायुस्त्वं सर्वभूतात्मा नागराजोऽसि वासुकिः।।२।।
अनन्तः फणिनामिन्द्रः स्रष्टा त्वं सर्वदेहिनाम्।
अन्तश्चरसि भूतानामादिमध्यान्तवर्जितः।।३।।
पुरुषस्त्वं परं ब्रह्म जगद्बीजं सनातनम्।
त्वां विना नैव पश्यामि परात्परतरं प्रभुम्।।४।।
कल्पान्ते सागरे क्षुब्धे संहृत्य निखिलं जगत्।
कुक्षौ वहसि देवेश शेषत्वं शेषमण्डले।।५।।
त्वं यासि पक्षिराजेन श्रियं वहसि वक्षसि।
शेषं सर्वं जगदिदं शेषी त्वं परमेश्वर।।६।।
त्वयाद्यानुगृहीतोऽस्मि कटाक्षाभ्यां विलोकितः।
पूतोऽस्मि पुरुषेशान पुण्यलोकेऽस्मि कश्चन।।७।।
कृत्स्नस्य पञ्चरात्रस्य सारमग्राहिषं प्रभो।

अष्टाक्षर मन्त्र का निरूपण

भार्गव राम के माहात्म्य का वर्णन और कृतज्ञता ज्ञापन

अगस्त्य ने कहा कि भगवन आप सर्वलोकेश, सभी ऋषिगणों से सेवित हैं। आप ही भगवान विष्णु, आप ही ब्रह्मा और आप ही महेश्वर हैं। आप ही सूर्य, आप ही अग्नि, आप ही चन्द्रमा, आप ही इन्द्र, आप ही वायु, आप ही सर्वभूतात्मा और आप ही नागराज वासुकी हैं। आप ही नागों के इन्द्र अनन्त हैं। सभी देहधारियों के स्रष्टा हैं। आप आदि मध्यान्त रहित सभी भूतों के अन्तर में रहते हैं। आप परम ब्रह्म पुरुष हैं। सनातन जगद्बीज हैं। आपके बिना मैं परात्परतर प्रभु को नहीं देखता। कल्पान्त में क्षुब्ध सागर में सारे संसार का संहार कर देते हैं। शेषमण्डल में आप शेष हैं और कुक्षि में देवेश का वहन करते

हैं। आपका वाहन पक्षिराज गरुड़ है। लक्ष्मी का वहन वक्ष में करते हैं। अखिल विश्व शेष है और आप शेषी परमेश्वर हैं। आज मैं आपसे अनुगृहित हूँ और कटाक्ष से अवलोकित हूँ। पुरुषेशान मैं पवित्र हो गया। मैं पुण्यलोक के अतिरिक्त और कुछ नहीं हूँ। आपने पंचरात्र सारग्राही मुझे बना दिया।

अष्टाक्षरमन्त्राधिकारित्वविषये जिज्ञासा

कृपया ते दयासिन्धो शुश्रूषा काचिदस्ति मे।।८।।
तदप्यद्योपदेष्टव्यं रहस्यमपि दुर्लभम्।
अष्टाक्षराख्यमन्त्रस्य अधिकारी च तज्जपे।।९।।

अष्टाक्षर मन्त्र के अधिकारित्व विषयक जिज्ञासा

दया सिन्धो! आपकी कृपा से कुछ शेष उपदेष्टव्य दुर्लभ रहस्य अष्टाक्षर मन्त्र के अधिकारी और उसके जप के बारे में सुनना चाहता हूँ।

अष्टाक्षरमन्त्राधिकारिलक्षणम्

श्रीराम:

सम्यक् पृष्टं मुनिश्रेष्ठ सर्वस्वं सङ्ग्रहेण ते।
उपदेक्ष्यामि तन्मन्त्रमधिकारी प्रपञ्च्यते।।१०।।
आत्मानं मन्यते शेषं शेषिणं परमेश्वरम्।
अनुकम्पास्य भूतेषु तैरप्येषोऽनुकम्प्यते।।११।।
निरीहः सर्वकार्येषु सोऽहमस्मिञ्जगत्रयम्।
मृत्युमप्यात्मनो मित्रं मन्यतेऽस्माद्बिमेति सः।।१२।।
क्षुधितो वा न तृषितः चिन्तयानः सदा हरिम्।
वर्षं वातं च भानुं च सहजं मन्यते समम्।।१३।।
कृच्छ्रेष्वप्यतिसंतुष्टो विनीतः क्षेमवृद्धिषु।
वनितासु भवेत् षण्डः जन्मान्धो दोषदर्शने।।१४।।
परदोषप्रवचने मूको निन्दाप्रशंसने।
बधिरो वेदविद्गोष्ठ्याम् आनन्दाश्रुपरिप्लुतः।।१५।।
किङ्करो हरिभक्तानां हरिसेवैकमानसः।
अधिकारी भवेदेषः ग्रहीतुं मनुमीदृशम्।।१६।।

अष्टाक्षर मन्त्र के अधिकारी के लक्षण

श्री परशुराम ने कहा कि मुनिश्रेष्ठ आपका प्रश्न सम्यक् है। सभी तन्त्रों के सर्वस्व के अनुसार मैं अष्टाक्षर मन्त्र के अधिकारी के बारे में कहता हूँ। जो

अपने को शेष और परमात्मा को शेषी मानते हैं। जो सभी भूतों पर दया करते हैं और वे भी उन पर दया करते हैं, सभी कार्यों में जो निरीह होकर मानते हैं कि 'सोऽहमस्मि जगत् त्रयम्', जो मृत्यु को अपना मित्र मानते हैं और उसके साथ वैसा ही आचरण करते हैं, भूखे हों या प्यासे हों सर्वदा हरि का चिन्तन करते हैं। वर्षा, वायु और सूर्य को जो सहज मानते हैं। जो कृच्छ्र में भी सन्तुष्ट रहते हैं। क्षेमवृद्धि में विनीत रहते हैं, वनिताओं के लिये नुपंसक और दोषदर्शन में अन्धे होते हैं, परदोष प्रवचन में गूंग और निन्दा, प्रशंसा में बधिर रहते हैं, वेदज्ञानियों की गोष्ठी में जो आनन्दाश्रु से भींगे रहते हैं, हरिभक्तों के सेवक और हरिसेवा में ही मन को लगाये रहते हैं, वे ही इस मन्त्र के अधिकारी होते हैं। इस मन्त्र को वे ही ग्रहण कर सकते हैं।

शुद्धमिश्रयोः सामान्यभेदः

शुद्धो मिश्र इति द्वैधीं भजेत स मुनीश्वरः।
आद्यमेकायनं वेदं ब्रह्मैकप्रतिपादकम्।।१७।।
तेनैव संस्कृतः शुद्धः मिश्रस्त्रैय्या प्रकीर्तितः।
अष्टाक्षरस्त्रैविद्यानां शुद्धानां द्वादशाक्षरी।।१८।।

शुद्ध, मिश्र और सामान्य भेद

मुनीश्वर! उस मन्त्र का भजन शुद्ध और मिश्र दोनों रूपों में होता है। शुद्ध में वेद एकायन केवल ब्रह्म का प्रतिपादक है। उनमें संस्कृत शुद्ध है। मिश्र के तीन प्रकार हैं। मिश्र तीनों विद्याओं में अष्टाक्षर है और शुद्धों में द्वादशाक्षरी है।

शुद्धवैष्णवानां लक्षणमाचारश्च

बलादिमन्त्रैरच्छिद्रं पञ्चकालप्रवर्तनम्।
एकाध्वना निषेकादिसंस्कारश्च बलादिभिः।।१९।।
द्वादशाक्षरविद्यैव तेषां विद्या न च त्रयी।
न सावित्री न मन्त्रोऽन्यः स्वाध्यायजपकर्मणोः।।२०।।
मूलेशु निस्पृहाः सर्वे 'द्वादशाक्षर'चिन्तकाः।
शावसूतकहीनास्ते केवलं मोक्षकामिनः।।२१।।
कर्षणादिक्रियास्वेते कल्प्यन्ते नाधिकारिणः।
अज्ञानाद्यदि ताः कुर्युश्रच्यवन्ते नात्र शंसयः।।२२।।
मन्त्रसिद्धान्तनिष्ठेन दीक्षितेन प्रतिष्ठितम्।
पूजार्थमात्मनो बिम्बं प्रतिगृह्य समर्चयेत्।।२३।।

बीजशक्त्यङ्गरहितं 'द्वादशाक्षर'विद्यया।
कृत्वा प्रतिष्ठां तद्बिम्बं दापयन्मूलशाखिने।।२४।।
न दीक्षा नैव देहस्य दहनादिविशोधनम्।
नाङ्गन्यासादिसकलं नेष्टमेकायनेऽध्वनि।।२५।।
एकायनप्रविष्टानां त्रैविद्यानामपीदृशः।
बीजशक्त्यङ्गरहितम् ऋषिच्छन्दो विवर्जितम्।।२६।।
स्वरूपमेव मन्त्रस्य जपः स्वाध्यायकर्मणोः।

शुद्ध वैष्णवों के लक्षण और आचार

बलादि मन्त्र से अच्छिद्र का प्रवर्तन पाँच बार होता है। एकाध्व निषेक आदि संस्कार बलादि मन्त्र से होता है। इनमें केवल द्वादशाक्षरी विद्या से संस्कार होते हैं। त्रयी विद्या से नहीं। न सविता गायत्री, न अन्य मन्त्र का उपयोग स्वाध्याय और जपकर्म में होता है। सभी द्वादशाक्षर चिन्तक मूल में निस्पृह होते हैं। उनमें शावसूतक से हीन केवल मोक्षकामी होते हैं। इनमें कर्षणादि क्रिया को अनाधिकारी कल्पित करते हैं। अज्ञानता में यदि वे करते हैं, तो उनका पतन होता है; इसमें संशय नहीं है। मन्त्र सिद्धान्त में निष्ठा से दीक्षित प्रतिष्ठित पूजा के लिये अपनी मूर्ति ग्रहण करके उसका अर्चन करें। बीजशक्ति अंग रहित द्वादशाक्षर मन्त्र से प्रतिष्ठा करके उस बिम्ब को मूलशाखियों को प्रदान करें। इसमें न दीक्षा, न देह का दहन आदि विशोधन होता है। अंगन्यास आदि नहीं होते। एकायन में ध्वनि इष्ट नहीं है। एकायन में प्रतिष्ठितों को भी विद्यात्रयी में भी ऐसा ही होता है। इनमें भी बीज शक्ति अंग रहित ऋषि छन्द विवर्जित होते हैं। स्वाध्याय कर्म में केवल स्वरूप मन्त्र का ही जप होता है।

दीक्षया योग्यतोत्पादनं मुख्या दीक्षा च

दीक्षया जायते योग्यः त्रैविद्यः देवपूजने।।२७।।
चक्राब्जमण्डले दीक्षा तस्य मुख्या प्रकीर्तिता।
अनुकल्पा भवेद्दीक्षा केवलं वह्निसन्निधौ।।२८।।
दीक्षितो देवदेवस्य कर्षणादिक्रियां चेरत्।
नाधिकारी भवेद्यस्तु दीक्षाविरहितो द्विजः।।२९।।
तस्माद्धर्यर्चनाकाङ्क्षी दीक्षेत् हरिसन्निधौ।
कुंभे च मण्डले चाग्नौ हरिमावाह्य पूजयेत्।।३०।।
मायासूत्रं च निर्भिद्य पूतो भवति मानवः।
नेत्रबन्धाद्विनिर्मुक्तो दृष्ट्वा चक्राब्जमण्डलम्।।३१।।

विकीर्णस्वर्णकुसुमो लब्धपुण्ड्राह्वयो गुरोः।
अधीत्य सकलान् मन्त्रान् अष्टाक्षरपुरस्सरान्।।३२।।
विद्यां हर्यर्चनमयीम् अभिषिक्तो घटोदकैः।
अर्हत्यर्चयितुं विष्णुं प्रतिष्ठातुं यथाविधि।।३३।।
महोत्सवादिकं कर्तुं नित्यनैमित्तिकादिकम्।
एषा मुख्या भवेद्दीक्षा जघन्या वक्ष्यते श्रृणु।।३४।।

दीक्षा में योग्यता उत्पादन और मुख्य दीक्षा

तीनों विद्याओं में देव के पूजन से दीक्षा की योग्यता होती है। चक्राब्ज मण्डल की दीक्षा को मुख्य दीक्षा कहते हैं। अनुकल्पा दीक्षा केवल अग्नि की सन्निधि में होती है। देवदेव का दीक्षित होकर कर्षण आदि क्रिया करें। दीक्षारहित द्विज कर्षण के अधिकारी नहीं होते। इसलिये अर्चन के आकांक्षी की दीक्षा हरि की सन्निधि में करें। कुंभ मण्डल और अग्नि में हरि का आवाहन पूजन करें। मायासूत्र का त्याग करके मनुष्य पवित्र होते हैं। नेत्र बन्धन के खुलने पर चक्राब्ज मण्डल को देखकर स्वर्ण पुष्पों को विकीरित करें। गुरु से पुण्ड्र प्राप्त करें। पहले अष्टाक्षर मन्त्र को बोलकर सभी मन्त्रों का उच्चारण करें। तब हरि अर्चनमयी विद्या को घट जल से अभिषिक्त होने पर प्राप्त करें। अर्हता प्राप्त होने पर अर्चन के लिये विष्णु की प्रतिष्ठा यथाविधि से करें। महोत्सव आदि करें। नित्य नैमित्तिक उत्सव करें। मुख्या दीक्षा इस प्रकार की होती है। अब जघन्या को कहता हूँ, सुनिये।

जघन्यायाः दीक्षायाः स्वरूपम्

स्थण्डिलं प्रतिमां विष्णोः कुंभमर्चिश्च पूजयेत्।
अथवा तु यथालाभं केवलं वा हुताशनम्।।३५।।
जुहुयाद्धेतिराजेन बाहुमूले समङ्कितः।
पाञ्चजन्येन वा साकं ततो नामादिपूर्ववत्।।३६।।
लब्ध्वा गुरोर्यथाशास्त्रं भूयादेषोऽर्चनाविधौ।
नित्ये नैमित्तिके काम्ये कर्षणादिषु कर्मसु।।३७।।
एषा दीक्षा द्वितीया स्यात् पञ्चसंस्कारलक्षणा।
इमेऽधिकारिणः प्रोक्ताः वासुदेवार्चनाविधौ।।३८।।
एते ह्यष्टाक्षरान् जप्तुम् इतरान् अपि वा मनून्।
नान्येऽधिकारिणस्तेषां कीर्तने स्मरणेऽपि वा।।३९।।

जघन्या दीक्षा का स्वरूप

स्थण्डिल में विष्णु प्रतिमा का पूजन करें। कुंभ अर्चित हरि की पूजा करें अथवा यथालाभ मूर्ति की पूजा करें अथवा केवल अग्नि में हरि का अर्चन करें। चक्रांकित बाहुमूल से अस्त्र मन्त्र से हवन करे या पांचजन्य से या साक से तब नामादिपूर्वक गुरु से यथाशास्त्र प्राप्त मन्त्र से अर्चन विधि से अर्चन करें। नित्य नैमित्तिक काम्य कर्षणादि कर्म में यही विधि होती है। इसमें द्वितीया दीक्षा पंच संस्कारों से युक्त होती है। इसमें अधिकारी वासुदेव अर्चन विधि से होते हैं। इनमें अष्टाक्षर के अतिरिक्त अन्य मन्त्रों के जप भी होते हैं। इसके स्मरण या कीर्तन के अधिकारी दूसरे नहीं होते हैं।

अष्टाक्षरमन्त्रोद्धारप्रकार:

अष्टाक्षरमनुं वक्ष्ये सावधानमनाः शृणु।
आदौ तु छन्दसामादिर्विघ्नेशस्तदनन्तरम्।।४०।।
ओतदेहेन जीवात्मा तृतीयो वर्ण ईरितः।
विष्णुना सह विघ्नेशः चतुर्थः कलशोद्भव।।४१।।
विष्णुं विभ्रन् महाज्वालः पञ्चमो मारुतस्ततः।
स विष्णुः सुमुखः षष्ठादनन्तर उदीरितः।।४२।।
अवसाने मरुद्भाति प्राणो भूतभृतां सदा।
एष तेऽष्टक्षरो मन्त्रो यथावदुदितो मया।।४३।।

अष्टाक्षर मन्त्र के उद्धार का प्रकार

इन श्लोकों के उद्धार करने पर अष्टाक्षर मन्त्र होता है—'ॐ नमो नारायणाय'। इस अष्टाक्षर मन्त्र को मैंने यथावत् कथन किया।

अष्टाक्षरमन्त्रस्य ऋष्यादिनिर्देश:

ऋषिर्नारायणो देवो देवता चास्य कीर्तितौ।
छन्दस्तु देवी गायत्री बीजं विष्णुः सबिन्दुकः।।४४।।
त्रिभिः पदैश्च भूयोऽपि षडङ्गानि महामुने।
समस्ते कथितो भावः व्यस्ते वक्ष्यामि तच्छृणु।।४५।।
भरद्वाजः कौशिकश्च जमदग्निरुदीरितः।
वसिष्ठः कस्यपश्चात्रिरगस्त्यः ऋषयः क्रमात्।।४६।।
द्वितीयाद्यास्तारकस्य परमेष्ठी ऋषिर्भवेत्।
छन्दांसि प्रणवादीनां गायत्र्यादीनि चाञ्चले।।४७।।

विराट् च देवता वच्मि क्रमादेषां धरो ध्रुवः।
सोम आपस्तथाऽग्निश्च षष्ठो वरुण ईरितः।।४८।।
प्रत्यूहश्च प्रभातश्च देवा अष्टौ यथाक्रमम्।
नाभ्यादिहृदयान्तेषु न्यसनीयाश्च भूमिषु।।४९।।

अष्टाक्षर मन्त्र के ऋष्यादि निर्देश

इस मन्त्र के ऋषि नारायण देवता देव हैं। छन्द गायत्री बीज बिन्दु सहित विष्णु हैं। मन्त्र के तीन पदों से षडंगन्यास होता है। यह भाव पूरे मन्त्र के लिये है। व्यस्त रूप से सुनिये। इसके अक्षरों के ऋषि क्रमशः भरद्वाज, कौशिक, जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, अगस्त्य हैं। द्वितीयाद्या तारक के ऋषि परमेष्ठी हैं अर्थात् नमो नारायणाय के ऋषि परमेष्ठी है। ॐ नमो नारायणाय का छन्द गायत्री और चांचल में विराट है। इसके देवता क्रमशः धर, ध्रुव, सोम, आप, अग्नि, वरुण, प्रत्यूह और प्रभात हैं। नाभि से हाथ तक इनका न्यास होता है।

अष्टाक्षरमन्त्रजपात् पूर्वं ध्येयं भगवत्स्वरूपम्

चतुर्भुजमुदाराङ्गं शंखचक्रधरं विभुम्।
कालमेघप्रतीकाशं पद्मपत्रनिभेक्षणम्।।५०।।
किरीटहारकेयूरकाञ्चीकटकमण्डितम् ।
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं कुण्डलाङ्गुलिभूषणम्।।५१।।
पीताम्बरेण संवीतं यज्ञसूत्रोपशोभितम्।
ललाटे चोर्ध्वतिलकं श्वेतया मृदुमृत्स्नया।।५२।।
श्रिया भूम्या च सततं वालव्यजनवीजितम्।
प्रफुल्लवारिजमुख मेघगम्भीरनिःस्वनम्।।५३।।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं चतुर्वर्गफलप्रदम्।

अष्टाक्षर मन्त्र जप के पहले ध्येय भगवत स्वरूप

चतुर्भुजमुदाराङ्गं शंखचक्रधरं विभुम्।
कालमेघप्रतीकाशं पद्मपत्रनिभेक्षणम्।।
किरीटहारकेयूरकाञ्चीकटकमण्डितम् ।
श्रीवत्सकौस्तुभोरस्कं कुण्डलाङ्गुलिभूषणम्।।
पीताम्बरेण संवीतं यज्ञसूत्रोपशोभितम्।
ललाटे चोर्ध्वतिलकं श्वेतया मृदुमृत्स्नया।।

श्रिया भूम्या च स्ततं वालव्यजनवीजितम्।
प्रफुल्लवारिजमुख मेघगम्भीरनिःस्वनम्।।

इस प्रकार के ध्यान के बाद चारों वर्ग का फल देने वाले मन्त्र का जप करें।

अष्टाक्षमन्त्रोपयोगः तस्य फलश्रुतिश्च

अनेन सकलाः देवाः साध्याः सन्ति न संशयः।।५४।।
कुर्यादनेन मन्त्रेण प्राणायामं द्विजोत्तमः।
सर्वपापविनिर्मुक्तो महायोगी भवेद्ध्रुवम्।।५५।।
अङ्गानिवेदाश्चत्वारः शास्त्राणि विविधान्यपि।
सर्वमष्टाक्षरे मन्त्रे स्वयमेव प्रतिष्ठितम्।।५६।।
एतज्जपन् सदा ध्यायन् सर्वपापात् प्रमुच्यते।
किमन्यैर्बहुभिर्मन्त्रैः सर्वमेतेन सिध्यति।।५७।।

।।इति भार्गवतन्त्रे चतुर्विंशोऽध्यायः।।

अष्टाक्षर मन्त्र का उपयोग और फलश्रुति

इस मन्त्र से सभी देवता साध्य हैं। इसमें संशय नहीं है। द्विजोत्तम इस मन्त्र से प्राणायाम करें। इससे वह सभी पापों से मुक्त होकर निश्चय ही महायोगी हो जाता है। अष्टाक्षर मन्त्र अंगों सहित चारों वेद विविध शास्त्र प्रतिष्ठित है। इसके जप, ध्यान से जब सभी पापों का नाश होता है, तो दूसरे मन्त्रों के जप की क्या आवश्यकता है? सब कुछ इसी से सिद्ध होते हैं।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय चौबीस सम्पूर्ण ।।

पञ्चविंशोऽध्यायः

पञ्चकालप्रक्रियानिरूपणाध्यायः

वैष्णवाणां कृते पञ्चकालपरत्वनिर्देशः

श्रीरामः

त्रैविद्यो दीक्षितस्त्वेवं जपध्यानपरायणः।
हरिन्न्यस्तमना भूत्वा पञ्चकालपरो भवेत्।।१।।

पंचकाल के पाँच कालिक कृत्यों का निर्देश

वैष्णवों के पाँच कालिक कृत्यों का निर्देश

श्री परशुराम ने कहा कि तीनों विद्याओं में दीक्षितों को जप, ध्यान परायण होना चाहिये। हरि में मन को न्यस्त करके पंचकाल परक होना चाहिये।

पञ्चकालविभागक्रमः

प्रातः कुर्यादधि (भि ?)गममुपादद्यात्ततः परम्।
इज्यां कुर्वीत तदनु स्वाध्यायनिरतस्ततः।।२।।
योगेन गमयेदन्ते एवं कालं नयेद्द्विजः।

पंचकाल विभाग क्रम

प्रातःकाल में अभिगमन, उपादान, इज्या, स्वाध्याय तब योग करें। द्विज इस प्रकार से कालयापन करें।

अधिगमनादिविधीनां संक्षिप्तवर्णनम्

प्रातरुत्थाय शयनाद्धरेर्नामानि कीर्तयेत्।।३।।
शोधयित्वा ततो देहं दन्तधावनपूर्वकम्।
अवगाह्याप्सु नद्यादे'रघमर्षणमु'च्चरन्।।४।।
वासोभ्यामथ संवीतश्चन्दनेन मृदापि वा।
ऊर्ध्वपुण्ड्रं वहेत् फाले दद्यादर्घ्यं विवस्वते।।५।।
सावित्र्या त्रिःपरिक्रम्य तर्पयित्वाथ देवताः।
प्राणानाम्य सङ्कल्प्य जपेदासूर्यमण्डलम्।।६।।
अष्टोत्तरसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा।
उपस्थाय रविं दृष्ट्वा कर्मशेषं समाप्य च।।७।।
अग्नौ च हुत्वा देवेशं प्रणम्यापीठमस्तकम्।
आलोक्य त्रिःपरिक्रम्य पुत्रदारादिभिः सह।।८।।

सम्भार्यानपि सम्भारान् सम्भार्याराधनात्मकान्।
स्नात्वाराध्य जगन्नाथं यतीनप्यतिथीनपि।।९।।
तोषयित्वाथ भुञ्जीत गुरुशेषं हविः स्वयम्।
ततो ऋगादीन् शास्त्रान् वा पठेद्वा पाठयेदपि।।१०।।

अधिगमन आदि विधियों का संक्षिप्त वर्णन

सबेरे उठकर हरि नाम का कीर्तन करें। तब देह शुद्धि के बाद दतुवन करें। तब नदी आदि में अवगाहन के समय अघमर्षण करें। वस्त्र बदल कर चन्दन या मिट्टी से ऊर्ध्वपुण्ड्र ललाट पर लगावें और सविता गायत्री से तीन परिक्रमा करके सूर्य को अर्घ्य दान करें। प्राणायाम संकल्प करके सूर्य मण्डल को देखते हुए एक हजार आठ या एक सौ आठ जप करें। सूर्य उपस्थान करके कर्म शेष समाप्त करें। अग्नि में देवेश के लिये हवन करके पीठ पर मस्तक रखकर प्रणाम करें। देवेश को देखकर पत्नी, पुत्रों के साथ तीन परिक्रमा करें। सम्भार्य, सम्भारी से आराधनात्मक सम्भार को रख दें। स्नान करके जगन्नाथ का आराधन करें। यतियों, अतिथियों को भोजन से तुष्ट करके शेष हवि गुरु स्वयं खाये। तब ऋगादिशास्त्रों का पाठ करें या करावें।

योगप्रक्रियानिर्देशः

स्नात्वा साध्यं समाप्यार्घ्यं जप्त्वाग्निं परिचर्य च।
प्रणम्य देवदेवेशं पुण्डरीकाक्षविद्यया।।११।।
स्तुत्वा भुक्त्वा च युञ्जीत स्वात्मानं ध्यानकर्मणि।
प्राणायामपरो भूयात् 'मूलतन्त्रे'ण तत्त्ववित्।।१२।।
नाडीमिडां पिङ्गलां च शोधयेच्च गतागतैः।
तत्र तत्र च योगेन कारयेद्वायुधारणम्।।१३।।
पृथिवीमप्सु तां वह्नौ तं वायावम्बरे च तम्।
तं जीवे तं परे ब्रह्मण्यमले विनिवेशयेत्।।१४।।
रात्रौ निशीथे विमले स्नात्वा तीर्थेऽन्वहं सुधीः।
आसने सम्यगासीनः विविक्तेऽमलमानसः।।१५।।
एवं ध्यायेत् परं ब्रह्म योगकर्मणि दीक्षितः।
हृत्पुण्डरीकमध्यस्थं चैतन्यं ज्योतिरव्ययम्।।१६।।
कदम्बमुकुलाकारं नित्यतृप्तं निरामयम्।
अनन्तमानन्दमयं चिन्मयं भास्वरं विभुम्।।१७।।

निवातदीपसदृशमकृत्रिममणिप्रभम् ।
एवं ध्यायन्नयेत्कालं योगविद्याविशारद:।।१८।।

योग क्रिया निर्देश

स्नान करके, साध्य करके, अर्घ्य देकर, जप करके, अग्नि की परिचर्या करके, देवदेवेश को प्रणाम करके, पुण्डरीकाक्ष विद्या से स्तुति करके, आत्मा को ध्यान कर्म में योजित करें। मूलमन्त्र से प्राणायाम करें। इड़ा, पिंगला से श्वास लेते, छोड़ते नाड़ी शोधन करें। वहाँ-वहाँ योग से वायु धारण करें। पृथ्वी को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में और वायु को आकाश में, आकाश को जीव में और जीव को निर्मल परमब्रह्म में विनिवेशित करें। रात के निशोथ में विमल जल से स्नान करके सम्यक रूप से आसन पर बैठे। एकाग्र मन से योग कर्म में परंब्रह्म का ऐसा ध्यान करें—

हृत्पुण्डरीकमध्यस्थं चैतन्यं ज्योतिरव्ययम्।।
कदम्बमुकुलाकारं नित्यतृप्तं निरामयम्।
अनन्तमानन्दमयं चिन्मयं भास्वरं विभुम्।।
निवातदीपसदृशमकृत्रिममणिप्रभम् ।

इस प्रकार ध्यान करते हुए योग विद्या विशारद कालयापन करें।

निद्रास्वीकारप्रकार:

योगावसाने भूयोऽपि लयक्रमविपर्ययात्।
जीवादिवसुमत्यन्तं सृष्ट्वा देवाय तर्पयेत्।।१९।।
तत: शयीत खट्वायां सुवासिन्या विनापि वा।
एवं दिनानि गमयन्नन्ते देवं हरिं व्रजेत्।।२०।।

निद्रा स्वीकार प्रकार

योगावसान होने पर लयक्रम के विपर्यय से जीवादि की सृष्टि करके देव का तर्पण करें। तब पत्नी के बिना भी खाट पर शयन करें। इस प्रकार दिन बिताने पर अन्त में वैकुण्ठ में वास करता है।

निद्रास्वीकाराभावे विकल्प: अष्टाक्षरमंत्रजपफलञ्च

अथवा'ष्टाक्षरं मन्त्रं' यथाशक्ति जपेच्छुचि:।
मुमुक्षुर्लभते मुक्तिं मुक्तिकामोऽतुलां श्रियम्।।२१।।
आरोग्यं पुत्रसंपत्तिं धरणीं सस्यमालिनीम्।
राजश्रीवस्यमतुलं राज्यलक्ष्मीं च शाश्वतीम्।।२२।।

आयुश्च ज्ञानमतुलं प्रावण्यं सर्वकर्मसु।
यद्यदिच्छन्ति जप्तारः सर्वं करतले भवेत्।।२३।।

निद्रा स्वीकार न होने पर अष्टाक्षर मन्त्र जप और उसका फल

नींद न आने पर यथाशक्ति पवित्र होकर अष्टाक्षर मन्त्र का जप करें। इससे मुमुक्षुओं को मुक्ति मिलती है। मुक्ति कामियों को अतुल्य धन, आरोग्य, पुत्र, सम्पत्ति, सस्यमालिनी भूमि, राजश्री वश्य, अतुल राज्य, लक्ष्मी, शाश्वती आयु, अतुल्य ज्ञान, सभी कर्मों में प्रवीणता के साथ जपकर्ता की इच्छा के अनुसार सब कुछ हस्तगत होते हैं।

अस्य शास्त्रस्य ग्रहणे अधिकारिणः

शास्त्रमेतन्मुनिश्रेष्ठ सर्वगुह्यं सनातनम्।
विष्णुभक्ताय दातव्यं जगतामुपकारिणे।।२४।।
पुण्यकृद्भ्यः प्रदातव्यं भीरुभ्यः पापकर्मणः।
न नास्तिकाय दातव्यं नाभक्ताय कदाचन।।२५।।
गोपनीयमिदं शास्त्रं यदेतद्ब्रह्मसम्पुटम्।

इस शास्त्र के ग्रहण के अधिकारी

मुनिश्रेष्ठ यह शास्त्र सर्वगुह्य सनातन है। जगत उपकारी विष्णु भक्त को देय है। पुण्य करने वालों को और पाप कर्मों से डरने वालों को प्रदातव्य है। नास्तिकों और भक्तिहीनों को कदापि नहीं देना चाहिये। यह शास्त्र गोपनीय है; क्योंकि यह ब्रह्म सम्पुट है।

अस्य शास्त्रस्याध्ययनफलश्रुतिः

एतद्यः पठते भक्त्या तस्मिन् देवः प्रसीदति।।२६।।
तस्य मुक्तिः करतले स पापेभ्यः प्रमुच्यते।
सुतार्थी सुतमाप्नोति स्त्रीकामः सुदतीं द्रुतम्।।२७।।
आयुष्कामो दीर्घमायुः रुग्णो रोगाद्विमुच्यते।
अतुलां श्रियमाप्नोति लक्ष्मीकामो न संशयः।।२८।।
बहुनात्र किमुक्तेन लभते यद्यदीप्सितम्।

इस शास्त्र के अध्ययन की फलश्रुति

इसको जो भक्तिपूर्वक पढ़ता है, उस पर देव प्रसन्न होते हैं। उसकी मुक्ति करतल में रहती है। वह पापों से मुक्त हो जाता है। पुत्रार्थी को पुत्र और

स्त्रीकामी को सुन्दर स्त्री मिलती है। आयुष्कामियों को लम्बी आयु मिलती है। रोगियों को रोग से मुक्ति मिलती है। लक्ष्मीकामियों को अतुल्य श्री प्राप्त होती है; इसमें संशय नहीं है। अधिक क्या कहा जाय, जो चाहता है, वही मिलता है।

पाञ्चरात्रोपदेशानन्तरं रामस्यान्तर्ध्यानत्वम्

एतद्रहस्यमुदितं प्रीत्या त्वयि मुनीश्वर।।२९।।
मुक्तस्त्वं किल्विषात्सर्वात् व्रज स्थानमिति ब्रुवन्।
आलोकितश्च स मया परमेष्ठी जगत्प्रभुः।।३०।।
पश्यतोऽन्तर्दधे देवो रामो रक्तान्तलोचनः।
सरहस्यमिदं शास्त्रमग्रहीषं जगत्प्रभोः।।३१।।
ओं नमो वासुदेवाय निर्मलानन्तशक्तये।
पुण्याय पुरुहूताय पुरुषाय परात्मने।।३२।।

पांचरात्र उपदेश के बाद राम का अन्तर्ध्यानत्व

मुनीश्वरों आपकी प्रीति के वशीभूत मैंने इस रहस्य को प्रकाशित किया। आप सभी पापों से मुक्त हो गये हैं। अपने स्थान में रहिये। मेरे देखते-देखते परमेष्ठी देव राम रक्तान्तलोचन अन्तर्धान हो गये। रहस्यों के साथ जगत्प्रभु के इस शास्त्र को अगस्त्य ने ग्रहण किया।

ओं नमो वासुदेवाय निर्मलानन्तशक्तये।
पुण्याय पुरुहूताय पुरुषाय परात्मने।।

विष्ण्वाराधनफलकीर्तनं ग्रन्थोपसंहारश्च

अगस्त्यः

अनेन विधिना यूयमर्चयध्वमधोक्षजम्।
सर्वपापहरं देवं जगद्बीजं परात् परम्।।३३।।
तत्परं तत्परं तीर्थं तत्तपो मङ्गलं बहु।
तेन सर्वं करतले भवत्यत्र न संशयः।।३४।।
यः पूजयति देवेशं वासुदेवं सनातनम्।
किं तस्य बहुभिस्तीर्थैः किं यज्ञैः किं व्रतैरपि।।३५।।
तत्सर्वं विष्णुयजनात् हस्तप्राप्तं भविष्यति।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन वासुदेवं समर्चयेत्।।३६।।

इति शास्त्रं महद्दिव्यं गृहीतं भार्गवान्मुनेः।
उपादिशत्तपस्विभ्यः अगस्त्यो भगवान् ऋषिः।

॥ इति भार्गवतन्त्रे पञ्चविंशोऽध्यायः॥

॥इति भार्गवतन्त्र सम्पूर्णः॥

विष्णु आराधन फल का कीर्तन और ग्रन्थ का उपसंहार

इस प्रकार भार्गव मुनि परशुराम से इस शास्त्र को ग्रहण करके अगस्त्य तपस्वियों को उपदेश देते हैं। हे तपस्वियों! आप भी इसी विधि से अधोक्षज हरि का अर्चन करें। सर्व पापहारी देव जगत के बीज पर से भी परम हैं। वहीं पर हैं, वहीं पर हैं। उन्हीं का तप तीर्थ है। बहुमंगलदायक हैं। हरि के अर्चन, तप से सभी कुछ करतलगत होते हैं। इसमें संशय नहीं है। जो सनातन देवेश वासुदेव का पूजन करते हैं, उन्हें बहुत तीर्थातनों, यज्ञों और व्रतों की क्या जरूरत है? वे सभी विष्णु के पूजन से हस्तामलकवत होते हैं। इसलिये सभी प्रयत्नों से वासुदेव का समर्चन करें।

।। श्री भार्गवतन्त्र में अध्याय पच्चीस सम्पूर्ण ।।

▼

।।श्री भार्गवतन्त्र सम्पूर्ण।।

—o—

भार्गवतन्त्रे प्रयुक्ताः वैदिकमन्त्राः

मन्त्राः	भार्गवतन्त्र-अ. श्लो.	वैदिकाकरः
अग्निमूर्धा	१४.४२;	ऋ.वे. ८.४४.१६;
अग्निर्मे	१५.१७;	तै. ब्रा. ३.१०.८.४;
	१५.३३;	
अग्नेनय सुपथा राये	१७.६६;	ऋ.वे. १.१८९.१;
अघोरचक्षुषा	१४.३७;	ऋ.वे. १०.८५.४४;
अतो देवा	६.६७;	ऋ.वे. १.२२.१६;
		सा. वे. १६७४;
अपराजित	२०.१०४;	आपस्तंब मंत्रपाठः १.१३.४;
अर्यमण	१४.४०;	अ. वे. सं. १४.१.१७;
अश्वक्रान्त	६.५०;	तै. आ. १०.१.८;
		म. ना. उ. ४.४;
असुनीते	७.६;	ऋ.वे. १०.५९.६;
	९.७१;	
असुन्वन्ते	२०.१००;	ऋ.वे. १.१७६.४;
आत्वाहार्षं	१०.१८;	ऋ.वे. १०.१७३.१;
आप्यायस्व	२०.६७;	ऋ.वे. १.९१.१६;
आमागन	१४.२१;	अथर्व. वे. १९.३१.७;
आयानश्चाग्ने	२०.१००;	मैत्रायणी सं. १.४.३;
आशासान सौमनसम	१४.४४;	अथर्व. वे. १४.१.४२;
इदं मे वरुण	६.७३; १४.११, १३;	ऋ.वे. १.२५.१९;
इदं विष्णु	६.६७, ७०; ७.११;	ऋ.वे. १.२२.१७;
	८.४२; १२.१५; २१.४४;	
इदमहं तु	१४.३८;	शतपथ ब्रा. १४.९.४.५;
इन्द्रं नत्वा	२०.५०;	ऋ.वे. ६.४.७;
इरावतीं	१४.२४; १६.५३;	ऋ.वे. ७.९९.३;
उत्तिष्ठ	१२.१४; १६.९;	ऋ.वे. १.४०.१;
उद्दीप्यस्व	१६.५४;	तै. आ. १०.१.४;
उद्वयं तमसे	८.१४;	ऋ.वे. १.५०.१०;
ऋतं (च) सत्यम्	६.६४; १६.५०;	ऋ.वे. १०.१९०.१;
(ओं) कल्पयत	१४.२९;	तै. ब्रा. १.१.१४;

मन्त्राः	भार्गवतन्त्र-अ. श्लो.	वैदिकाकरः
आमुत्सृजत	१४.२८;	तै. आ. ६.१२.१;
ओषधयः संवदन्ते	२०.६५;	ऋ. वे. १०.९७.२२;
ओषधयस्त्वा	२०.६८;	तै. ब्रा. ३.७.७.८;
गन्धद्वार	१६.५२; २०.६९;	ऋ. वे. (खि) ५.८७.९;
गी (गि) र्वणा	१४.४३;	ऋ. वे. ६.४५.२०;
गौरसि (गौर्गौरसि)	१४.२७;	ऋ. वे. ६.४५.२६;
घृतं मिमिक्षि	७.२३; २०.६९;	ऋ. वे. २.३.११;
चित्रं देवानाम्	८.१९;	ऋ. वे. १.११५.१;
जीवां रुदन्ति	१४.३९;	ऋ. वे. १०.४०.१०;
तच्चक्षु	८.१९;	ऋ. वे. ७.६६.१६;
तदस्य	६.६६; ९.१५;	ऋ. वे. १.१५४.५;
तद्विप्रास	१६.४९;	ऋ. वे. १.२२.२१;
तद्विष्णो	१६.४९; २०.६६;	ऋ. वे. १.२२.२०;
तमीशानम्	२०.१०१;	ऋ. वे. १.८९.५;
त्रातारम्	२०.६८;	ऋ. वे. ६.४७.११;
त्रीणि पदा	१४.१९; १६.४८;	ऋ. वे. १.२२.१८;
त्र्यम्बक	१४.१४;	ऋ. वे. ७.५९.१२;
दधिक्राव्णोति	२०.६७;	ऋ. वे. ४.३९.६;
दम्पती	१४.५५;	ऋ. वे. २.३९.२;
देवस्य त्वेति	१४.३४; १६.५८;	तै. आ. ३.१०;
धूरसि	१६.५४;	वा. सं. १.८;
ध्रुवं ते	१४.३६;	ऋ. वे. १०.१७३.५;
ध्रुवा द्यौः	६.६६; १०.१८;	ऋ. वे. १०.७१३.४;
सो अस्य	६.६६;	ऋ. वे. १०.९९.३;
न ते विष्णो	२०.६७;	ऋ. वे. ७.९९.२;
परित्वा	१४.४३;	ऋ. वे. १.१०.१२;
परिवाज	७.१२; ९.३७;	ऋ. वे. ४.१५.३;
प्रतद्विष्णु	६.६६;	ऋ. वे. १.१५४.२;
प्रविष्णु	६.६६;	ऋ. वे. ७.१००.३;
ब्रह्मजज्ञानम्	२०.१००;	अथ. वे. ४.१.१;
भूतं सेति (भूतमसीति?)	१४.२९;	शां. श्री. सू. ८.२१.३;
मधुनक्तम्	२०.६५;	ऋ. वे. १.९०.७;
मधुमान्नो वनस्पति	२०.६५;	ऋ. वे. १.९०.७;

मन्त्रा:	भार्गवतन्त्र-अ. श्लो.	वैदिकाकर:
मधुवाता	२०.६५, ६८;	ऋ. वे. १.९०.६,७,८;
मयि मह	१४.१९;	ऐ. आ. ५.१.५.८;
मानस्तोक	७.२४;	ऋ. वे. १.११४.८;
मूर्धानम्	६.७२; १४.१२;	ऋ. वे. ६.७.१;
यन्मधुन	१४.२६;	हि. के. गृ. सू. १.१३.८;
यस्योरु	६.६६;	ऋ. वे. १.१५४.२;
या ओषधी	२०.६६;	ऋ. वे. १०.९७.१८;
या जाता	१४.९;	सा. वे. सं. २.१४३;
यामाहर	१४.१८;	हि. के. गृ. सू. १.११.४;
युवं वस्त्रेति	१४.२३;	ऋ. वे. १.१५२.१;
युवा सुवासा	१४.३०; १६.५१;	ऋ. वे. ३.८.४;
यो देवेभ्य:	२०.८१;	वा. सं. ३१.२०;
यो ब्रह्मे	८.३१; १४.१६;	ऋ. वे. ७.६.११;
रक्षोहण	७.३३;	ऋ. वे. १०.८७.१;
वास्तोस्पते प्रति	७.१०;	ऋ. वे. ७.५४.१;
विचक्रमे	६.६६;	ऋ. वे. ७.१००.४;
विराजो दोह	१४.२२;	शां. श्रौ. सू. ४.२१.३;
विश्वेत्तात	१४.१५;	ऋ. वे. ८.१००.६;
विष्णु:	१२.३९;	ऋ. वे. १०.१८४.१;
विष्णो: कर्म	२०.६७;	ऋ. वे. १.२२.१९;
विष्णोर्नुकम्	१६.५२; २०.६६; २३.१०;	ऋ. वे. १.१५४.१;
वेदाहम्	२०.६५; २०.८०;	तै. आ. ३.१२.१३;
व्यूक्षत्क्रूरम्	१४.४०;	आ. मं. पा. १.१.७;
शंते हिरण्यम्	१४.४१;	आ. मं. पा. २.८.९;
शन्नो देवींश्च	२०.६८;	ऋ. वे. १०.९.४;
शुभिके शिर	१४.१७;	आ. मं. पा. २.८.९;
संते पयांसि	६.६५, ६९;	ऋ. वे. १.९१.१८;
सविराज	८.१६;	तै. १.७.१०.१;
सामो धेनु	८.१५; १४.११;	शां. श्रौ. सू. ३.१६.४;
सुपर्णोऽसीति	११.२९;	तै. ४.१.१०.५;

भार्गवतन्त्रे वैदिकसूक्तानि सामानुवाकादयश्च

▼

भार्गवतन्त्रे प्रयुक्ताः पूर्णमन्त्राः

▼

श्लोकानुक्रमणिका

अ

शरभ तन्त्रम्

पक्षिराज तन्त्रम्

(आकाश भैरव कल्पोक्तम्)

काशी के कोतवाल काल भैरव हैं। इनके दर्शन के बिना विश्वनाथ शिव के दर्शन का फल नहीं मिलता। ब्रह्माजी का पाँचवाँ मुख जब शिवजी पर अपमानजनक शब्दों की वर्षा कर रहा था तब शिव से उत्पन्न होकर कालभैरव ने ब्रह्मा के पाँचवें मुख को काटकर उन्हें चतुर्मुख बना दिया। ब्रह्मा का शिर कालभैरव के हाथ से चिपक गया। ब्रह्म हत्या का दोष लग गया। तीनों लोकों में भटकने पर भी कपाल से मुक्त न होने पर काल भैरव काशी आये। यहाँ कपाल मोचन में हाथ से कपाल छूटा। काशी का यह कपाल मोचन तीर्थ हो गया। शिवजी ने इन्हें काशी का कोतवाल बना दिया। श्री विष्णु के नृसिंह अवतार के क्रोध को शान्त करने के लिये श्री शिव ने शरभ का अवतार लिया। उनके क्रोध को शान्त किया। इन दोनों कारणों के साथ अनेक कारणों से ब्रह्मा विष्णु से भी श्रेष्ठ शिवजी को महादेव माना गया।

इन्हीं महादेव शिव के अवतार शरभ की उपासना से सम्बन्धित 'शरभ तन्त्र' को आपकी सेवा में समर्पित करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। प्राचीन १९२ तन्त्र ग्रन्थों में से 'आकाश भैरव तन्त्र' से 'शरभ कल्प' को पंचांग उपासना सहित प्रस्तुत किया गया है। इससे मुझे काल भैरव और श्री विश्वनाथ की कृपा तो प्राप्त होगी ही साथ ही देव भाषा संस्कृत को संस्कृत न जानने वालों तक राष्ट्रभाषा हिन्दी में पहुँचाने का श्रेय भी मिलेगा। आशा है कि 'शरभ तन्त्र' से साधना करके जन सामान्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकेंगे।

₹ ३७५.००

Also can be had from : **Chowkhamba Sanskrit Series Office,** Varanasi.

ISBN : 978-81-218-0314-4 ₹ 225.00

Shreyashi GRAPHICS, mo. 9839814784